पृ०	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	अशुद्ध	शुद्ध
२०७	दवाव	द्वाव	२२२	सकतो	सकते
२०८	स्यात्म्यज	स्वात्म्यज	२२७	क्रा	का
	सम्यत्	सम्पत्	२२८	गभ	गर्भ
२११	इञ्ज	इञ्ज		द्योता	हाता
२१२	लगनी	लगती	२३०	वीय	वीर्य
२१८	त्रर्भवती	गर्भवती	२३३	कृष	कोष

शुद्धाशुद्धि पत्र

—o:*:o—

पृ०	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	अशुद्ध	शुद्ध
२	हड्डि	हड्‌डि	६४	लागने	लगने
३	वीर्याशत्र	वीर्याशय	६७	कठिक	कठिन
४	सुद्ध	शुद्ध	१०२	फुसी	फुसि
५	यानिमे	योनिमें	१०४	ठके.	ढके
६	प्रवश्य	अवश्य	१०८	गमाशय	गर्भाशय
१०	गर्भशय	गर्भाशय	११६	वारह	वाहर
१६	दशमें	दशामें	१२०	प्रेमह	प्रमेह
२७	आर	और	१२१	रतिशिल्प	रतिशास्त्र
३१	षेड्ढ	पेड्ढू	१२३	अवश्व	अवश्य
३५	दवाव	दवाव	१२५	धर्भ	धर्म
४२	पढने	पडने	१४२	हमरे	हमारे
४७	दसामें	दशामें	१६२	करता	करती
४८	पढजाने	पडजाने	१७४	दपित	दूषित
५४	ममाता	माता	१७५	दपित	दूषित
५६	रजा	रजो	१७६	दषित	दूषित
६४	दवाव	दवाव	१८६	भोज	भोजन
७१	दर्बल	दुर्वल	१८७	दध	दूध
७४	गर्भाका	गर्भका	१८८	अचर्य	आचार्य
	पिड	पिंड	१८९	दती	वर्ती
	अन्तमुखी	अन्तर्मुखी	२०२	सूश्रुत	सुश्रुत
८३	वाहर	वाहरी	२०६	प्रमृभ	प्रारंभ

मृग प्रविशहि नहिं आप मुखमें सोए सिंहके।

ऐसे उत्तरसे मुझे हर्ष विषाद दोनों प्राप्त हुए। हर्ष तो यों हुआ कि यह एक उत्तेजनापूर्ण उत्तम सम्मति थी और विषाद यों हुआ कि मैंने अपनेको एक परम आलसी समझा। मैं अपने हर्षको लेकर कार्य्य करनेपर तैयार हुआ। उन्हीं दिनोंमें पूज्यपाद श्री जगन्नाथ प्रसादजी भार्गव रईस बनारस कि जिनका मैं प्रीतिपात्र हूँ, आगमन हुआ। कुछ पुराने लेख कि जिनको मैंने पत्रिकाके सम्पादन-कालमें लिखा था और जिनको आपने देखा था, मैं उस समय उन्हीं लेखोंके एकत्र करनेका कार्य्य कर रहा था। अतएव दो चार दिन बाद श्रीमान् पर मेरा विचार प्रगट हुआ। आपने जिस प्रसन्नताके साथ हर्ष प्रगट कर मेरा साहस बढ़ाया, पाठकोंके लिये उसका अनुमान कराना मेरी सामर्थसे कहीं बाहर है। पाठक एक उत्सुक और लालायित हृदयके लिये इसको कम न समझें। मेरे हृदयमें एका एक यह भाव उत्पन्न हुआ कि ऐसे विषय पर बिना किसी आश्रयके कुछ विचार करना अनुचित है, अतएव यह निश्चय हुआ कि—

महाजनो येन गतस्सपंथाः

'वही मार्ग उत्तम है कि जिससे बड़े लोग गए हों।' अतएव मैंने कुछ ग्रंथोंको देखना प्रारम्भ किया। इन्हीं दिनोंमें आकस्मात् मेरे मित्र परिडत यदुनाथ मिश्र, कि जिनका

विचारसूत्र और कार्य्यक्रम।

जनवरी सन् १६२० ई० कि जबसे मैंने भार्गव पत्रिकाका सम्पादन-कार्य्य छोड़ा, उसी समयसे हिन्दी भाषामें सन्तान सम्बन्धी एक ग्रंथ लिखनेका विचार मेरे चित्तमें उत्पन्न हुआ। प्रायः सोचा करता था कि अपने मनोरथको किस प्रकार पूरा करूँ। कभी अपनी अयोग्यताकी ओर देखकर निराश होता, कभी सेवा-प्रणाली सुखद और हृदय-ग्राहिणी न होनेसे लज्जित होता था, परन्तु एक लालायित हृदय अपनी लालसाको पूरी किये विना कैसे रहे? ज्यों ज्यों दिन व्यतीत होते थे चित्त कार्य्य-क्षेत्रमें प्रवेश करना चाहता था। ज्यों ज्यों लालायित हृदय पर विचारोंकी वर्षा होती थी, अधैर्य्य होता जाता था। उत्साह नित्य वर्षा-कालीन नदीके समान बढ रहा था, विचारोंकी तरंगें उत्साह-रूपी नदीमें मौजें मारती थीं, चित्त मनोरथ-रूपी नव विकसित सुमनको ले किसी सुसम्मति रूपी नौकाके सहारे अथाह नदके पार होना चाहता था। कितने ही दिवस इसी भाँति व्यतीत हुए। एक दिन मैंने अपने विचारोंको सहधर्मिणीसे कहा। कुछ देर बाद मुझे यह उत्तर मिला कि—

निवासस्थान गोरखपूर जिलेके किसी ग्राममें था, आए। उनपर। मैंने अपने विचार प्रगट किये। उन्होंने अत्यन्त प्रसन्नताके साथ कई ग्रंथ देनेके वचन दिये। कुछ ही दिन बाद उक्त पण्डितजी अयोध्या जाते हुए लौटे और अपने साथ शरीर-कल्पद्रुम और रतिशास्त्र लाए। इन दोनों पुस्तकोंको देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ और पण्डितजीसे एक मासतक इन पुस्तकोंको मेरे पास रखनेकी प्रार्थना की। परन्तु मेरे मित्रने इस बातको स्वीकार न किया, इसलिये कि ये पुस्तकें छपी नहीं थीं और शायद मैं इनकी नकल कर लूँ और फिर छपवाऊँ। पण्डितजी मेरे इतने कहने पर चौकन्ने हो गये। अतएव अपनी उपस्थितिमें पुस्तकें मुझे देखनेके लिये देते और चलते समय ले जाया करते थे। इसी प्रकार चार दिन दो दो तीन तीन घण्टे मैं उन पुस्तकोंको देख सका और जो कुछ अपने विषयकी बात पाई नोट कर ली। कुछ ही दिन बाद पंडित-जीका देहान्त हो गया। न जाने पुस्तकें कहाँ हैं; क्योंकि पंडित जी घरके अकेले ही थे।

दूसरे ग्रंथोंका देखना भी जारी रहा। कुछ दूसरे कार्य्योंके रहनेसे समय अधिक व्यतीत हुआ। विशेषतः इस कारण कि मेरे जीवनमें इस प्रकारका यह पहला ही कार्य्य था। सच है, एक नए मनुष्यके लिये सरल कार्य्य भी प्रारम्भमें कठिन हो जाता है। लिखनेका कार्य्य प्रारंभ हुआ, परन्तु अनेक शंकाओंके उपस्थित होते हुए बीच बीचमें कई बार रुक जाना पड़ा और

शंकाओंपर विचार करनेमें समय अधिक व्यतीत हुआ। इसी प्रकार धीरे धीरे लिखते और शंकाओंपर विचार करते करते पाण्डुलिपी (मसविदा) तैयार हो गयी। फल यह हुआ कि एक लालायित हृदयसे संबन्ध रखता हुआ सन्तान सम्बन्धी विषय 'सन्तति-शास्त्रके' नामसे सर्व साधारणकी सेवा में उपस्थित है।

अयोध्याप्रसाद भार्गव

श्रीमान् बाबू अयोध्याप्रसाद भार्गव

भूमिका ।

किसी देश, समाज या मनुष्यकी उन्नतिका विचार करने-पर यह प्रश्न आपसे आप मनमें उठता है कि वे कौनसे कारण हैं कि जो अभीतक उन्नतिको रोके थे और भविष्यमें उन कारणोंके दूर होनेसे उन्नतिकी आशा है या नहीं। इसपर विचार करते हुए सहसा बुद्धि इस बातको मान लेती है कि देश, समाज और मनुष्यकी अवनतिका मुख्य कारण स्त्रियों-की हीन दशा ही है। एक विद्वानका कहना है कि जिस देश, समाज या घरकी दशा जाननेकी इच्छा हो तो सबसे पहले वहाँ के स्त्रियों की दशा देखनी चाहिये। क्या हमारे देश, हमारे समाज और हमारे घरों की स्त्रियाँ उन्नत दशामे है ? और क्या हम इनसे भविष्यमें उन्नति की आशा कर सकते हैं ? कभी नहीं। जो स्त्रियाँ गृहलक्ष्मी है, जो गृहस्वामिनी हैं, जो गृहस्था-श्रमकी आधार-रूपा और पुरुषोंकी सह-धर्मिणी हैं और जिन-की प्रशंसामें धर्मशास्त्र प्रयोजकोंने लिखा है कि

दाराधीनाः क्रियाः सर्वादारास्वर्गस्यसाधनम्

'सारी क्रियाएँ स्त्रियोंके ही आधीन हैं/ और स्त्रियों ही से स्वर्ग प्राप्त होता है।' ऐसे मन्तव्यों पर एक साधारण तर मनुष्य क्या विचार कर सकता है ? परन्तु अनेक धर्मशास्त्र प्रयोजकों-

की सम्मति यही है कि संसार-क्षेत्रमें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियों-का बहुत बड़ा भाग गार्हस्थ जीवनमें है; क्योंकि धर्मशास्त्रमें ऐसा कहा है कि

भार्य्यया कथ्यते गृही

'जिसके स्त्री है वही गृहस्थ है।' अतएव संसार में स्त्रियों का बहुत बड़ा मान है, परन्तु शोक की बात है कि इन स्त्रियों से हम किसी प्रकार भविष्यमे उन्नतिकी आशा नहीं पाते। किसी समयमें इसी भारतमे इन्हीं स्त्रियोंसे ऐसे ऐसे रत्न उत्पन्न हो गए हैं कि जिनके नामपर भारतवासी अपनी मर्य्यादाको लिये बैठे हैं।

ऐसी ही माताओंके सुपूतोंकी बदौलत एक दिन हमारा भारत विद्या-बुद्धि-संपन्न और गुणोंकी खान था। उस समय इस देशकी कीर्तिका पताका भूमंडलवासियोंको दूरसे दिख-लायी पडता था। कानोंसे सुनी बातोंको नेत्रोंसे देखनेके लिये अनेक देशोंके यात्री आते थे और यहांकी योग्यता व कलाकौशलको देख इसकी अतुलनीय कीर्तिका वर्णन अपनी मातृभाषाके ग्रन्थोंमें करते थे। वे ग्रन्थ आज इस भारतकी गुरुता, सभ्यता और योग्यताके साक्षी रूपमें उपस्थित हैं।

जिस समय संसार अज्ञानान्धकारमें मग्न था और पृथ्वी-के अधिकांश भागोंमें असभ्यता फैली हुई थी, उस समय यही भारत धर्म, आस्तिकता; भक्ति, सभ्यताऔर कला कौशल के

प्रकाशसे जगमगा रहा था। अधिकारके अनुसार ज्ञान, विज्ञान, गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद, साहित्य, वेद—वेदान्त, व्याकरण, न्याय, मीमांसा, योग, स्मृति, नीति और शासन इत्यादि अनेक विषयोंकी वायु घरमें प्रवाहित हो रही थी।

दमयंती, सुभद्रा, उत्तरा, लीलावती और चिन्ता इत्यादि देवियाँ जिस देशकी कन्याएँ, श्रुतकीर्ति, उर्मिला, जानकी और माण्डवी इत्यादि जिस देशकी बहुएँ; कौशिल्या, सुमित्रा और लक्ष्मी इत्यादि बहुओंकी पृष्ट-पोषिकाएँ; उभय भारती, मदालसा, विद्योत्तमा, लोपामुद्रा, सलभा, देवहूती, विदूला, ऊषा, शकुन्तला, मायावती और गार्गी इत्यादि देवियाँ जिस देशकी पंडिता; अनुसूया, मैत्रेयी, अदिति और अरुन्धती इत्यादि देवियाँ जिस देशकी मुनि-पत्नियाँ, रघु, अज, दिलीप, दशरथ और रामचन्द्र इत्यादि जहाँके राजराजेश्वर; लव-कुश ऐसे जिस देशके राजकुमार, कश्यप, मरीचि, भृगु, अंगिरा, च्यवन और पुलस्त्य इत्यादि जिस देशके महर्षि; वाल्मीकि, जयदेव, भूदेव, कालीदास और दंडी इत्यादि जहाँके कवि पांड़िन और पातंजलि जहाँके वैयाकरण, कपिल कणादि गौतम, व्यास जहाँके शास्त्रकार; धन्वन्तरि, चरक, सुश्रुत और वाग्भट्ट इत्यादि जहाँके वैद्य; वशिष्ट, पराशर, आर्य्यभट्ट और नीलकंठ इत्यादि जहाँके ज्योतिषी; मनु, अत्रि, याज्ञवलक्य और विष्णु इत्यादि जहाँके धर्मोपदेष्टा, शंकराचार्य्य रामानुजाचार्य्य और वल्लभाचार्य्य इत्यादि जहाँके धर्मप्रचारक; सायण-

चार्य्य और याज्ञदेव जहांके भाष्यकार, परशुराम, लक्ष्मण-जनमेजय, अंगद अर्जुन और भीम इत्यादि जहांके रणवीर थे उसी समय भारत में गार्हस्थ धर्मकी महिमाने सर्वसाधारण चित्तोंको प्रफुल्लित कर अपनेको सर्वमान्य बना लिया था। घर घरमें स्त्री शिक्षाके फोहारोंसे स्नान की हुई कन्याएं अपने भविष्य जीवनके हरियाले मैदान में गार्हस्थ जीवनकी मर्य्यादा-को रखती हुई उत्तम और सुयोग्य सन्तान उत्पन्न कर देश और समाजका गौरव बढ़ाती थीं। आज भी उन्हींकी सन्तान-के नामपर भारत बिक रहा है।

इतना उन्नतिशील होकर भी क्या हुआ ? अवनतिको भी इस बूढ़े भारतसे पीछा छुड़ाना कठिन पड़ रहा है। ठीक है, हम इस बातको प्रत्यक्षमें देखते हैं कि जिस कूएंका स्रोत बन्द हो जाता है, उसमें पानी नहीं रहता। ठीक यही दशा इस बूढ़े भारतकी हुई है। घर घरमें बहता हुआ स्त्री-शिक्षाका प्रबल स्रोत कि जिसपर हमारा सर्वस्व निर्भर था, आज बन्द दिख-लाई देता है। इसीके न होनेसे चारों ओर अंधकारसा प्रतीत होता है। आकाश-मार्गको अविद्यारूपी बादलोंने घेर लिया है। पाप-कर्मोंकी भयंकर वर्षाने भारतके एक एक कोनेको भर दिया है। विरोध-द्वेष, वैर-भाव और नास्तिकता इत्यादि की फसलें स्त्री, पुरुष, बालक और बालिकाओंके हृदयरूपी खेतोंमें तैयार हो रही हैं। बालक बालिकाओंके अंगोंसे विला-सप्रियताके चिन्ह विवाहके पूर्व ही दिखलाई पड़ते हैं। विचारों

से अनेक तुच्छ भाव प्रगट होते हैं। किसी कविने सच कहा है कि बालक और-बालिकाओं ही से देश, जाति, समाज और घर का भविष्य मालूम होता है। जिनमें रजवीर्य्यका महत्व और उसके शुद्धाशुद्धकी पहचान, रजोधर्म और संयोग शक्तिका अनुमान; रजस्वला रजस्नाता और सहवासमें स्त्री पुरुषोंकी अनेक असावधानियाँ तथा सारभूत कर्तव्योंका ज्ञान, गर्भ न रहनेके अनेक कारणों तथा गर्भाधान रीति, कन्या और पुत्र का मनचाही सन्तान उत्पन्न करनेकी क्रियाओंका ज्ञान, सन्तान पर माता पिताकी मनःशक्ति, प्रेम अहार, आचरण, चेष्टा, व्यवहार, हर्ष, शोक, चिन्ता, दूषित रज-वीर्य्य और इच्छाके प्रभावोंका परिज्ञान, गर्भावस्था और प्रसव-कालकी अनेक क्रियाओं और असावधानियों, गर्भवतीके सारभूत कर्तव्यों, गर्भस्राव और गर्भपातके कारणों, गर्भमें शरीर रचना तथा माता पिताके रजवीर्य्यसे अंग प्रत्यंगकी उत्पत्ति और उत्तम दीर्घजीवी संतान उत्पन्न करनेका ज्ञान, जिन स्त्री पुरुषों मे नहीं हैं उनसे भविष्यमें उन्नतिकी इच्छा करना दुराशा मात्र है।

जिस समय स्त्री और पुरुषोंकी मार्मिक शिक्षाका सूर्य्य भारतमें अपने पूर्ण प्रकाशसे जगमग रहा था, उस समय कन्याएँ अपने गार्हस्थ जीवनकी पंडिता और पुत्र इसके मर्मज्ञ होते थे। इनके हृदयमें गार्हस्थ जीवनके लिये रजोधर्म और संयोग-शक्तिका भाव पूर्ण रीतिसे भरा रहता था। वह आजकलकी भांति रजवती होते ही स्त्रियोंको गर्भ धारण करने योग्य

नहीं मानते थे और न छोटी अवस्थामें ललनाओंके विलास-प्रेमी थे। इनके हृदयोंमें रजवीर्य्य और स्त्रीके अवयवोंके पुष्ट होनेका सदैव विचार रहता था। वे विषयके लिये नित्य लालापित नहीं रहते थे। इनको अपने ब्रह्मचर्य्यका हर समय विचार रहता था। वे अपना अमूल्य जीवन पशुओंकी भांति व्यतीत नहीं करते थे। कन्या और पुत्र पैदा करना इनके हाथोंमें था। माताएँ आहार, आचरण, चेष्टा, व्यवहार, इच्छा, प्रेम और मनःशक्तिसे उत्तम सुयोग्य बलवान और मनचाही सन्तान उत्पन्न करती थीं। इस समय अधिकांश मनुष्योंका यह विचार हो रहा है कि मनचाही सन्तान पैदा करना माता पिताके हाथमें नहीं हैं। यह एक बहुत बडा अंध-विश्वास है। जब हम अपने पूर्वजोंकी बातोंको पढ़ते हैं तो, क्या हमें लज्जा नहीं आती? क्या अपनी अधोगतिके लिये नीचा नहीं देखना पडता? हम उन पूर्वजोंकी सन्तान होनेका अभिमान रखते हैं कि जिनमें मन-चाही सन्तान उत्पन्न करनेकी शक्ति थी। सहस्रों प्रमाण इस बातके उपस्थित हैं। युधिष्टिरकी माताने गर्भावस्थामें युधिष्ठिरको न्यायशाली बनानेके लिये धर्मशास्त्र पढ़ा था, इसी कारण युधिष्टिर न्यायशाली और धर्मात्मा हुए। अभिमन्यु माताके गर्भमें पिताके उपदेशसे चक्रव्यूहके पाँच फाटककी लडाईका हाल सुन कर मर्मज्ञ हो गए थे, परन्तु माताके सो जानेसे आगेका हाल न सुन सके। परशुराम जिस समय गर्भमें थे तो उनकी माता रेणुका-देवीने परशुरामको युद्ध वीर होनेके

लिये क्षत्रिय राजाओंकी लड़ाईका हाल मनन किया था । ये सब प्रमाण इस वातके साक्षी हैं कि मनचाही सन्तान उत्पन्न करना माता पिताके हाथोंमें है। माताका गर्भस्थान एक तरह-की विचित्र रसशाला है, उस रसशालासे अनेक विचार, अनेक स्वभाव, अनेक बुद्धि और अनेक आकृतिके बालक उत्पन्न होते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इस रसशालामें आहार, आचरण, व्यवहार और जैसी इच्छाका मेल किया जायगा उससे वैसी ही सन्तान उत्पन्न होगी । जिस प्रकार कुम्हार अनेक यत्न और अनेक विचारोंसे छोटे, बड़े, लम्बे, चौड़े, भारी और हलके पात्र एक ही मिट्टीसे बना लेता है, इसी प्रकार इच्छानुसार अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न करना माता पिताके हाथोंमें है।

राम कृष्ण, युधिष्ठिर और भोज ऐसे सत्यव्रत रावण, कंस, जरासन्ध और हिरण्य कश्यप ऐसे दुष्टोंने भारत माता-ओंके ही कुक्षिसे जन्म लिया था, पर इनमें इतना अन्तर क्या हुआ ? पुराणोंके देखनेसे पता चलता है कि इनके माता-पिताके रजवीर्य्यमें विचारों और पोषण-तत्वोंमे बहुत बड़ा अन्तर था। इसी कारण राम, कृष्ण, युधिष्ठिर और भोज सरीखी धर्मात्मा तथा, रावण, कंस, जरासन्ध और हिरण्य-कश्यप सरीखी अधर्मी सन्तान उत्पन्न हुई।

इन बातोंपर विचार करते हुए कलेजा मुँहको आता है। स्त्रियोंकी हीन दशापर ध्यान देते हुए शरीर कंपायमान होता

हैं। अविद्यासे ग्रस्त माताएँ उन विदुषी माताओंकी समता नहीं कर सकतीं, क्योंकि कहाँ देश और समाजकी उन्नतिका विचार, कहाँ विलास-प्रियताका संचार। आज इन स्त्रियोंकी अधोगति क्यों है? इसके उत्तरमें यही कहना मुनासिब है कि स्त्री-शिक्षाके न होनेसे इनके हृदयोंमें सन्तान-सुधार और उत्तम सन्तान उत्पन्न करनेके क्रियारूपी जितने रत्न थे वे सब खो गए हैं। इधर पुरुषोंकी भी ऐसी ही दशा हुई है। जब मूल ही नहीं तो शाखा कैसे हो सकती है? जहाँ स्त्रियाँ ऐसी हो गई हैं वहाँके पुरुषोंका कहना ही क्या है! इस स्त्री-शिक्षाके अभावका परिणाम यह हुआ है कि स्त्री पुरुष दोनों सन्तान सम्बन्धी विषयों से अनभिज्ञ हो गए, केवल स्वयं मनुष्य होने और मनुष्य जाति उत्पन्न करनेकी डींग बाकी रह गयी है। तो क्या उन्नतिके साथ अवनति लगी हुई है? दरिद्रको धन-वानको दरिद्र होना आवश्यक है। इसी प्रकार सूर्य्य भगवान को भी पूर्व दिशामें नीचेसे उठ कर दोपहरके समय ऊँचे चढ़ कर सायंकाल में नीचे उतर कर अस्त हो जाना पड़ता है। अपने हृदयको इसी प्रकार संतोष देते हुए यदि एक दरिद्र धनवान होनेकी आशा करे और यत्नमें लगे तो क्या कुछ अनुचित है? कभी नहीं। दैवके भरोसे भाग्य-भगवानके जगमोहन में पड़े रहना कितना अनुचित है? इसमें सन्देह नहीं कि विपत्तिके समय बुद्धि अवश्य विपरीति हो जाती है। महाराज रामचन्द्र भी इनसे नहीं बचे। जानकी-हरणके पहले श्रीराव-

चेन्द्रजीको सोनेका मृग सच्चा मान लेना पड़ा। इसका अर्थ यह नही कि दरिद्र मनुष्य अपने अभ्युदय-का यत्नही न करे। अवश्य करना चाहिये, क्योंकि संसार मे उसीका जन्म पाना सफल है कि जिसने अपने देश और समाजकी उन्नति की हो। यों तो सब ही जन्म लेते और मरते हैं। जिस जातिके लोगोंमें जातिबल, जातीय-जीवन और जातीय प्रेम नही है वह जाति संसारमे चिरकालतक नही जी सकती; क्योंकि जातिका जीवन मरण लोगोंके हाथमें है और जातिके लोगोंका अभ्युदय जातीय जीवनके साथमें होता है। अतएव दरिद्र मनुष्यको भी अपने जीते जी देश और समाजकी उन्नतिको न भूलना चाहिये।

अबसे पहले डेढ़ सौ वर्षका समय कि जबसे हमारी विद्या और शिक्षाका पुनरुत्थान हुआ है, उससे आठ सौ वर्ष पूर्वके समयको हम अच्छा नही कहेंगे। उस समय मे जो जो अत्याचार हमारी कन्याओं और स्त्रियोंपर हुए हैं कि जिनसे विवश होकर हमको स्त्रियोंकी शिक्षाका कट्टर विरोधी बनना पड़ा, परदा और बाल-विवाहकी प्रथा जारी करनी पड़ी, उसी समयमें स्त्री शिक्षा पर उठे हुए कुठारने ऐसा नाश किया कि जिसके कारण हमारे बच्चों, हमारी कन्याओं और बहुओंमें गार्हस्थ जीवनके महत्वको समझनेकी शक्ति ही नहीं रह गयी। अब सौ सौ हाथ मारने और पूर्ण बल लगानेपर भी हम इतने योग्य नही हैं कि जितने पतनके समयमें थे। हमारे ऋषि महर्षिके ही हवन कुँडकी विभूति ले कर चाहे संसार

सिद्ध बन जावे. चाहे कोई ईश्वर बननेका दावा करें, परंतु मैं यह कहता हूँ कि तुमको हमारे ही यहाँसे अविष्कार करनेकी शक्ति और योग्यता प्राप्त हुई है। यह कहा जाता है कि सन्तान संबंधी विषयोंको जाननेके लिये हमारे पास कुछ भी सामान नहीं है। इस विषयपर ध्यान न देने वाले लोग केवल इतना ही कहकर अपनी जिम्मेदारीसे अलग होना चाहते हैं; परंतु ऐसा नहीं हो सकता। क्योंकि जो स्त्री पुरुष सन्तान पैदा करनेवाले हैं, ईश्वरकी ओरसे उनपर यह जिम्मेदारी लागू होती है कि वे सन्तान उत्पन्न करनेकी क्रियाओंको आरम्भ करनेके पहले ही इस विषयका ज्ञान प्राप्त कर लें। यदि ऐसा न होगा तो निःसन्देह यह कहा जायगा कि उन्होंने अपनी जिम्मेदारी पर कुछ भी विचार नहीं किया। हमारे यहाँ क्या नहीं है? लाखों पुस्तकोंके जलाये जानेपर भी इतना सामान है कि जिसका कोई ग्राहक नहीं मिलता। चरक, सुश्रुत और वागभट्ट इत्यादि प्राचीन और नवीन वैद्योंने क्या कुछ कम कहा है? परंतु सब कुछ होनेपर भी हम उनपर विश्वास नहीं करते। इसका कारण यह है कि हमको अपने शास्त्रोंपर विश्वास करनेकी शिक्षा ही माताओंसे नहीं मिली। हमारे हृदयोंपर अपने शास्त्रोंपर विश्वास करनेका अंकुर ही नहीं जमाया गया, जिसके बदौलत आज सर्वस्व हानि हमारी ही है। अतएव दरिद्रोंकी भाँति हमको अपनी पैतृक संपत्ति और अपनी पूँजीसे समृद्धिशाली बननेका प्रयत्न करते रहना चाहिये। हम इस

बातको मानते है कि इस विषयका अधिकांश क्या, प्रायः सारा सामान संस्कृत विद्यामे है और हिन्दी साहित्यमे लानेके लिये बहुत बड़े यत्न किये गये है और होंगे ।

इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य गर्भाधानादि नियमोको जान कर उत्तम सन्तान पैदा करनेका है । वे ही माता-पिता भाग्य-मान हैं कि जिनकी गोदसे उत्तम और सुयोग्य सन्तान पृथ्वीपर जन्म लेकर संसारका हित करती है । अतएव प्रत्येक मनुष्यको उत्तम सन्तान उत्पन्न करनेकी इच्छा न छोड़नी चाहिये । वेद भगवानका वचन है कि

आत्मा वै जायते पुत्रः

'पुत्र पिताकी आत्मासे पैदा होता है ।' अतएव उत्तम सन्तान उत्पन्न करनेके नियमोंको जाननेके पहले आपको अपनी आत्मा-को बलवान बनाना चाहिये । जब आपकी आत्मा बलवान होगी और आप उत्तम सन्तान उत्पन्न करनेके नियमोंका पालन करेंगे, तभी उत्तम सन्तान हो सकती है । निदान यह है कि बिना बल-वान आत्मा के उत्तम सन्तान उत्पन्न करने के नियमोंको जाननेपर भी सुयोग्य सन्तान नहीं हो सकती । प्रिय पाठक, अब भूमिका समाप्त होती है । विद्वानो द्वारा सन्तानोत्पत्ति-विषयक मालूम किये हुए प्राकृतिक नियमोंको अपनी तुच्छ बुद्धिके अनुसार पाठकोंके सामने रखनेकी चेष्टा मैंने की है । इत्यलम् ।

अयोध्याप्रसाद भार्गव

विषय पृष्ठ

सन्तति-शास्त्र

अर्थात्

मनुष्य जातिकी उत्तम सन्तान उत्पन्न करनेके
नियमोंका संग्रह।

(१) रज और वीर्य्य क्या हैं और कैसे बनते हैं ?

वैद्यकका मत है कि जो कुछ भोजन किया जाता है वह पक्वाशयमें पहुँचता है, वहां पाचन-शक्तिसे पचकर उसका रस बनता है। इस रसके तीन भाग होते हैं। पहला उत्तम भाग हृदयमें जाता है, मध्यम मल (पाखाना) कहलाता है, और तीसरे जलके भागको मूत्र कहते हैं। हृदयमें गया हुआ रस हृदयकी अग्निसे पचता है और रुधिरके रूपमें बदलकर शरीरारंभक रुधिरमें मिल जाता है। रुधिरकी अग्निसे पाचन होकर मल सूक्ष्म और स्थूल दो भागोंमे बँट जाता है। रुधिरका मल पित्त है। यह पित्तसे मिलकर उसको पुष्ट करता है। दूसरा सूक्ष्म भाग रुधिरमें ही रहकर उसकी कमीको पूरा करता है। तीसरा स्थूल भाग शरीरारंभक माँसमें मिलता है, और माँस-की अग्निसे पचकर ऊपर बतलाई हुई रीति से बँट जाता है॥

स्थूल भागमें मलरूप भाग आसका मेद है सूक्ष्म भाग मांसमें मिलकर उसको पुष्ट करता है। स्थूल भाग मेदमें पहुँचता है और मेदाग्निसे पचकर उसीप्रकार बँट जाता है। इसके मलरूप भाग पसीना है। सूक्ष्म भाग मेदमें ही रहकर उसका पोषण करता है। स्थूल भाग हड्डियोंमें जाता है। और हड्डियोंकी अग्निसे पचकर पूर्ववत् बँट जाता है। इसके मलके भागसे नख और बाल बनते हैं। सूक्ष्म भाग हड्डियोंमें ही रहकर उनको पोषण करता है, स्थूल भाग मज्जामें जाता है और मज्जाग्निसे पचकर पूर्ववत् बँट जाता है। इसके मलका भाग आँखोंका मैल और शरीरको चिकनाई है। सूक्ष्म भाग मज्जामें ही रहकर उसको पुष्ट करता है, स्थूल भाग शरीरारम्भक वीर्यमें मिल जाता है, और वीर्याग्निसे पचकर मलरहित हो जाता है; इसलिये यह दो भागमें बँटता है। स्थूल भाग वीर्यमें ही रहता है और सूक्ष्म भागसे ओज बनता है। यह हृदयमें रह कर सारे शरीरमें व्यापक रहता है। इसीसे चिकनाई, तुष्टि-पुष्टि और बल उत्पन्न होता है। यही प्राणियोंका जीवन है। इसी से अनेक उत्पन्न होनेवाले भाव, उत्साह, बुद्धि, धैर्य, सुन्दरता, लावण्य ; और सुकुमारता, इत्यादिकी उत्पत्ति है। भोजन किये हुए पदार्थके रसके प्रायः एक मासमें वीर्य बनता है। बलवान और निर्बल पाचन-शक्तिवालोंमें इसीके अनुसार न्यू-नाधिक्य समय समझना चाहिये।

([illegible])

इसी प्रकार रजके विषयमें विद्वानोंकी राय है कि रसके [illegible]से बना हुआ रक्त वीर्यसे पुष्ट होकर रज बनता है।

[illegible]

वीर्यका कोई विशेष स्थान नहीं है। जिस प्रकार दूधमें

मक्खन, ईखमें रस और तिलमें तेल सर्वत्र रहता है, इसी प्रकार वीर्य्य सारे शरीरमें व्याप्त है। (च० चि० अ० २ श्लो० ७३)

प्रायः लोग अण्ड-कोषोंको ही वीर्य्यका स्थान मानते हैं, इस कारण कि रति समयमें वीर्य्य इन्द्रियोंसे खिचकर यहाँ इकट्ठा होता है, और उपस्थ इन्द्रिय द्वारा यहींसे बाहर निकल जाता है। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि जिस प्रकार ओज हृदयमें रहकर सारे शरीरमें व्याप्त रहता है, उसी प्रकार वीर्य्य नाभि-कमलके पास वीर्य्याशयमें रहकर सारे शरीरमें फैला रहता है। पुरुषोंकी भाँति स्त्रियोंके शरीरमें भी वीर्य्य और ओज बनता है। पुरुषोंमें जो काम वीर्य्य और ओजका है, वही स्त्रियोंमें भी है, परंतु स्त्रियोंका वीर्य्य सन्तानोत्पत्तिमें उपयोगी नहीं होता। जिस प्रकार सन्तानोत्पत्तिके लिये पुरुषोंमें वीर्य्य प्रधान है, उसी प्रकार स्त्रियोंमें रज प्रधान है।

इस भाँति रज और वीर्य्य उत्पन्न होकर प्रकृतिके अनुसार सन्तान उत्पन्न करते हैं।

(२) रज और वीर्य्यमें क्या है ?

डाक्टरोंने अनेक युक्तियोंसे सिद्ध कर दिया है कि वीर्य्यमें एक प्रकारके कीड़े पाये जाते हैं। डाक्टर काल्लिकर (Kalliker) कहते हैं कि शुद्ध वीर्य्यका कीड़ा $\frac{१}{६००}$ इञ्च लम्बा होता है। डाक्टर किर्कस (Kirkes) की राय है कि ऐसे कीड़ोंका सर चिपटा, लम्बा और गोल होता है। सरसे मिली पूँछ $\frac{१}{४०००}$ से $\frac{१}{५०००}$ इञ्च तक लम्बी, पतली और पहलूदार होती है। सरकी लम्बाई $\frac{१}{६०००}$ और चौड़ाई $\frac{१}{१००००}$ इञ्च होती है। ये कीड़े साँप और केचुओंकी भाँति रेंगकर नही चलते, किन्तु कूदते हैं। इनके सरकी जड़में एक बारीक तार कीड़ेके आकारसे

चौगुना एक झिल्लीमें ढँका हुआ होता है। चलनेकी शक्ति इसी तार और झिल्लीमें ही होती है। वीर्य्यमें थोड़ीसी पतली और बहनेवाली वस्तुके सिवा विशेष भाग कीड़ोंका ही होती।

इसी भाँति रजमें भी एक प्रकारके जन्तु पाए जाते हैं। जिनको आर्तव जन्तु, रज-जन्तु या रज-कोष (Sells) कहते हैं। डाक्टर काल्लिकरके मतानुसार एक रज-कोषका आकार $\frac{१}{२००}$ इञ्च होता है। इसकी बनावट एक अण्डेकी भाँति होती है। ऐसे रज-कोषका व्यास $\frac{१}{१२०}$ से $\frac{१}{२५०}$ इञ्चतक होता है।

रज और वीर्य्यके मिश्रणमें बालकका शरीर बननेके लिये सारे अवयव रहते हैं। कुछ अंगोंकी उत्पत्ति माताके रज और कुछेककी पिताके वीर्य्यमें होती है। इसलिये रज और वीर्य्यके मेलसे जो आकार बनता है वह सारे अवयवोंसे पूर्ण होता है।

(३) शुद्ध और दूषित रज-वीर्य्यकी पहचान।

रज और वीर्य्यका वर्णन पहले कर चुके हैं, साथ ही साथ यह भी जानना आवश्यक है कि शुद्ध और दूषित रज-वीर्य्यके लक्षण क्या हैं।

शुद्ध रज।

१—खरहा (खरगोश) के रुधिरके समान लाल या लाखके रंगके सदृश जिसमें सफेद वस्त्र रंग कर सुखानेसे किसी प्रकारका दाग न पड़े और धो डालनेसे सफेद हो जाय, वही शुद्ध रज है। (सु० म० अ० २ श्लो० २०)

२—लाखके रंगकासा लाल, जिसके निकलनेमें जलन और पीड़ा न हो कपड़ेमें दाग न पड़े और दुर्गंध न आती हो। (भा० इ०)

२—दूषित रज।

१. वातसे दूषित रज।

१. ऐसे दूषित रजका रंग लालीमें काला लिये होता है और कुछ रुक कर निकलता है। (सुश्रुत)

२. ऐसे रजका रंग कुसुमके पतले और मुलायम फूलके समान होता है। स्रावके समय कमर और योनिमें पीड़ा तथा ज्वर भी होता है। (शा० क०)

२. पित्तसे दूषित रज।

१. ऐसे रजका रंग लालीमें पीला लिये कुछ नीला होता है और निकलनेके समय दाह उत्पन्न करता है।(सुश्रुत)

२. ऐसे रजका रंग जामुनके फलसे मिलता हुआ होता है स्रावके समय कुछ पीड़ा और जलन होती है। (शा० क०)

३. कफसे दूषित रज।

१. ऐसे रजका रंग लालीमें सफेदी या पीलापन लिये होता है, और स्रावके समय दर्द पैदा करता है। (सुश्रुत)

२. ऐसा रज कुछ थोडा झागदार और स्रावके समय नाभीके नीचे दर्द पैदा करता है। (शा० क०)

४. रक्तसे दूषित रज।

१. ऐसे रजका रंग लाल होता है। मुरदेकी सी दुर्गंध आती है। अधिक स्राव होता है और दाह उत्पन्न करता है। (सुश्रुत)

५. कफ और वायुसे दूषित रज।

१ ऐसे रजका रंग लाली लिये होता है और कुटकी सी गाँठे पड़ी रहती है। स्रावमें कष्ट होता है। (सुश्रुत)

६ पित्त और कफसे दूषित रज।

१ ऐसे रजका रंग लाली लिये पीप सरीखा गाढा और वदबूदार होता है। (सुश्रुत)

७ पित्त और वायुसे दूषित रज।

१. ऐसा रज क्षीण होता है और कष्टसे निकलता है। (सुश्रुत)

८ त्रिदोष (वात पित्त-कफ) से दूषित रज।

१. ऐसे रजका रंग लालीमें स्याही और पीलापन लिये होता है। इसमें मल और मूत्रकी सी दुर्गंध आने लगती है। (सुश्रुत)

२. ऐसा रज गरम, झागदार कष्टसे निकलने और दाह उत्पन्न करनेवाला होता है। (सुश्रुत)

इन आठ प्रकारोंमेंसे नम्बर १-२-३ के रोगवाली स्त्रियाँ निरोग हो सकती हैं, वाकी लगभग असाध्य हैं।

(सु० न० अ० २ श्लो० ४)

१. शुद्ध वीर्य्य।

१ बिल्लोरी पत्थरके समान, सफेद, पतला, चिकना और मीठा, जिसमें शहदकी सी सुगंध आती हो। कोई वैद्य तेल और शहदके समान वीर्य्यको भी शुद्ध मानते हैं। (सु० स० अ० २ श्लो० १६)

२- पानी मे डालनेसे डूवने और कष्टसे न निकलनेवाला वीर्य्य शुद्ध होता है। (शा० क०)

२. दूषित वीर्य्य।

. वायुसे दूषित वीर्य्य।

१. ऐसे वीर्य्यका रंग कुछ लाल और कालापन लिये होता है और कुछ रुक रुककर निकलता है। (सुश्रुत)

२. ऐसा वीर्य्य झागदार, शुष्क पिच्छिल और कष्टसे निकलता है। (श० क०)

. पित्तसे दूषित वीर्य्य।

१. ऐसा विर्य्य पीली और नीली रंगतका होता है, निकलने मे दाह उत्पन्न करता है। (सुश्रुत)

२. एसा वीर्य्य नीले और पीले रंगका, गरम दुर्गन्धियुक्त और निकलनेमें दाह उत्पन्न करता है। (श० क०)

. कफसे दूषित वीर्य्य।

१. ऐसे वीर्य्यका रंग सफेदीमे ज़रा पीलापन लिये होता है और निकलनेमें दर्द पैदा करता है। (सुश्रुत)

२. ऐसा वीर्य्य गिलगिला हो जाता है। कफके कारण निकलनेका मार्ग रुक जाता है, और इसी कारण कष्ट होता है। (श० क०)

. खूनसे दूषित वीर्य्य।

१. ऐसे वीर्य्य का रंग लाल होता है, मुरदेकीसी दुर्गन्ध आती है; बहुत निकलता है औरजलन होती है। (सुश्रुत)

२. अतिमैथुन, वस्तिस्थान, लिंग और आस पासके स्थानों-में चोट लगने या वीर्य्य कम होनेसेजो वीर्य्य निकलता है, उसमें रक्त मिला होता है। (श० क०)

. कफ और वायुसे दूषित वीर्य्य।

१, ऐसे वीर्य्यमें गाठें पड़ जाती हैं और निकलनेमें कष्ट होता है। (सुश्रुत)

पर स्थित रहता है। यह झिल्ली जलोत्पादक झिल्लीके साथ मिली रहती है। इसके भीतर एक और झिल्ली होती है, वह अण्डाशयमें फैली रहती है। इसके भीतर अण्डोत्पादक कोष होते हैं। रजोधर्मके समयमें अण्डोंका आकार और वजन बढ़ जाता है। यहाँसे रज डिम्ब-नालियों द्वारा गर्भाशयमें पहुँचता है। औरवायुकी प्रेरणासे बाहर हो जाता है। रज बन्द हो जाने पर अण्डे पहलेकी भाँति धीरे धीरे सिकुड़ जाते हैं।

फलवाहिनी नली और अण्डोंका संबध बहुत बड़ा है। अण्डोंसे रज उत्पन्न होकर फलवाहिनी नली द्वारा गर्भाशयमें पहुँचता है।

(५) अण्डोंके रोग।

अण्डे ही रज-जन्तुओंकी उत्पत्तिके प्रधान स्थान हैं। जब इनसे नियमपूर्वक रज उत्पन्न नहीं होता, तब अनेक रोग पैदा हो जाते हैं। अण्डोंके रोग तीन प्रकारके होते हैं। (१) वह कि जो जन्मसे ही हों (२) वह कि जो बचपनमें हों और (३) वह कि जो जवानीमें हों। जो रोग जन्मसे ही होते हैं उनको असाध्य समझना चाहिये। बचपन और जवानीमें उत्पन्न हुए रोग अच्छे हो सकते हैं। जन्मसे होनेवाले रोग गर्भमें ही हो जाते हैं, इसका कारण गर्भाधानका दोष है। बचपन और जवानीमें उत्पन्न होनेवाले रोगोंका कारण नियमोंका न पालन करना और अनेक प्रकारकी असावधानियाँ हैं।

१. जन्मसे होनेवाले रोग।

१ अण्डोंका न होना।

२ यह रोग गर्भसे ही उत्पन्न होता है। कारण यह कि माता-पिताके मिले हुए रज-वीर्य्यसे बच्चेका शरीर बनता

है। ऐसे रज-वीर्य्यके मिश्रणमें जिस अंगके बननेका अंश नहीं होता, वह अंग गर्भमें नहीं बनता। अतएव जिन माता पिताके मिले हुए रज-वीर्य्यमें अण्डे बननेका अंश नहीं होता, उससे उत्पन्न हुई कन्याके गर्भाशयमें अण्डे नहीं होते। (रतिशास्त्र)

२. ऐसी स्त्रियोंके अनेक लक्षण होते हैं— (रतिशास्त्र)

१. गर्भाशय नहीं होता।

२. शरीर सदैव दुबला रहता है।

३. स्त्रीकी आकृति छोकरेके समान होती है।

४. मुख सदैव सूखा और चिपटा हुआ रहता है।

५. पैर पंजेसे एडी तक चिपटा और सूखा होता है।

६. कद छोटा होता है। कोई स्त्रियाँ कुछ लम्बी होती हैं

७. ऋतुधर्म्म नहीं होता।

८. पुरुषसे मिलनेकी इच्छा नहीं होती।

९. मुखसे सदैव दुर्गन्ध निकला करती है।

२. अण्डोंका पूर्ण रीतिसे न खिलना।

१. यह रोग गर्भहीसे उत्पन्न होता है। इसमें अण्डे जवानी पर पूरे तौरसे नहीं खिलते, कारण यह कि जब माता-पिताके मिले हुये रज-वीर्य्यमें अण्डे बनानेवाला अंश कम होता है, तो ऐसे रज-वीर्य्यके मिले हुये पदार्थसे उत्पन्न हुई कन्याओंके अण्डे निर्बल और छोटे रह जाते हैं। अतएव वे जवानीमें अच्छी तरह नहीं खिलते।

(रतिशास्त्र)

२. ऐसी स्त्रियोंके अनेक लक्षण होते हैं। (रतिशास्त्र)

१. गर्भाशयका छोटा और निर्बल होना।

२. शरीरका सदैव दुबला रहना।

३. ऋतु-धर्म्ममें कमी ।

४. रजोधर्म्मके समय नाभीके दोनों ओर और नीचे दर्द।

२, बचपनमें उत्पन्न होनेवाले रोग ।

१. समयके पहले रजस्वला होना । यह उसी समय होता है जब कि कन्याएँ जल्द सयानी हो जावें और सब बातोंको समझने लगें । यह रोग धनी और शौकीन घरोंकी कन्याओंको विशेष होता है, इसके अनेक कारण हैं ।

१. बुरी सङ्गतका होना ।

२. मिलने और साथ रहनेवाली स्त्रियोंकी हँसी, दिल्लगी और मजाक ।

३. हँसी मजाक और ऐयाशी तथा मनोरञ्जनभरी पुस्तकों का पढना ।

४. ऐसे नये ढंगका अनूठा शृंगार कि जिससे शीघ्र कामोद्दीपन हो ।

५. ऐसा बुरा व्यवहार कि जिससे पुस्तकोंमें पढ़ी और स्त्रियों या बराबरकी अवस्थावाली कन्याओंसे सुनी बात सच्ची मालूम हो ।

३, जवानीमें उत्पन्न होनेवाले रोग ।

१. चोट--

यह दो प्रकारकी होती हैं (१) पेटके ऊपरसे लगनेवाली । (२) मैथुनकी असावधानीसे लगनेवाली ।

दोनों प्रकारकी हलकी चोटोंमें थोड़ा दर्द होता है और आप ही अच्छा हो जाता है, परन्तु अधिक चोट लगनेसे अण्डेमें सूजन आ जाती है, और मवाद भी पैदा हो जाता है ।

अण्डोंकी सूजन।

यह दो प्रकारकी होती हैं 'नई' और 'पुरानी'।

१. 'नई सूजन'। यह कभी एक ओर कभी दोनों अण्डोंमें होती है। ऐसा भी होता है कि एकमें कम और दूसरेमें अधिक हो। इसके अनेक कारण हैं।

१. पेटके ऊपरकी गहरी चोटसे।
२. रति समयकी असावधानीसे।
३. गुर्देके अनेक रोगोंसे।
४. किसी प्रकार अण्डोंपर सर्दीके पहुँच जानेसे।
५. गर्भाशयके अनेक रोगोंसे।
६. रक्त-विकारके अनेक उपद्रवोंसे।
७. पेटके अस्तरकी झिल्लीमें सूजन होनेसे।
८. रति समयमें स्त्रीको संतोष न होनेसे।
९. अति मैथुनसे।
१०. मदिरा अधिक पीनेसे।
११. प्रदरके बढ़ने और उसके उपद्रवोंसे।
१२. जलन उत्पन्न होनेवाली औषधिको गर्भाशयमें लगानेसे।
१३. खराब खूनवाले पुरुषके साथ संयोगसे। जैसे—कोढ़, गरमी, और सूजाक इत्यादिका रोगी।
१४. अण्डोंसे संबंध रखनेवाली नलियोंकी सूजन और इनके दूसरे रोगोंसे।
१५. योनिसे संबंध रखनेवाले संक्रामक रोगोंके होनेसे जैसे—गरमी और सूजाक।
१६. ऋतु बन्द हो जाने या अधिक होने या चार छः मासमें एक दो चार होने या थोड़ा थोड़ा होनेसे।

१७ हिस्टीरियाके दौरेके समय जब ऋतुधर्म होनेवाला हो तो अण्डोंमें रक्तके इकट्ठा हो जानेसे ।

२ 'पुरानी सूजन'—नई सूजन जब अच्छी नहीं होती तो कुछ दिनों पीछे वह पुरानी हो जाती है। इन दोनों प्रकारकी सूजनोंमें अनेक लक्षण होते हैं।

१. पेड़ू और साँथलोंमें दर्द होना ।

२ पेड़ूके एक ओर या दोनों ओर दर्द होना । जब एक ओरका अण्ड सूजा होता है तो एक ओर, और दोनों ओरके सूजने पर दोनों ओर दर्द होता है ।

३ रजस्वला होनेमें रक्तका कम या अधिक आना या एकादम बन्द हो जाना ।

४. रुक रुक कर पीडा होना, जब कि सूजन हलकी हो।

५. सूजन बढने पर बराबर और अधिक पीडा होना ।

६. रजोदर्शनके समय दर्दका बढ जाना ।

७. जिस ओरका अण्ड सूजा हो उस ओरकी जाँगमें दर्द होना ।

८. ज्वर, कब्ज़ियत, छाती और पेटमें जलन होना ।

९. मूत्रका थोड़ा थोड़ा आना और जलन होना ।

१०. मैथुनमें पीडा होना ।

११. रोग बढनेपर पेड़ू से अण्डोंतक तथा अण्डोंसे संबंध रखनेवाली नसों और नलियोंमें दर्द ।

१२. दूसरे रोगोंके मिलने और उपद्रवोंके बढ़ जानेसे उन्माद होना ।

१३. कुपच, उपकाई और धुमनीका होना ।

१४, बढे हुए रोगमें सन्निपातकीसी दशाका होना ।

१५, बढे हुए रोगमें मूर्छा और दस्तका होना ।

१६. अन्तिम दशामें पेटके अस्तरकी झिल्ली सूजन आ जाती है।

१७ ज्यों ज्यों रोग बढ़ता जाता है कष्ट भी उसीके साथ बढ़ता जाता है।

३. अण्डोका पक जाना---

१. यह रोग अण्डोंकी सूजनके पीछे होता है। ऐसी दशामें मवाद दो तरहसे निकलती है (१) चीर कर (२) आपही आप फूट कर।

जो मवाद आप ही फूटकर निकलती है वह दो ओरको जाती है (१) भगकी ओर (२) पेटके अस्तरकी झिल्लीसे फूटकर भीतरकी ओर। चीरकर निकाल लेना अथवा भगकी ओरसे निकल जाना अच्छा है, परन्तु झिल्लीका टूट जाना मौतकी निशानी है। इसके अनेक कारण हैं।

१. अण्डोंकी सूजनके समय ज्वरका आना अथवा कुछ दिनोंतक उसका बराबर रहना।

२. सूजनके समय अण्डोंमें चोट लगना।

३, रक्त-विकारसे।

इसके निम्नलिखित लक्षण हैं।

१, ऊपर कहे हुए अण्डोकी सूजनके सारे लक्षण।

२, खड़े होनेमें पीड़ा।

३. पीड़ासे कमर झुक जाना और चलते समय पैरोंका थर्राना।

४. अण्डोका भ्रंश।

१. यह कठिन रोग है। इसमें दोनों ओर या एक ओरका अण्डा अपने स्थानसे खसक कर पीछे या योनि-द्रोणमें आ जाता है। इसके अनेक कारण हैं।

१. अण्डोंमें रक्तका जमाव होनेसे या और किसी कारण वजन बढ़ जानेसे ।
२ गर्भाशयके हटनेसे ।
३ फलवाहिनी नलीके विकार या उसके टेढे होनेसे ।
४. कड़ी चोट या दबाव पहुँचनेसे ।

इसके अनेक लक्षण हैं ।

१. पाखना जाते समय पेड़ू और अण्डेके स्थानोंमें दर्द होना ।
२ मैथुनमें अत्यन्त कष्ट होना ।
३. पेड़ू और अण्डोंकी जगह दबानेसे पीडा होना ।
४. घुमनी पेटका भारीपन और कुपच होना ।
५. जिस ओर अण्ड झुका हो उधर के पेड़ूमें दर्द होना ।

अण्डोंकी गाँठे ।

१ ये दो प्रकारकी होती हैं ।
  (१) थैलीदार ।
  (२) खूब भरी हुई ठोस ।
२ थैलीदार गाँठें तीन प्रकार की होती हैं ।
  (१) मामूली ।
  (२) जिसमें कुछ गाढा पदार्थ रहता है ।
  (३) जिसमें चरबीका भाग होता है ।

ठोस और तीसरी तरहकी गाँठे बहुत कम पाई जाती हैं । ये अण्डोंपर होती हैं । प्रायः अण्डों और गर्भाशयके बीचमें भी पाई जाती हैं । प्रारम्भमें कुछ जान नहीं पडता, पर गाँठें ज्यों ज्यों बढती जाती हैं, त्यों त्यों कष्ट भी बढता जाता है । रोग उत्पन्न होते ही सारे लक्षण प्रकट नहीं होते । विधवा और कुमारी

स्त्रियों में यह रोग अधिक होता है। पहले पहल प्रायः तीन लक्षण होते हैं।

१. मैथुनमें कष्ट।

२. पाचनशक्तिका कम हो जाना।

३. रजो-धर्मका न होना या थोड़े कष्टके साथ होना।

रोगके साथ पेटकी सूजन बढ़ती जाती है। मुख, हाथ-पाँव और पेटसे गर्भके लक्षण प्रगट होते हैं। ऐसी दशामें जब रजोधर्म बन्द होजाता है, तो गर्भका सन्देह होता है। जिनके रजोधर्म बन्द नहीं होता उनके मोटे होनेका सन्देह रहता है। कुछ दिन बीतनेपर अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. हथेली, तलुवे और भगमें जलन उत्पन्न होना।

२. आँतोंका भारी पड़ जाना।

३. पेशाबका रुक २ कर आना।

४. सिवा पेटके और सब अङ्गोंसे क्षय (तपेदिक) के लक्षण प्रतीत होना।

५. बढ़े हुए रोगमे सारे शरीर में कठिन पीड़ा होना।

६. फेफड़ेका बिगड़ जाना और साँसका जल्दी चलना।

७. सारे शरीरका पीला पड़ जाना।

८. खड़े करके देखनेमे गाँठोंका दिखलाई देना।

६. अत्यन्त बढ़े रोगमें सारे शरीरपर सूजन का होना।

यह रोग बहुत धीरे धीरे होता है। इसके तीन तीन चार चार वर्षके रोगी पाए जाते हैं। इतने दिनोंमें गाठों से सारा पेट भर जाता है। सबसे अच्छा इलाज चीरकर गाठें निकाल लेना है।

और जब बहुतसी गाँठें होतीहैं तो काले रंगका चिकना तथा बहनेवाला पदार्थ भरा रहता है।

प्रायः २० से ४० वर्ष तककी अवस्थावाली स्त्रियोंको जो मैथुनकी विशेष इच्छा रखती हैं, चाहे वे कुमारी हों या विवाहिता, यह रोग होता है। इसके अनेक कारण हैं।

१. रजके विकारसे।

२. कुपचके बढ़ जानेसे।

३. फलवाहिनी नलीकी रुकावटके कारण रजके ठीक ठीक न निकलनेसे।

४. गर्भाशयके विकारोंमे रजके ठीक तौर पर न निकलेसे।

ऐसी दशामें प्रायः लोग गर्भका सन्देह करते हैं, परन्तु यह एक भ्रम है। इसके अनेक लक्षण होते हैं।

१. धीरे धीरे पेटका बढ़ना।

२. कमर, जाँघ और रीढ़में कठिन पीड़ा।

३. अत्यन्त दुर्बलता और निर्बलता।

४. कभी कभी कम, अधिक मूत्रका आना।

५. पेटका जलंधरके समान बढ़ जाना।

६. साँसका जल्दी चलना।

७. कभी रजका कम आना, कभी अधिक और कभी बिलकुल न आना।

८. बढ़े हुए रोगमें पैरोंपर शोथ।

९ जब एक ही रसौली अण्डेके पास हो तो पेट गोल हो जाता है।

१० जब कई रसौली हों तो पेट ऊँचा-नीचा हो जाता है

११. योनिमें हाथ डालकर देखने से ऐसी रसौली नाभिसे लगी हुई जान पड़ती है।

इस रोगमें बहुत बड़ा भ्रम हो जाता है। बढ़ने पर लोग उसे जलंधर समझकर औषधि करते हैं। इसलिये खूब जाँच कर लेनी चाहिये।

इस प्रकार अण्डोंमें अनेक रोग होते हैं। जब ऋतु-धर्ममें किसी प्रकारकी खराबी मालूम हो, तो तुरन्त अण्डोंकी जाँच करानी चाहिये क्योंकि जब अण्डोमें कुछ फसाद होता है, तभी ऋतु-धर्म भी बिगड़ता है।

(६) फलवाहिनी नली क्या है ?

यह बतलाया जा चुका है कि जिस प्रकार पुरुषोंके दो अण्डकोष होते हैं उसी भाँति स्त्रियोंके भी होते हैं। भेद इतना ही होता है कि पुरुषोंके दोनों ओर बाहर लटके रहते हैं और स्त्रियोंके भीतर दहिने बाएँ छिपे रहते हैं। इन्हीं अण्डों और गर्भाशयसे फलवाहिनी नलीका सबंध होताहै। यह दोनों ओर दहिने बाँए अण्डोंसे लगी रहती हैं और गर्भाशयके बंधनोंके ऊपरी सिरेमें होती हुई समाप्त होती है। लम्बाई ४ इञ्च तक और अण्डाशयकी ओरका सिरा पंजेकी भाँति होता है। रज और अण्डकोश इसी नलीमें होकर गर्भाशयमें पहुँचते हैं। इसका खास काम यही है कि अण्डाशयसे रज और रजकोष-को गर्भाशय में पहुँचावे। अतएव गर्भस्थिति होनेके लिये यह एक सहायक अवयव है। इससे गर्भाशयको बहुत बड़ी सहायता पहुँचती है।

(७) फलवाहिनी नली के रोग।

सन्तान उत्पन्न करनेके विषयमें गर्भ, अण्ड, फलवाहिनी

नली और गर्भाशय ये चार अवयव प्रधान हैं। इनमें फलवाहिनी नलीका काम यह है कि वह गर्भ-अण्डसे गर्भाशयमें ठीक रीतिसे रजको पहुँचावे। इन तीनोंका आपसमें बहुत बड़ा संबन्ध है। जब गर्भाशय और गर्भ-अण्डमें विकार उत्पन्न होता है तो फलवाहिनी नलीमें अवश्य होता है। जब इसमें विकार उत्पन्न होता है तब गर्भ-अण्ड और गर्भाशयमें हो जाता है। इस प्रकार एक दूसरेके संबन्धसे इसमें अनेक रोग उत्पन्न होजाते हैं।

१. फल वाहिनीनलीका शोथ। इसके अनेक कारण हैं—

१. गर्भ-अण्ड और गर्भाशय के शोथ से।
२. रजविकार या चोट से।
३. गुरदे के अनेक रोगों और सरदी पहुंचने से।
४. प्रदरके अनेक उपद्रव और अतिमैथुन से।

इस रोग में अनेक लक्षण प्रकट होते हैं—

१. रजका ठीक समय पर न आना।
२. पेड़ू में पीड़ा और नली में भारीपन।
३. पेड़ूको ऊपर से दबाने में दर्द।
४. कब्ज़ियत और भोजन में अरुचि।

इस रोगमें बड़ी सावधानी रखनी चाहिये क्योंकि सूजन के कारण नलीका सूराख बहुत छोटा रह जाता है।

२ फलवाहिनी नलीका टेढ़ा या संकुचित हो जाना।

इसके कई कारण हैं—

१. रक्त-विकार और पेटके परदों में शोथ उत्पन्न होनेसे।
२. गर्भाशय में किसी तरह की चोट पहुँचने से।
३. फल-वाहिनी नलीमें किसी प्रकार रक्त जम जाने से।
४. नली में एक प्रकार के मस्से उत्पन्न हो जाने से।

५. गर्भ-अण्ड और गर्भाशयके अनेक विकार और रोगोंसे
६. गर्भाशय या गर्भ-अण्डके टल जाने से ।

इस रोग में अनेक लक्षण प्रकट होते हैं—

१. प्रथम नली में शोथ होता है ।
२. गर्भाशय के आसपास में दर्द होता है ।

इस रोग के बढने पर स्त्री वन्ध्या हो जाती है , ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है, कष्ट बढता जाता है ।

३ फलवाहिनी नलीमें रक्त जम जाना । इसके कई कारण हैं—

१. जब कि गर्भाशय से रक्त का स्राव न हो या रज-विकार हो ।
२ जब कि फलवाहिनी नलीके मुख में कुछ रुकावट हो।
३ गर्भाशय के अनेक रोगों से ।

इस रोगमें अनेक लक्षण प्रकट होते हैं ।

१. नलीमें भारीपन मालूम होना ।
२ नली में पीडा और दहिने बाँए झुकने में दर्द ।
३ गर्भ-अण्ड में पीडा होना और थोडा रज निकलना।

जब फलवाहिनी नली में रक्त जम जाता है और वह थोडा होता है तो रज थोडा थोडा आता है, जब अच्छी तरह जम जाता है तो रज प्रायः बन्द हो जाता है और अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं ।

(८) गर्भाशय [Uterus]

गर्भाशय स्त्री के शरीरका वह अवयव है कि जहां बच्चा रहता है । इस के आगे मूत्राशय (पेशाब इकट्ठा होने की जगह) पीछे मलाशय (मल इकट्ठा होने की जगह) और ऊपर नाभी होती है । यह एक झिल्ली का बना हुआ खोखला अवयव है ।

इसमे रबड़ की भाँति फैलने और सुकड़ने की शक्ति होती है आकार ठीक एक नासपाती (Pyriform) के समान होताहै।

वैद्यक का मत है कि स्त्रियों की योनि शंख की नाभी के आकार की तीन फेरवाली होती है। उसके तीसरे फेर में गर्भाशय रोहू मछली के मुख के सदृश और उसीके समान होता है। (सु० शा० अ० ५ श्लो ४९ व ५०)

यह तीन भागोमें बँटा रहता है। ऊपरके भागको (Foundus) कहते हैं। दूसरा नीचे का पतला भाग, इसको गर्दन या ग्रीवा (Cervix) कहते हैं। यह सुराही की भाँति लम्बा और गोल योनितक होता है। मुख ऊपरी भागमें आगेकी दीवारके ओर होता है। लम्बाई स्त्रीके शरीरकी लम्बाईके अनुसार होती है। इसका भीतरी मुख गर्भाशयमें रहता है। तीसरा बीचका भाग कि जिसको गर्भाशय (Body) कहते हैं, पोला होता है। इसके दोनों ओर दहिने बायें अण्ड और अण्डवाहक नालियोंके छेद होते हैं इसी रास्ते से रज गर्भाशयमें पहुँचता है। गर्भाशय इतना छोटा होने पर भी गर्भके पूरे दिनों तक पच्चीस गुना बढ़ जाता है। यह हर समय गर्भ धारण नहीं करता। वैद्यक का मत है कि जिस प्रकार सन्ध्या होने पर कमल बन्द हो जाता है उसी तरह रजोदर्शनसे सोलह रात्रि बीत जाने पर गर्भाशय का मुख बन्द हो जाता है (सु० शा० अ० ३ श्लो० ८) इसके बाद गर्भाशय गर्भ धारण नहीं करता, परन्तु अदृष्टार्तव ऋतुमती होने पर गर्भ धारण होता है। इस विषयपर आगे लिखा जायगा।

(६) गर्भाशय के रोग।

यह कह चुके हैं कि गर्भाशय वह जगह है कि जहाँ बच्चा

रहता है। इसमें नाना भाँति के रोग उत्पन्न हो जाते हैं और उनके अनेक भेद हैं।

१—गर्भाशय के बाहरी मुखका छोटा होजाना।

इसके दो भेद हैं—

१ जन्म से छोटा होना।

२ समय पाकर छोटा होना।

१ पहला भेद—जन्म से छोटा होना।

यह रोग गर्भ से ही होताहै। इसका कारण यह है कि—

१. जब माता पिता के मिले हुये रज-वीर्य्य में जिस अवयव के बनाने का अंश कम होता है, वह अवयव गर्भ में अधूरा बन जाता है ऐसेही इसको भी समझना चाहिये।

ऐसी दशा में अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१. ऋतु, धर्मकी रुकावट।

२. गर्भाशय में रज इकट्ठा हो जाने से सूजन।

३. गर्भाशय से संबंध रखने वाली इन्द्रियों की सूजन।

४ रजकी गर्मी से भीतरी अवयव के किसी भाग का पक जाना।

५ रजका अत्यन्त कष्टसे निकलना।

६ पेड़ू, पीठ और साँथलों में पीडा।

७ दर्द के कारण स्त्री का ठीक तौरसे खडा न हो सकना।

८ छातियों में दर्द, पेट में अफरा और अरुचि।

९ सरदर्द, पेटमें जलन और कब्ज़।

यह कठिन रोग है इसके बढ़ जाने पर रोगी की दशा बिगड़ जाती है।

२. दूसरा भेद—समय पाकर मुखका छोटा हो जाना।

गर्भाशय के मुख पर तेजाब सरीखा कोई जलानेवाला पदार्थ लगाया जाना।

२. गर्भाशय में सूजन या दूसरे रोगों का होना।

३. योनि के अनेक रोगों से।

४. गर्भाशय के मुखपर किसी प्रकार की चोट–औजार या किसी दूसरी तरह से।

५. किसी प्रकार का घाव गर्भाशय के मुख पर होजाने से। ऐसी दशा में भी उपरोक्त लक्षण होते हैं। रोग बढ़ने पर दशा बहुत बिगड़ जातीहै इसमें शीघ्रउपचार करनाचाहिये।

२. गर्भाशयकी सूजन।

(क) "हकीमोंका मत"–गर्भाशय में चार प्रकार की सूजन होती है (१) गर्भाशय की गरम सूजन (२) ठंढी सूजन (३) वादी की कड़ी सूजन (४) बड़ी और फैली हुई सूजन।

१. गर्भाशय की गरम सूजन–इसके कई कारणहैं।

१. गर्भाशय पर चोट लगने से।

२. किसी प्रकार गर्भाशय पर दबाव पहुंचनेसे।

३. गरम औषधियों को गर्भाशय में लगाने से, जिनसे कि जलन पैदा हो।

४. गरमी, सूजाकवाले पुरुषों के संयोग से।

५. रजोधर्म्म की रुकावट से।

६. अतिमैथुन से।

७. गर्भ गिर जाने से

८. छोटी अवस्था में पहले ही पहल जवान पुरुष के साथ संयोग करने से कि जिसकी इन्द्रिय लम्बी हो। (इस कारण गर्भाशयपर एक दम दबाव पड़ता है)

९. बच्चा पैदा होते समयकी कठिनता से ।

१०. रक्त विकार और अनेक असावधानिया से ।

ऐसी सूजन पाँच जगह पर होती है, जिसके अलग अलग अनेक लक्षण होते हैं ।

१ गर्भाशय के अगले भाग म नीचे की ओर सूजन के लक्षण ।

१ तेज ज्वर का होना ।

२ कै और दस्तों का प्रकोप ।

३ सर में दर्द होना ।

४ तालू और पेड़ू में पीडा ।

२ गर्भाशय के अगले भाग म नीचे की ओर की सूजन के लक्षण ।

१ मूत्र का कठिनता से आना ।

२ मूत्र का रुक रुक कर दर्द के साथ उतरना ।

३ गर्भाशय के अन्त में ऊपर की ओर सूजन के लक्षण ।

१ दोनों नितवों के बीच और पीठ मे दर्द ।

२ दोनों पैरों में भडकन और तालू में जलन ।

४ गर्भाशय के अन्त मे नीचे की ओर सूजन के लक्षण ।

१ दस्त में रुकावट का होना ।

२. अधोवायु की रुकावट ।

५ गर्भाशय के दोनों बगल मे सूजन के लक्षण ।

१. दोनों कोखों मे दर्दका होना ।

२. दोनो नितवों में पीडा ।

ऊपर लिखे हुए लक्षण अलग अलग तो होते ही हैं, परंतु नीचे लिखे हुए लक्षण हर अवस्था म होते हैं—

१. गलेका सूख जाना ।

२. रजोधर्म मे रुकावट होना ।

३ निर्बलता और हाथ पैरों में जलन ।

४. सरदर्द, चमड़े पर रूखापन, जिगर की खराबी और कब्जियत।

इस प्रकार गर्भाशय की गर्म सूजन के कारण और लक्षण होते हैं।

२. गर्भाशय की ठंढी सूजन। इस के कई कारण हैं—

१. गर्भाशय में ठंढक का पहुंचना।
२. ठंढी चीजों का अत्यन्त सेवन।
३. नाभी के नीचे भारीपन।
४. रजोधर्म्म में रुकावट।
५. जिगर का खराब होना।
६. हिचकी, कब्जियत और पेटका अफ़रा।

इस प्रकार गर्भाशय की ठंढी सूजन के कारण और लक्षण होते हैं।

३ गर्भाशय में वादी की कड़ी सूजन– इसके कई कारण है—

१. गर्भाशय की गर्म सूजन से कड़ी सूजन होजाना।
२. रजविकार से एका एक सूजन हो जाना।

ऐसी सूजन में अनेक लक्षण होते हैं।

१. पेड़ू के सामने बोझ सा जान पडना।
२. चलने फिरने में पीड़ा।
३. निर्बलता और साँस का जल्दी जल्दी चलना।
४. घबराहट और हाथ पैरो में दर्द।
५. चलते समय में जिस ओर सूजन हो उस ओर के पैर का काँपना। यदि दोनों ओर सूजन हो तो दोनों पैरों का काँपना।
६. मवाद पड जाने पर ज्वर का होना।
७. यदि सूजन दहिने ओर है तो गर्भाशय बाएँ ओरको

और यदि बाँये ओर है तो दहिने ओर को, यदि आगे है तो पीछे को यदि पीछे है तो आगे को झुक जाता है।

इस प्रकार गर्भाशय में वादी की कड़ी सूजन के कारण और लक्षण होते हैं।

४ गर्भाशय में बडी और फैली हुई सूजन—इसके कई कारण हैं।

१. गरम सूजन से मवाद न निकलने पर ऐसी सूजन पैदा होजाती है।

ऐसी सूजन के अनेक लक्षण दिखाई देते हैं।

१ पैरों का सूख जाना।

२ गरमी बहुत मालूम होना।

३ आँखों और कनपटी में दर्द।

४ पेट का निकल आना।

५ पैरों पर सूजन का होना।

६ पेट से लेकर छातियों तक दर्द होना।

७ गर्भाशय में जखम हो जाना। इसके कई लक्षण हैं।

१. पेट पीठ और कमर में अत्यन्त पीडा।

२ कई रंगों का बदबूदार स्राव होना।

८ कब्ज़ियत, बेचैनी, प्यास दर्द, आँखों की जलन, पेट का अफरा, बुरी डकारों का आना, मन्दाग्नि. पेशाब में जलन और हिचकी आना।

इस प्रकार गर्भाशय में बड़ी और फैली हुई सूजन के कारण और लक्षण होते हैं।

(ख) "डाक्टरों का मत"

इस विषय में डाक्टरों ने चार प्रकार की सूजनें मानी हैं। (१) धड़की सूजन (२) गर्दन की सूजन (३) दीवारों की सूजन और (४) भीतरी सूजन। इनके अनेक कारण हैं।

१. बच्चा पैदा होते समयकी असावधानियोसे गर्भाशय में चोट, रगड़ और दवाव पहुंचना।

२. गर्भाशय के ऊपर वाहर से किसी प्रकार की चोट पहुँचना।

३. कम अवस्थावाली स्त्री का पूरे जवान पुरुषके साथ संयोग होने पर इन्द्रिय द्वारा भीतरी चोट पहुंचना।

४. अति मैथुनसे।

५.संयोगकी कठोरतासे।

६. रजवन्द हो जानेसे।

७. बच्चा पैदा होनेमे देर लगनेसे, जब कि गर्भाशय मे घाव हो जाय।

८. गर्भाशय मे सरदी पहुंचनेसे।

६. प्रदरके वढ़ जानेसे।

सूजन दो प्रकारकी होती है—हलकी और भारी। हलकी सूजनमे मामूली लक्षण होते हैं। यह प्रायः अच्छी भी हो जाती है, परन्तु भारी सूजन स्वयं अच्छी नही होती और उस मे अनेक लक्षण होते हैं।

१. जाड़े से ज्वर का आना।

२. पेड़ू मे वोझ जलन और दर्द।

३. जाँघ, कमर और रीढ़मे पीड़ा।

४. सारे शरीरमे रह रह कर दर्द होना।

५. चलने फिरने उठने वैठने में कठिन पीड़ा।

६. जी मचलना, घुमनी, कै और दस्त/का होना।

७. गर्भाशय का कड़ा और बड़ा हो जाना।

८. सरदर्द, मूत्रका रुकना और पाखाना कठिनतासे होना।

९. जब कमर में दर्द हो तो गर्भाशय के पिछले भागमें सूजन समझनी चाहिये।

१०. जब पेडू में दर्द हो और चबकी चले तो गर्भाशय के मुख पर सूजन समझना चाहिये।

११. जब कोखमें दर्द हो तो गर्भाशयकी दीवारोंमें सूजन जाननी चाहिये। जब दाहिने कोख में दर्द हो तो दाहिने और बाएं में दर्द हो तो बाईं ओर। जब दाहिने बाएं दोनों ओर दर्द हो तो दोनों ओर सूजन जाननी चाहिये।

ये लक्षण और कारण गर्भाशयके धड़की सूजन, गरदन की सूजन और दीवारों की सूजन के कहे गये हैं। गर्भाशय की भीतरी सूजन का विवरण नीचे लिखा जाता है।

गर्भाशयकी भीतरी सूजन दो प्रकारकी होती है—एक हलकी दूसरी भारी। पहले हलकी सूजन होती है। जब इसका इलाज ठीक तौरसे नहीं होता है तो वह भारी हो जाती है इसके अनेक कारण हैं।

१. विषम ज्वर के होनेसे।
२. गर्भाशय के ठेस पहुँचनेसे।
३. किसी तरह छिल जानेसे।
४. फेफड़े, गुर्दे और पाण्डुरोग के प्रकोपसे।
५. बच्चा पैदा होते समय की कठिनतासे।
६. बच्चा पैदा होनेके बाद गर्भाशयमें रक्तके जम जाने से।
७. खेड़ीका टुकड़ा अन्दर रह जानेसे।
८. खेड़ी देरमें निकलनेसे।
९. किसी औजारके चोट लगनेसे।
१०. ऋतु समयमें सर्दी लग जानेसे।
११. अति मैथुन और मैथुनमें चोट लग जानेसे।

१२. गर्भपात कराये जाने से।

१३. स्त्री को गर्मी सुजाक होने या ऐसे रोगी पुरुष के सयोग से।

१४. प्रदर और ऋतु धर्म्म के विगाड़ से।

१५. योनि से लसदार चीज रक्त सहित गिरने से।

१६. गर्भाशय के दूसरे प्रकारों की सूजन से।

इस प्रकार की सूजन मे अनेक लक्षण होते हैं।

१. योनि में खुजली का होना।

२. पेड़ू में वोझ और जलन।

३. ऋतु समय में रज अधिक निकलना।

४. सांथलों और पीठ में कठिन पीड़ा।

५. जाँघ और कमर में रह रह कर दर्द होना।

६. पाखाना पेशाव के समय वहुत पीड़ा होना।

७ कमर के चारों और छातियों मे विशेष पीड़ा।

८. हर समय कुछ न कुछ ज्वर का रहना।

९. हाथ पैरों मे जलन और गलेका सूखना।

१०. पँसली, सर और पाखाने के स्थान में दर्द।

११. पीठ मे चवकियों का चलना (यह एक खास लक्षण है)

इस प्रकार गर्भाशय की भीतरी सूजन के कारण और लक्षण होते हैं। जव सूजन प्रारम्भ होती ह तो कुछ नही मालूम होता। ज्यों ज्यों सूजन वढती जाती है, चाहे वह कैसे ही क्यों न हो, उसी के साथ कष्ट भी वढता जाता है। इसका उपचार शीघ्र करना चाहिये।

३, गर्भाशय का कट जाना।

१. यह रोग प्रायः दो अवस्थाओं मे देखा गया है (१) जव

कि बच्चा पैदा होने का समय निकट हो (२) जब कि बच्चा पैदा होनेका समय हो—इसके अनेक कारण हैं।

१. बालक का टेढ़ा हो जाना।

२. गर्भाशय पर एक बार भारी चोट पहुंचना।

३. जन्म होते समय हाथ पैर, मुंह, नाक और चूतड़ का पहले निकलना।

४ बालकके अंगोंका बे डौल होना।

इनमें इसके अनेक लक्षण होते हैं।

१. गर्भाशय सिकुड़नेके समय कठिन पीड़ाका होना।

२. एकदम रुधिरका अधिक निकलना।

३. प्रसवकी वेदना का एक बारगी बन्द हो जाना।

४. बेहोशी और सांस का जल्दी जल्दी चलना।

५. जब गर्भाशय फट कर बच्चा पेटमें आ जाता है तब गर्भाशय सिकुड़ कर गोलाकार होजाता है।

ईश्वर न करे कि किसीके यह रोग हो। मौत के मुंहमें चला जाना अच्छा परन्तु यह रोग बुरा है—गर्भाशय हर जगह से फट सकता है, परन्तु ऊपरका भाग कम फटता है, दाहिने बांए अधिक फटता है। जब कभी नीचले भाग के ऊपर का हिस्सा फटता है, तो बड़ी कठिनाई पड़ती है। इसका परिणाम अच्छा नहीं होता। माता और बच्चा दोनोंकी जान जानेका सन्देह रहता है। बहुत बड़ी कठिनाई तो उस समय होती है जब कि बच्चा गर्भाशयके फटे हुये रास्ते से निकल कर पेट में आ जाता है।

४. गर्भाशय का फूल जाना।

यह साधारण रोग नहीं है इसके अनेक कारण होते हैं.

१. बंधनों के ढीले पड़नेसे गर्भाशयकेबल का कम होजाना।

२. सर्दीके कारण गर्भाशयकी ताक़तका कम हो जाना।
३. बदनमें गर्मी कम हो जानेपर सर्दी पहुँचनेसे, या चोट लगनेपर सर्दी लग जानेसे, रगोंमें हवाकी रुकावट हो जानेसे।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. पेटपर सूजन जिस ओर गर्भाशय फूला हो।

२. पेड़ूपर सूजन।

३. पेडू, कमर, पट्ठों, आमाशय और पसलियोंमें दर्दका होना। जहाँतक देखा गया है यह रोग प्रायः पैंतीस वर्षके बाद होता है, विशेष कर उन स्त्रियोंमें जो निर्बल हैं या जिसके बार बार बच्चा होता है या बार बार गर्भ गिरा करता है।

[५] गर्भाशयका जुकाम।

इसको यूटराइन कटार कहते हैं—वैद्य लोग इसे गर्भाशयका श्वेत प्रदर कहते हैं। इस रोगमें बड़ी कठिनाई पड़ती है। इसके अनेक कारण होते हैं।

१. आतशक और सूजाक इत्यादि छूतदार रोगों के होने या ऐसे रोगोंके रोगी पुरुषोंके संयोगसे।
२. बारबार गर्भापात होनेसे।
३. गर्भाशयमें किसी तरह की खराँच हो जानेसे।
४. अतिमैथुन करनेसे।

५. गर्भाशयमें छूतदार रोगोंका असर पहुँचनेसे।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१- पेडू और जाँघोंमें दर्द होता है।
२. दस्तोंका आना व रोग बढ़ जानेपर कब्ज हो जाना

३ पेटका फूल जाना और जी मचलाना, जब कि गर्भाशयके पेंटेमें सूजन हो ।

४ कुछ कुछ ज्वर का हर समय रहना ।

५- गर्भाशयमें वोझ, जलन और पीडा होना ।

६ दवानेपर गर्भाशयमें दर्द होना ।

७. खूनका शरीरमें कम वनना ।

८. निर्वलता अधिक हो जाना, मुख सूख जाना ।

९. ऋतु धर्म कष्टके साथ होना ।

१० गर्भाशयका मुख खुल जाता है, जब कि गर्भाशयकी गर्दनमें सूजन हो ।

११: गर्भाशयके मुखपर घाव होकर पीप पड जाना । ऋतुधर्म समयपर न होना, या अधिक होना, पेडूमें वोझ मालूम होना और कभी कभी खूनका गिरना । गुरदा फेफडा और जिगरके रोग उत्पन्न हो जाना . जब कि रोग पुराना हो जावे ।

यह रोग गर्भाशयके पेंटे, धड और गरदनमें होता है । इसमें सूजन आ जाती है और लसदार चिपचिपा मवाद निकला करता है । दानें पडनेके कारण जब गर्दनमें संकीर्णता आ जाती है, तब स्त्री वन्ध्या हो जाती है ।

[६] गर्भाशयके मुखकी सूजन ।

ऐसी सूजन दो प्रकारकी होती है । (१) मामूली, (२) फैली हुई । इन दोनोंमें अन्तर इतना ही होता है कि मामूली सूजन थोड़ी होती है, और फैली हुई लम्बी और कुछ चौडी होती है । इन दोनोंके कारण प्रायःएक ही होते हैं ।

१. विषम ज्वर या प्रसूतिके वाद या बच्चा पैदा होने समय गर्भाशयमें छूतका असर या क्लेश पहुँचनेसे ।

२. प्रदरके बढ़ जानेसे ।
३. बच्चा पैदा होते समय सरदी लगने और अनेक असावधानियोंसे ।
४. गर्भाशयके मुखपर दबाव पड़ने पर चोट लगने और तेज़ाब ऐसी जलन उत्पन्न करनेवाली वस्तुओंके लगानेसे ।
५. योनिके भीतर विकार उत्पन्न करनेवाली दवा लगानेसे
६. अतिमैथुन और दीर्घ लिंगसे एकबारगी गर्भाशय के मुखपर दबाव पड़ने और गर्भाशयके मुखके समीप जखम होनेसे ।
७. बच्चा पैदा होते समयकी चोट या छिल जानेसे ।
८. बच्चा पैदा होनेपर गर्भाशयके न सिकुड़नेसे ।
९. बच्चा पैदा होते समयमें किसी औजार या दाईके नखून लगनेसे ।
१०. बच्चा पैदा होनेके बाद घूमने फिरने और मेहनत करनेसे ।
११. बच्चा पैदा होते समयमें गर्भाशयका मुख फट जानेसे ।
१२. गरमी, सूजाकके होने या इससे रोगी पुरुषके संयोगसे ।
१३. गर्भाशयके मुखपर अनेक प्रकारकी छूत पहुचनेसे ।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं ।

१. गर्भाशयके मुखपर तनाव हो जाना और पेडूमें बोझका मालूम होना।
२. गर्भाशयके मुखपर घाव और छोटे छोटे दाने पड़ जाना।
३. योनिसे एक तरहका पतला पदार्थ गिरा करना और मूत्रमें रुकावट ।

४. निर्बलता, शरीरका पीला पड़ जाना, उठने बैठनेमें कष्ट, सांसका उखड़ आना और थोड़े परिश्रमसे थक जाना।
५. मैथुनमें कष्ट और पीड़ा, कै और पाचनशक्तिका कम होना ।
६. हाथ पैरके जोड़ोंमें दर्द और पाचनशक्तिमें कमी होना ।
७ पेड़ू, पीठ, माथलों, सर और पसलियोंमें दर्द ।

सबसे पहले गर्भाशयके मुखपर ज़रा सी सूजन होती है, फिर यही सूजन धीरे धीरे फैल जाती है। इसीसे दार्घ शोथ हो जाता है। ऐसी दशामें खास कारण प्रदर समझना चाहिये। जब तक यह अच्छा न होगा इसका संबंधी कोई रोग अच्छा नहीं हो सकता। ऐसी दशामें चिकना बहनेवाला पदार्थ निकला करता है, परन्तु जब किसी तरहकी रुकावट हो जाती है, तो अन्दर ही भरा रह जाता है।

७, गर्भाशयकी जलन ।

इसके अनेक कारण हैं ।
१. रजो-दर्शनके समयमें सर्दीका लगना, गरम चीज़ोंका खाना और अतिमैथुन ।
२. बच्चा पैदा होने समयमें किसी प्रकारकी गन्दगी गर्भाशयमें पहुँचना ।
३. बच्चा पैदा होने समयमें चोट लगना और गर्भाशयका ठीक ठीक न सिकुड़ना ।
४. नाल खींचनेमें खेड़ीका टुकड़ा अन्दर रह जाना ।

ऐसी दशा में अनेक लक्षण होते हैं ।
१. पेटका भारीपन और दर्द, कमर छाती पेड़ूमें कठिन पीड़ा
२. पहिले रज-स्राव होना और पीछे रुक जाना। मैथुनमें कष्ट ।

कभी कभी हिस्टीरियाकासा दौरा हो जाता है। गरम खट्टी चरपरी और बादी चीजोंके खानेसे यह रोग खूब बढ़ता है। बढ़े हुए रोगमें हिस्टीरिया अवश्य होता है।

८. गर्भाशयका मोटा हो जाना।

यह कठिन रोग है और इसके अनेक कारण हैं।

१. बच्चा पैदा होनेपर गर्भाशयमें जखम हो जाना या अच्छी तरहसे न सिकुड़ना।

२. बारंबार बच्चा होने या गर्भपात होनेसे गर्भाशयका निर्बल होकर न सिकुड़ना।

३. बच्चा पैदा होने समयमें खेड़ीका कुछ टुकड़ा भीतर रह जाना।

४. गर्भाशयमे रक्तके इकट्ठा होजाने और न निकलनेसे।

५. गर्भाशयमें प्रसवके समय चोट लगनेसे।

६. प्रसवके बाद ही चलने फिरने और परिश्रम करनेसे।

७. प्रसवके कुछ दिन बाद ही पुरुष संयोगसे।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. साँथलों और कमरमें दर्द।

२. मैथुनमें पीड़ा और पेडूका भारीपन।

३. पैरपर कुछ सूजन और गर्भअण्डोंमें दर्द।

गर्भाशय दो तरह से मोटा होता है। एक—जब केवल गर्भाशयका मुख ही मोटा पड़ जाय; दूसरे–जब पूरा या अन्दर-का भाग मोटा पड़ जाय। ऐसी दशामें स्त्री वंध्या हो जाती है।

९, गर्भाशयमें जलका भर जाना।

इसका निम्न कारण है।

१. किसी कारण गर्भाशयका मुख बन्द हो जानेसे गर्भाशयको ढके रहनेवाली झिल्लीसे जल या रक्त मिला हुआ जल गर्भाशयमें इकट्ठा हो जाता है। ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. पेट फूल आता है। हाथ पैरोंसे गर्भके चिन्ह मालूम होते हैं। कै, जी मचलाना, घुमनी, बदनमें सुस्ती इत्यादि मालूम होती हैं।

ऐसी दशा में स्त्रियाँ प्रायः गर्भका सन्देह करती हैं। बढ़े हुए रोगमें बड़ी कठिनाई पड़ती है।

१०, गर्भाशयकी गाँठ।

यह दो प्रकारकी होती हैं (१) मामूली (२) मिली हुई।

१. गर्भाशयकी मामूली गाँठ।

यह ठोस होती है। देखनेमें आकार गोल होता है। किसी किसीकी लम्बी और कुछ टेढ़ी भी होती है। जब यह गर्भाशयके मुखपर होती है तो स्त्री वंध्या हो जाती है और यदि गर्भाधान होनेके बाद ऐसी गाँठ पड़ जाय, तो प्रसवमें बड़ी-कठिनाई पड़ती है।

२. गर्भाशयकी मिली हुई गाँठ।

इसकी बनावट गोल मांस के रेशों से बनी होती है। इसमें कुछ बोझसा जान पड़ता है और गर्भ सरीखा प्रतीत होता है। ज्यों ज्यों गाँठ बढ़ती जाती है, त्यों त्यों भारीपन आता जाता है। रजका स्राव एकाएक बन्द हो जाता है। दर्द, बदहज़मी, हाथ पाँवमें जलन, कमज़ोरी, चेहरेकी रंगत पीली और स्त्रीमें सुस्ती आ जाती है।

११. गर्भाशयके मुखका वन्द हो जाना।

इसके अनेक कारण हैं।

१. गर्भाशयके मुखपर चोट लगनेसे उसमें सूजन आ जाती है। इस कारण दोनों किनारे चिपट जाते हैं और सूजन हलकी पड़ कर मुख मोटा पड़ जाता है तथा चिपका रहता है।

२. गर्भाशयके मुखके दोनों किनारोंमें मवाद पड़कर आपसमें चिपट जानेसे।

३. गर्भाशयके मुखपर चोट लगनेसे, जव कि सूजन आ जावे ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. पेड़ूका भारीपन और उसमें पीड़ा।

२. हाथ, पाँव, पीठ और साँधलोंमें दर्द।

३. गर्भाशयमें सफेद, चिकना और वहनेवाला पदार्थ भरा रहना जव कि गर्भाशयका मुख जन्मसे वन्द न हो।

गर्भाशयका मुख दो प्रकारसे वन्द होता है। एक तो वह कि जो जन्मसे ही वन्द हो, दूसरा वह जो किसी रोग के होनेसे वन्द हो। जव रोगसे वन्द होता है तव गर्भाशयके मुखके आगे एक परदासा पड़ जाता है। ऐसी दशामें रज नहीं निकलता ज्यों ज्यों रोग वढ़ता जाता है, कष्ट भी उसीके साथ वढ़ता जाता है। अधिक रज इकट्ठा हो जानेपर ज़रा ज़रासा गिरता है।

१२. गर्भाशयका अर्वुद।

इसके कई कारण हैं।

१. जन्महीसे होना।

२. जिस जगहसे गर्भाशय मुड़ जाता है वहाँ दवाव पड़नेके कारण पोषण न होनेसे।

३. संक्रामक रोगोंके संसर्गसे ।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं ।

१. योनिसे दुर्गंधका आना ।
२. एक प्रकारका गाढा पानी निकलना ।
३. पेडूके सामने अत्यन्त कठिन पीडा ।
४. कै और प्रायः दस्तोंका आना ।
५. घावके कारण समागममें पीडा होना ।
६. समयपर रजस्वला न होना ।
७. गर्भाशयके आगेका मुख सिकुड जाना ।
८. गर्भाशय और योनिमें दर्द, शोथ और दाहका होना ।
६. कभी कभी एक बारगी रज-स्राव हो जाना ।
१०. घावमें खुजलाहट मालूम होना ।
११. मन्दाग्नि हो जाना और पेटका अफार ।
१२. रज कम निकलना ।
१३. रजका अत्यन्त पीडासे निकलना ।
१४. रजका गर्भाशयमें जम जाना और कब्जियत ।
१५. गर्भाशयका दग्ध हो जाना ।
१६. मूत्र बन्द हो जाना, या बूंद बूंद गिरना ।
१७. गर्भाशय और उसके आस पास शोथ होना ।
१८. जाँघ, पेडू, रीढ, कमर, नाभी नेत्रों और सरमें दर्द होना ।
१६. अण्ड और रजवाही नलियोंमें शोथ ।
२०. गर्भाशयका नीचे उतर आना ।
२१. पेटपर सूजन हो जाना ।

यह रोग पहले पहल गर्भाशयके मुखपर होता है, और बढते तेबढ आस पास फैल जाता है । घाव जब फैलता है, तो

गर्भाशयका कुछ भाग सड़ जाता है। जब रोग बढ जाता है, तो स्त्री वन्ध्या हो जाती है।

१३. गर्भाशयमें दाने पड़ जाना।

इसके कई कारण हैं।

१. रक्त-विकारसे।

२. रज अशुद्ध होनेसे।

३. बच्चा पैदा होते समयमें गन्दगी पहुँचनेसे।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. पेड़ू दबानेसे दर्द होना।

२. कभी रक्त और कभी मवाद मिले हुए रक्तका निकलना।

३. रक्तमें बदबू आना।

इस रोगमें गर्भाशयकी ग्रीवापर छोटे छोटे दाने पड़ जाते हैं और एक दूसरे सम्बन्धसे बढ़ते जाते हैं।

१४. गर्भाशयके घाव।

ये दो प्रकारके होते हैं। (१) बाहरी और (२) भीतरी।

१. बाहरी घाव—इसके अनेक कारण हैं।

१. गर्भाशयमें बाहरसे चोट लगनेपर।

२. रग और झिल्लीके फट जानेपर।

३. गर्भाशयमें धमक पहुँचनेपर।

२. गर्भाशयके भीतरी घाव—इसके अनेक कारण हैं।

१. मरे हुए बालकके खींचनेमें रगड़ लगने या चोट लगनेसे।

२. रग वा किसी झिल्लीके फट जानेसे।

३. जनन समयमें दर्दकी अधिकतासे।

४. गर्भाशयमें सूजन और फुंसियोंके उत्पन्न होनेसे।

५. बच्चा कठिनाईसे पैदा होना।

६. बच्चा पैदा होनेपर झिल्लीके खींचनेकी असावधानीसे।
७. गर्भाशयमें गंदगी आ जानेसे ।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण प्रकट होते हैं ।

१. हर समय दर्द व जलनका रहना और मैथुनमें कष्ट ।
२. यदि मवाद जलनके साथ आवे, तो जानना चाहिये कि घाव शुद्ध होकर छँट रहा है ।
३. यदि खून और मवाद आवे तो जानना चाहिये कि कोई रग फट गई है ।
४. यदि गाढ़ी पदार्थ निकले, तो जानना चाहिये कि सृजन समयके पहले ही फट गई है ।
५. यदि काला बदबूदार रक्त आवे और मवाद न पडी हो और दर्द हो, तो जानना चाहिये कि मांस गल रहा है ।
६. यदि मांस पतला और जलयुक्त निकल रहा हो, तो जानना चाहिये कि घाव सड गया है और मांस गल रहा है ।

१५. गर्भाशयकी रसौली ।

इसका कारण ।

एकमात्र रजोधर्मका बिगाड़ और प्रदर है ।

इस रोगमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं ।

१ जब यह रसौली भीतरको बढती है, तब गर्भाशय बढता है ।
२ जब यह रसौली गर्भाशयके बाहरके भागमें बढ़ती है, तो गर्भाशय नहीं बढता, किंतु दबाव पढ़नेसे सूख जाता है ।
३. ज्यों ज्यों रसौली बढती जाती है रजोधर्ममें रुकावट पडती जाती है ।
४ जाँघ कमर और रीढमें दर्द होता है ।

५. पेड़ू में बोझ सरीखा जान पड़ता है और जी मचलाता है।

६. भोजन नही पचता।

यह रसौली गर्भाशय में होती है और रस से भरी रहती है यह गर्भाशय की परत के भीतरी हिस्से में बढ़ती है और कभी अगले हिस्से में भी सुपारी से लेकर नारियल के आकार तक देखी गई है। यह एक से अधिक भी होती है। प्रारम्भ में कुछ जान नहीं पड़ता—परन्तु विकार उत्पन्न होते ही रजो धर्म्म में खराबी आ जाती है। ज्यों ज्यों यह बढ़ती है आस पास के गर्भस्थानों पर दबाव पड़ता है। इसमें गर्भ नहीं रहता यदि रोग के प्रारम्भ होते समय में गर्भ रह जाय, तो पात हो जाता है। प्रारम्भ में रजविकार का मामूली रोग समझकर बहुत कम ध्यान दिया जाता है।

१६. गर्भाशयका नासूर।

१. पुराने जखम से नासूर हो जाता है। जब गर्भाशय में फुन्सी वगैरह हो जाय और वह पके या फूटाकरे अथवा बहा करे, नो उसको नासूर कहते हैं। इस में से पतली मवाद या पानी सा निकला करता है। दर्द रहता है और खाज मालूम होती है।

१७. गर्भाशयका टेढ़ा हो जाना।

यह आगे और पीछे से टेढा होता है।

इसके कई कारण हैं।

१. जब मूत्राशय खाली है, तो पाखाना जाते समय अधिक जोर पडने से।

२. तीक्ष्ण मरोडे होने और बन्धनों के ढीले पड जानेसे।

२ ठोकर लगकर औंधे गिर पड़ने से ।

जब ऐसा होता है, तो अनेक लक्षण प्रकट होते हैं ।

१ आगे को बोझ और गर्भअण्ड तथा नली में शोथ ।

२ ऋतुधर्म में रुकावट और कष्ट से स्राव होना है ।

३ मूत्राशय पर दबाव पड़ना है ।

४ मूत्र प्रायः एक एक एक बूंद आता है ।

५ पेड़ू के सामने दर्द होता है ।

जब यह रोग होता है, तो स्त्री बन्ध्या हो जाती है और गर्भाशय का मुख कुछ छोटा पड़ जाता है । यह जन्म से भी होता है । ऐसी दशा में गर्भाशय का मुख चपटा और संकुचित होता है ।

२. गर्भाशयका पीछेमें टेढ़ा होना—इसके कई कारण हैं ।

१ मरा बालक पैदाहोने पर झिल्ली के खिंच जाने से ।

२ नितंबों के बल चित्त गिर पड़ने से ।

३ भारी बोझ उठाने से ।

४ गर्भाशय के बन्धनों के ढीले पड़ जाने से ।

जब ऐसा होता है तो अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१ पेड़ू और नितंबों के बीच में दर्द होना ।

२ पीठ में दर्द और जाड़ा लगकर रोमांच हो आना ।

३ गर्भाशय से लुवाबदार पदार्थ बहना ।

४ एक एक बूंद मूत्र गिरना ।

५ कब्ज और गर्भाशय के आस पास के स्थानों में सूजन आना ।

६ पेट के अन्दर दूसरे स्थानों में रक्त इकट्ठा होना ।

७ चलने के समय जांघ, पेड़ू, कमर और नाभी में दर्द होना ।

८ शरीर में भड़कन और दर्द होना ।

९ गर्भअण्ड और नली में शोथ होना ।

जब यह रोग होता है, तो गर्भ रह जाता है; परन्तु गिर जानेका भी भय रहता है। जब बराबर गर्भ-पात हो जाता हो, तो इस रोगका होना बहुत सम्भव है। इसका जन्मसे ही पीछेसे टेढ़ा होना स्त्रीको अवश्य वन्ध्या कर देता है।

१८. गर्भाशयका टल जाना—

यह चार प्रकार से टलता है। (१) आगे (२) पीछे (३) दहिने और (४) बाएँ।

१. गर्भाशयका आगे टलना—इसके अनेक कारण हैं—

१ गर्भाशय पर पीछे से किसीप्रकार का दबाव पड़नेसे।
२ औंधे मुँह गिर पड़ने से।
३ मैथुन की असावधानी से।
४ गर्भाशय के बन्धनोंके ढीलेपड़ जाने से।
५ रज विकार के अनेक उपद्रवों से।

ऐसी दशा में अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१ मूत्राशय पर दबाव के कारण बाधा पहुँचना।
२ मूत्र का एक एक बूँद निकलना।
३ पेंडूके सामने दर्द और बोझ जान पड़ना।
४ रजका ठीक तौरसे न निकलना।
५ रजका अत्यन्त कष्ट के साथ निकलना।
६ गर्भाशय में रज इकट्ठा हो जाना।
७गर्भाशय के मुखका छोटा हो जाना।

जब यह रोग होता है तो स्त्री वन्ध्या हो जाती है। गर्भाशय का मुख छोटा पड़ जाता है। बहुत सी स्त्रियों में जन्मसे ही गर्भाशय आगे को टला हुआ रहता है।

२. गर्भाशयका पीछेकी ओर टलना—इसके कई कारण हैं।

१. मैथुन के समय की असावधानी से।

२. नितंवों के वल चित्त गिर पडने से ।

३. भारी वोझ उठाने से ।

४. गर्भाशय के वन्धनों के ढीले पड जाने से ।

५ किसी प्रकार की चोट कि जिसमें आगे से धक्का लगे । ऐसी दशा में अनेक लक्षण प्रकट होते हैं ।

१ मूत्रमार्ग में जलन होना ।

२ मूत्र का टपक टपक कर निकलना ।

३ मलाशय पर वोझ सा मालूम होना ।

४ पेडू और नितवों के वीच में दर्द ।

५ पीठ और रीढ में दर्द का होना ।

६ कब्ज और गर्भाशय के आस पास सूजन ।

७ रज में रुकावट और जलन ।

जब यह रोग होता है, तो स्त्रीके गर्भ रहता अवश्य है, परन्तु प्रायः उसका पात हो जाता है । बरावर गर्भपात होनेसे इस रोगकी संभावना होती है । जब जन्मसे ही यह रोग हो, तो स्त्री अवश्य वन्ध्या होती है ।

३—४. दहिने और वाए गर्भाशयका टलना—

इसके कई कारण हैं ।

१ मैथुन की असावधानी ।

२ दहिने वल गिरने से वाई और वाएं वल गिरने से दहिनी ओर टल जाता है ।

३ भारी बोझ उठाने से । जिस ओर वोझ पड जावे उस ओर का गर्भाशय टल जाता है यदि दहिने ओर पडे, तो वाँई ओर टल जायगा और यदि वाँई ओर पडे तो दहिनी ओर टल जायगा ।

४ यदि दहिना बन्धन ढीला पड़ गया है, तो बाई ओर

और यदि बायाँ बन्धन ढीला पड़ गया है तो दहिने और टल जायगा।

५-दहिनी ओर चोट लगानेसे बाईं ओर और बाईं ओर चोट लगनेसे दहिनी ओर टल जाता है।

जब ऐसा होता है, तो अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. गर्भाशय चाहे जिस ओर टले, दोनों ओर के गर्भ-अण्ड और फलवाहिनी नलीमें खिचाव और तनावके कारण सूजन होगी।

२. रजका समयपर ठीक ठीक न निकलना।

३. जिस ओर गर्भाशय टला हो उस ओर कुछ भारीपन मालूम होना।

यह भी दो प्रकारसे होता है। जब यह रोग जन्मसे होता है, तो स्त्री वन्ध्या होती है। ऐसी दसामें गर्भ रह जाता है, परन्तु पात होने का भय रहता है। अतएव ऐसे रोगोंमें उचित उपचार करना चाहिये।

१६. गर्भाशयका उलट जाना।

१. गर्भाशयके बन्धनोंके अत्यन्त ढीले पड़ जानेसे।

२. अत्यन्त निर्बलता और गर्भाशयमें एकदम किसी प्रकारकी चोटसे।

३. अपने स्थानसे टलते समयके गर्भाशयकी झटकसे।

इसके अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. स्त्रीके हृदयपर कठिन आघात पहुँचता है।

२. स्त्री एक दम बेहोश हो जाती है।

३. हाथ पैर ठंढे पड जाते हैं और कै होने लगती है।

४. योनिसे रक्त निकलता है। निर्बलोंमें कम और बलवती स्त्रियोंमें अधिक।

५. पेडू और पीठमें कठिन पीड़ा होती है।

६. धीरे धीरे नाड़ीकी चाल कम पड़ती जाती है।

यह बडा ही भयंकर रोग है। कुशल इतनी ही है कि यह रोग आम तौरसे नहीं होता। इस रोगमें गर्भाशय इस प्रकार उलट जाता है कि उसका रूप ही बदल जाता है। नीचेका भाग ऊपर और ऊपरका नीचे हो जाता है। इसका कोई समय नहीं है। बच्चा पेटमें आनेके पहले गर्भ-समयमें और बच्चा पैदा हो जानेके बाद भी उलटता है। उस समय इसकी तीन दशाएँ होती हैं।

१. पेंदेका भीतरकी ओर दबकर घुसना और वहाँ गड्ढा पड़ जाना।

२. दबे हुए पेंदेके भागका मुखमें आ जाना या पेंदेका मुखकी ओर गहरा घुस जाना।

३. गर्भाशयका उलट जाना।

जब ऐसी दशा होती है, तो बड़ी कठिनाई पडती है। यदि शीघ्र यत्न न किया जाय तो अनेक उपद्रव खडे हो जाते हैं; खासकर गर्भावस्थामें बहुत बड़ी कठिनाई होती है।

२०. गर्भाशयके मुखका अधिक खुल जाना।

१. जन्मसे ही अधिक खुला रहना।

२. निर्बलता और बन्धनोंके ढीले पढ़ जानेसे।

३. अतिमैथुन और गर्भाशयके मुखपर ऐसी दवा लगानेसे कि जिससे जलन इत्यादि हो।

४. गिर पड़ने या पेट मसलने इत्यादिसे।

५. गर्भाशयका मुख किसी यंत्रके द्वारा फैलानेसे जब कि वह पुनः सिकुड़ न सके।

६. बच्चा जनते समयकी असावधानी से, जब कि फैले मुखका संकोचन न हो और वह वैसा ही रह जाय। इस में अनेक लक्षण प्रकट हो जाते हैं।

१. हर समय पानी सरीखा कुछ बहा करता है।

२. कभी कभी रक्त भी आ जाता है।

३. रजोधर्मके समय में कुछ पीड़ा पेड़ू के सामने होती है।

४. उठने बैठने और चलने फिरने में कष्ट होता है।

यह दशा अच्छी नहीं है, इसमें गर्भ नहीं रहता। यदि गर्भ के समय में ऐसा हो तो वह गिर जाता है।

२१. गर्भाशयके मस्से।

इसमें अनेक कारण होते हैं।

१. रज-विकार से।

२. अति मैथुन प्रिय और आरामतलब होने से।

३. अधिक बैठने और बादी पदार्थों के खाने से।

४. बार बार गर्भ गिर जाने से।

५. रक्त विकार के अनेक कारणों से।

इस रोग में अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१. रजका अपने समयपर और ठीक तौरसे न निकलना।

२. आगे कुछ थोड़ा सा बोझ जान पड़ना जब कि मस्सा बड़ा होजावे।

३. पेड़ूके सामने दर्द का होना।

४. ऋतुधर्म के समय को छोड़कर और समय में भी रक्त निकलना।

जब यह रोग होता है तो मस्से दो जगह होते हैं। गर्भाशयके भीतर और गरदन पर। बढ़ने पर बाहर के मस्से कुछ

कुछ दिखलायी पडते हैं और बहुत बढने पर आगे तक योनि में लटक आते हैं। ऐसे मस्से भरते और फूटते हैं। उस समय बडी पीडा होती है। यह छोटे से छोटा चनेके बराबर और बडे से बड़ा छोटे अमरुद के बराबर होता है। दूसरे तरह का मस्सा जिल्द से चिपटा रहता है। इसमें रक्त भरा रहता है। कभी एक ही मस्सा होता है, और कभी कई देखे जाते हैं। काले रंग की स्त्रियों में यह रोग अधिक होता है। जिनका गर्भ बार बार गिर जाया करता है, उनमें इस रोग की शंका अवश्य होती है। यह रोग प्रायः चालीस वर्ष की अवस्था के लग भग होता है। इसमें स्त्री वन्ध्या हो जाती है।

२२. गर्भाशयका दग्ध हो जाना ।

इसके कई कारण हैं।

१ थोडी अवस्था में बड़ी अवस्थावाले पूरे जवान पुरुष से संयोग करने पर।

२ गर्भाशय में संक्रामक रोगों का असर पहुंचने में।

इस रोग में अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१ दबाव पडने के कारण नसों का फट जाना।

२ मासिक धर्म के समय रक्त अधिक निकलना।

३ ऋतुधर्मके समय के अतिरिक्त और समयों में भी रक्त निकलना या आठ दस दिनतक बराबर स्राव का होना।

ऐसे रोग में दबाव के कारण नालियों के फट जाने से प्राय. रक्त निकला करता है और ऐसी स्थिति में गर्भ नहीं ठहरता।

२३. गर्भाशयमें रक्तका जमकर सूख जाना ।

इसके कई कारण हैं।

१. गर्भाशय में ठंडक का पहुंचना और मुख में रुकावट होना।

२. गर्भाशयसे रज न निकलना।

इस रोगमें अनेक लक्षण होते हैं।

१. रजका देरमें और थोड़ा निकलना।

२. पेडूके सामने उभार और दर्द होना।

३. अचानक सरदी लगकर शरीरमें ज्वरका प्रकोप हो जाना।

४. भोजनमें अरुचि, कै और जी मचलाना।

यह रोग उस दशामें होता है जब कि मुख संकुचित होनेके कारण गर्भाशयसे रज न निकले। ऐसी दशामें रज गर्भाशयमें जमकर सूख जाता है।

२४. गर्भाशयमें वीर्य्य न ठहरना।

इसके ये कारण हैं।

१. गर्भाशयमें ऐसे चिकने पदार्थका फैल जाना कि जिससे वीर्य्य न ठहर सके या गर्भाशय टेढ़ा पड़ गया हो।

२. हर समय एक प्रकारकी लुवाबदार वस्तुका बहा करना।

इस दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. गर्भाशयमें कुछ भारीपन मालूम होना।

२. कभी कभी कुछ थोड़ासा दर्द होना।

यह रोग उस समय होता है जब कि चर्बी बढ़ जाय, जिसके कारण गर्भाशयमें चिकनापन अधिक आ जाय। ऐसी दशामें वीर्य्य बाहर निकल आता है। गर्भ धारण नहीं होता।

२५. गर्भाशयमें मांसका बढ़ जाना।

इसको हकीम लोग 'औराने रहम' कहते हैं। कारण ये हैं।

१. रजका बिगाड़ और उसमें भारी तबदीली।

२. गर्भाशयके दूसरे रोगोंके संबन्धसे।

इस दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. कमरमें दर्द और चबकीसी चलना ।

२. पेड्रूमें पीड़ा और भारीपन मालूम होना ।

३. रजका कम निकलना और उसमें कुछ बदबूका आना ।

यह दशा भयानक होती है। जब ऐसा होता है, तो सबसे पहले स्त्रियोंको मोटे होनेका सन्देह होता है। ज्यों ज्यों रोग बढ़ता जाता है, दशा बिगड़ती जाती है।

२६. गर्भाशयमें कीड़ोंका पैदा हो जाना।

इसको हकीम लोग 'सरतान रहम' कहते हैं। इसके कई कारण हैं।

१. रज दूषित होनेसे ।

२. किसी प्रकारकी छूत पहुँचनेसे ।

३. गर्भाशयमें कोई जगह पक जानेसे और उसमें छूत या किसी प्रकारकी गन्दगी पहुँचनेसे ।

४. गरमी और सूज़ाकके अनेक विकारोंसे ।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं ।

१. बदबूदार पतला और रंगीन स्राव होना ।

२ पेड्रूमें दर्द और अन्दर खुजली ।

३ पिंडलियोंमें दर्द और रीढ़में पीड़ा होना ।

४. रज अधिक निकलना और उसमें बदबू आना ।

यह दशा भयानक होती है, इसमें गर्भाशयको बड़ी हानी उठानी पड़ती है ।

इस प्रकार गर्भाशयके अनेक रोगोंसे स्त्रियाँ पीड़ित रहती हैं। इनमें सबसे बड़ा कारण रजो-धर्मका बिगाड़ और स्त्री पुरुषकी असावधानी है। रोग उत्पन्न होते ही उपचार करना आवश्यक है।

(१०) रजो-धर्म और संयोग-शक्ति ।

निरोग स्त्रियों में नियम के अनुसार रज हर महीने अण्डोत्पादक कोष से होकर जलोत्पादक कोष में पहुंचता है और अण्डाधार से बाहर होकर डिम्बकोष से गर्भाशय में आता है। ऐसे समय में गर्भाशय की झिल्ली मोटी पड़जाती है। इसकी धमनियों में खून अधिक जम जाता है। बलगमी या श्लैष्मिक गाँठे (Mucous glands) बढ़जाती हैं। पतली धमनियों (Capillaries) और पतले सिरों से खून निकलने के कारण कहीं कहीं धमनियाँ फट जाती हैं। बलगम अधिक बनने लगता है और खून के साथ बाहर आता है। इसी को रजोधर्म कहते हैं। इस विषय में लोगों ने यही मान लिया है कि कन्यायें गरम देशों में गरमी के कारण जल्द और सर्द देशों में सर्दी के कारण देरसे रजस्वला होती हैं, परन्तु यह सिर्फ मान ही लेने की बात है। किसी भी देश की कन्याओं को देखिए, उनके रजस्वला होने का समय एक न मिलेगा। देशको जाने दीजिये एकही शहर को लीजिये जहाँ की सरदी गरमी वहाँ की रहने वाली कन्याओं को बराबर मिलती है वहाँ भी कन्याएँ एक समय में रजस्वला नहीं होतीं सर्द या गरम देशके किसी घर में एक ही माता पिता की दो कन्याओं को—जिनका पालन एक ही ढंग पर हुआ है—देखिए वे भी एक समय में रजवती नहीं होतीं इस से स्पष्ट है कि रजस्वला होने का समय देश की गरमी और सरदी पर निर्भर नहीं है॥

जगत् प्रसिद्ध डाक्टर हालिक (Hallick) की राय है कि संसार की सब जातियों में कन्याएँ लग भग एक ही उमर में रजस्वला होती हैं यदि आफ्रिका जैसे गरम देशकी

हबशी लड़की और यूरोप जैसे सर्द देशकी गोरी लड़की एक ही ढग से परवरिश पावें, तो दोनो एक ही साथ ऋतुमती होंगी ।

(The origin of life)

डाक्टर राबर्टसन कहते हैं कि भारत और इङ्गलैंड दोनों जगह नौ नौ वर्ष की लडकियाँ रजस्वला हुआ करती हैं या हो सकतीहैं ।

(Medical jurisprudence by R Chevers)

डाक्टर हटक्रिन्स कहते हैं कि दो गोरी लडकियाँ इतनी जल्दी रजस्वला हुई कि वे ग्यारह वर्ष सात मास की आयु म माताएँ बन सकती थीं ।

(Medical jurisprudence by R Chevers)

टेलर साहबका कहना कि किसी भी देश मं नौ वर्षकी लडकियाँ गर्भवती हो सकती हैं, अर्थात् ऐसा हो जाना असम्भव नहीं है ।

(Medical jurispudnce by R Chevers)

एक बार इङ्गलैंड के मैंचेस्टर लाइंगइन अस्पताल में ३४० लड़कियों की परीक्षा ली गई तो उनमें १० ग्यारह वर्ष की. १६ बारह वर्ष की, ५३ तेरह वर्ष की, ८५ चौदह वर्ष की. ६७ पन्द्रह वर्ष की और ७६ सोलह वर्ष की उम्र में रजस्वला हुई ।

(Dr Fayrer Calcutta European Female Orphan Asylum

इनबातों से पता चलता है कि सर्वत्र करीब २ एकही बात है । हमारे देशके लिये ऋषियों का मत है कि बारह वर्ष की अवस्था के पीछे रजोधर्म प्रारम्भ होता है और बुढापे से शरीर निर्बल होने पर पचास वर्ष की अवस्था तक रहता है ।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० १०)

अब विचारणीय विषय यह है कि क्या कारण है कि हमारे देशमें कन्याएँ इस समय के पहले ही रजस्वला होजाती हैं ?

इस विषयमें माताओंका बहुत बड़ा दोष है। उनको इसका कुछ भी विचार नही है। कैसी शर्मकी बात है कि मूर्ख, निर्लज्ज और शौकके पंजेमें फँसी हुई स्त्रियाँ किसी बातका विचार न करती हुई बुरी संगत और बुरे कर्मोंसे कन्याओंको जल्दी सयानी बना लेती हैं। कन्याओंको सयानी बनानेके लिये ये बातें कारणभूत होती हैं—प्रेमकी बातें, मनमाना भोजन, दिल-चाहा शृंगार, हँसी-मजाककी बातें, बेहूदे गाने, ऐयाशीके वृत्तांत-से भरी हुई पुस्तकें, स्त्री और पुरुषोंकी परस्पर बात-चीतके रसभरे किस्से, शौकका सामान और निर्लज्ज स्त्रियोंका साथ। यही कारण है कि आजकल शहरोंमें कन्याएँ दस वर्षकी अवस्थामें रजवती होकर बारहवें वर्षमें पूर्ण युवतियाँ बन जाती हैं और उनके शरीरमें सारी बातें जवान स्त्रियोंकी सी देखनेमें आती हैं। यह तो भले घरानेकी अच्छे भले मानस और पर्देमें रहनेवाली धनाढ्य स्त्रियोंकी दशा है, साधारण दशावाली स्त्रियाँ, जो पर्दानशीन नही हैं, और भी बुरी दशामें होती हैं। बाजारू कन्याएँ (रंडियोंके यहाँ) तो इससे भी कहीं ज्यादा बुरी तरकीबोंसे जवान बनाई जाती हैं। उन दशाओंको याद करते हुए यही कहना पड़ता है कि हे भगवन् क्या होगा। यही कारण है कि देहातोंकी अपेक्षा शहरोंमें कन्याएँ बहुत जल्द रजवती हो जाती हैं, क्योंकि कन्याओंके कोमल चित्तको बिगाड़कर जवानीकी गर्मी पैदा करनेके लिये शहरोंमें बहुत बड़े बड़े सामान प्रस्तुत रहते हैं।

जो लोग रजस्वला होनेका समय देशकी गरमी और सरदी पर निर्भर मानते हैं वे बङ्गाल देशका प्रमाण देते हैं। वहाँ गरमी विशेष होनेसे कन्यायें जल्दी रजवती होती हैं। इस बातका हमने स्वयं अनुभव किया है कि बङ्गालमें कन्याएँ

इतनी जल्दी क्यों रजवती होती हैं? जहाँतक पता चला, बात यह मालूम हुई कि वहाँका भोजन और व्यवहार ही इस रीतिका है। सबसे पहले भोजनको देखिये। वहाँ सर्व साधारणमें मछली खानेकी प्रथा है। क्या मछली कुछ कम कामोद्दीपक है? क्या वहां स्त्रियोंका शृंगार और प्रान्तोंसे कम है? अतएव इस बातको मान लेना पड़ेगा कि जिन कारणोंसे कन्यायें जल्द रजवती होती हैं बङ्गालमें उनकी कमी नहीं है, प्रत्युत् अधिकता ही है। वे बङ्गाली कि जो पञ्जाबके सर्द ज़िलों में बहुत दिनोंसे हैं, उनके यहाँ भी दस वर्ष की कन्याएँ रजवती होती देखी गयी हैं। इससे साफ़ जाहिर है कि भोजन और खाने पीने आदिकी स्वतंत्रता ही पर रजस्वला होनेका समय निर्भर है।

हम उन्हीं स्त्रियोंको निरोग मानेंगे कि जिनका ठीक समय पर रजाधर्म प्रारम्भ हुआ हो और हर महीनेमें ठीक ठीक होता हो। जो समय रजोधर्म प्रारम्भ होने का है? उस समय कन्याओंके शरीरकी दशा कैसी होनी चाहिये? उस समय वे खिलनेवाली कलीके समान कोमल, और चढ़ती हुई नदी के समान बढ़नेवाली होती हैं। ऐसे समयमें कन्याओंका अंग बढ़ता है, मनकी शक्तियोंका विकास होता है। अण्डे, फलवाहिनी नली और गर्भाशय पूर्ण रूपसे खिलते हैं। ऐसे समयमें यदि कोई इनसे सन्तान उत्पन्न करनेकी इच्छा करे, तो उसके बराबर मूर्ख कौन होगा।

समय और गरज दोनों बलवान हैं। मूर्खोंकी कौन कहे, अच्छे पढ़े लिखे, ताज़े दिमागवालोंके हृदयपर यह बात लोट रही है कि रजस्वला होते ही कन्याओं में संयोग-शक्ति आ जाती है। पर यह बड़ी भारी भूल है। रजस्वला होना एक बात है

और संयोग शक्ति कुछ दूसरी ही चीज़ है। रजस्वला होना बतलाता है कि अण्ड, फलवाहिनी नली और गर्भाशय अच्छी दशा में हैं और उनका विकास हो रहा है।

एक विद्वानकी राय है कि सोलह वर्ष के पहले स्त्री का शरीर संयोग करने योग्य नहीं होता, क्यों कि इसके पहिले रज कच्चे अण्ड और गर्भाशय से आता है। इनके पुष्ट होने का एक खास समय होता है। बारह वर्ष के बाद से इनका पुष्ट होना प्रारम्भ होता है और सोलह वर्ष की अवस्था तक अण्ड, फलवाहिनी नली और गर्भाशय तीनों पुष्ट होकर पूरे तौर से बढ़ जाते हैं। यदि इस अवस्था के पहिले संयोग किया जाय, तो ये तीनों बिगड़ जाते हैं। स्वार्थी पुरुष इन बातों पर ध्यान न देते हुए उत्तम सन्तान की इच्छा करते हैं। परिणाम यह होता है कि स्त्रियाँ अनेक रोगों में फँस कर ज़िन्दगी से हाथ धो बैठती हैं। अतएव यह शिक्षा मिलती है कि सोलह वर्ष से कम उमर वाली स्त्री से संयोग न करना चाहिये। रजस्वला होने के दिनों में मामूली स्त्री के—जो न बहुत निर्बल और न बहुत बलवती हो—उसके शरीर से दसतोला रज तो अवश्य ही निकलना चाहिये, परन्तु जो मोटी ताज़ी और अत्यन्त बलवती हैं उनके पन्द्रह तोला निकलना ज़रूरी है। यदि ऐसा नहीं होता, तो समझना चाहिये कि कोई रोग अवश्य है। इन्हीं कारणों से प्रदर इत्यादि अनेक रोग उत्पन्न होकर बहुत बड़ी बड़ी बाधाएँ करते हैं।

(११) रजोधर्म के रोग।

शरीर एक कलकी भाँति है जिसप्रकार कल हजारों पुर्जों के मिलाने से बनती है। उसी प्रकार हजारों नसों और इन्द्रियों से बनकर शरीर काम करता है। स्त्रियों के लिये रजस्राव

शरीर का एक प्रधान धर्म्म है। इसके नियमपूर्वक होते रहने से स्त्रियाँ वहती हुई नदी के समान स्वच्छ रहती हैं। जिस प्रकार नदी का वहाव रुक जाने पर उस में अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं, इसी प्रकार रजोधर्म विगड़ने पर स्त्रियों में अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। इनके अनेक भेद हैं।

१. रजोधर्म्मका न होना।

इसके दो भेद हैं (१) विलकुल न होना (२) प्रारम्भ होकर वन्द हो जाना। (रतिशास्त्र)

१ प्रथम भेद—रजोधर्म्म का विलकुल न होना। इसके कई कारण हैं।

१. अधूरे भगका होना (यह जन्म से होता है)
२. गर्भ अण्डका न होना (यह जन्म से होता है)
३. भग के मुख का वन्द होना (यह जन्म से होता है)
४. भगके मुखका सुईके मुखके समान अत्यन्त वारीक होना (यह जन्मसे होता है)
५ भगकी दोनों दीवारोंका आपसमें जुडा होना (यह जन्मसे ही होता है)

जिन स्त्रियों के ये व्याधियाँ होती हैं, वचपन में तो कुछ नहीं परन्तु ऋतु-धर्म के समयमें उन्हें वड़ा कष्ट होता है

२ दूसरा भेद—रजोधर्म्म प्रारम्भ होकर वन्द हो जाना। इसके कई कारण हैं।

१. गर्भ, अण्ड, फलवाहिनी नली, भग और गर्भाशय के अनेक रोगों से।

२. रज और रक्त-विकार के अनेक रोगों से।

३. शोक, चिन्ता और भय इत्यादि के अनेक प्रकोपों से।

४. विषम ज्वर, संग्रहणी और अतिसार से।

५. फेफड़े और गुरदेके अनेक रोगोंसे।
६. सरीरमें खून कम हो जानेसे।
७. शरीर दुर्बल और निर्बल होकर पीला पड़ जानेसे।
८. तपेदिक और सोमरोगसे ।
६. प्रदर और उसके अनेक उपद्रवोंसे।
१०. आमाशयके अनेक रोगोंसे।
११. शरीर का खून गाढ़ा होनेसे।
१२. रजसे संबंध रखनेवाले अवयवोंके विकारसे।
१३. भग मोटी होनेसे और उसके मार्ग सङ्कुचित पड़ जाने तथा रगोंके दब जानेसे।
१४. अधिक बैठने और आराम करनेसे।
१५. बहुत बड़ा दुःख पहुँचनेसे कि जिसका आघात हृदय पर हो ।
१६. दिमागी काम करने और अति मैथुनसे।

इन दोनों भेदोंके अनेक लक्षण हैं।

१. पेड़ूका उभार जब कि रज इकट्ठा होकर न निकले।
२. हाथ,पाँव,पैर,कमर,नाभिमें दर्द और जलन उत्पन्न होना।
३. रोग बढ़नेपर सारे पेटमें फोड़ेके समान दर्द।
४. कुपच, सरदर्द, और घुमनी तथा आँखोंकी जलन।
५. अण्डोंके दबानेपर दर्द होना।
६. रगोंमें नीलापन।
७. शरीरमें अत्यन्त सुस्ती।
८. पेशाबकी अधिकता।
६. शरीर भारी हो जाता है।
१०. पेटकी कड़ाई और रजस्रावके समयमें अत्यन्त पीड़ा।

इस रोगमें सबसे पहले अण्डोंपर असर होता है। इसके

बाद फलवाहनी नली और गर्भाशयपर। इन तीनोंमें जब खुश्की आ जाती है, तो ये सिकुड़जाते हैं। प्रारम्भमें कुछ नहीं ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है, दशा बिगड़ती जाती है।

२, रजका कम निकलना।

इसके दो भेद हैं। (रतिशास्त्र)

१ प्रथम भेद—चार दिन बराबर रजस्राव होकर थोड़ा निकलना। इसके अनेक कारण हैं।

१. रजका कम बनना।
२. रजसे सम्बन्ध रखनेवाली नसों इत्यादिके विकारसे।
३. गर्भाशयकी गरदनकी रुकावट।
४. शरीरमें रक्तकी कमी।
५. रजका गाढा हो जाना।
६. प्रदर और कुपचसे।
७. गर्भाशयके मुखका तंग होना (यह निम्न प्रकारोंसे होता है)
    १. जन्म से ही।
    २. गर्भाशयके मुखपर घाव इत्यादिके हो जानेसे।
८, अण्ड, फलवाहनी नली और गर्भाशयकी झिल्ली इत्यादिमें किसी तरहकी रुकावटसे।

२, दूसरा भेद—एक ही दो दिन निकलकर बन्द हो जाना। इसके अनेक कारण हैं।

१. इसके भी वही कारण हैं जो ऊपर कहे गए हैं, परन्तु इस दशामें रोग बढ़ा हुवा समझना चाहिये।

इन दोनों भेदोंके अनेक लक्षण हैं।

१. हाथ, पाँव, सर और कमरमें दर्द व जलन।
२. आँखोंमें भारीपन और जलन।

३. पेड़ू और कोखमें भारीपन।

ऐसी दशामें कष्ट होता है और नहीं भी होता। जिन स्त्रियोंमें रज कम होता है उनको कष्ट कम होता है; क्योंकि उनके तो रज ही कम है; परन्तु होते हुए न निकलनेसे बड़ी कठिनाई पड़ती है।

२. कष्टरज (ग० क०)

१. रजका कष्टके साथ निकलना, यही कष्ट-रज है। इसके अनेक कारण हैं।

१. अण्ड, फलवाहिनी नली और गर्भाशयमें बिगाड़। इससे, दूसरे रोग उत्पन्न हो जाना तथा किसी प्रकारकी रुकावट।

२. गर्भाशयके मुख और योनिमार्गमें शोथ इत्यादि।

३. रजसे संबन्ध रखनेवाली नसों और रगों आदिमें किसी तरहका विकार।

इसके अनेक लक्षण हैं।

१. नाभी और गर्भाशयके आसपास कठिन घावों के समान दर्द।

२. काँखने और ज़ोर देनेसे थोड़ासा रक्त निकलना।

३. रक्त निकल जानेपर थोड़ी देरके लिये दर्द कम होकर फिर ज्योंका त्यों हो जाना।

४. ऋतुके समयसे प्रायः आठ दिन पहले दर्दका प्रारम्भ होना।

५. दर्दके साथ थोड़ा थोड़ासा खून निकलना।

६. मूत्राशयमें जलन और दर्दका होना।

७. नाभीके नीचे दर्द और बोझसा मालूम होना।

यह रोग जवान स्त्रियोंमें कम, परन्तु जिसकी जवानी ढल रही हो उनमें विशेष पाया जाता है।

४. वन्ध्या स्त्रियों में कष्टरज। (शा० क०)

इसके अनेक कारण हैं।

१. भीतरी अवयवोंकी कठोरता।

२. अण्ड, फलवाहिनी नली, गर्भाशय और भग तथा रजसे संबन्ध रखनेवाली नसों आदिका विकार।

इसके अनेक लक्षण होते हैं।

ऋतु प्रारम्भ होनेके प्रायः चार दिन पहलेहीसे। नाभिके नीचे और कमरमें दर्द उत्पन्न होकर ऋतुके चार छः दिन बादतक रहना।

२. प्यास अरुचि कब्ज़ और हाथ पाँवोंमें जलन होना।

३. साँसका जल्दी चलना और वेहोशी।

५. अधिक रज निकलना।

१. यह कई प्रकारसे होता है। (रति शास्त्र)

१. चार दिनमें ही अधिक रज निकलकर वन्द हो जाना।

२. वरावर आठ-दस दिन या इससे भी अधिक दिनों तक निकलना।

३. एक मासमें दो-तीन वार निकल जाना।

४. वरावर गिरा करना या दो चार दिनके लिये वन्द हो जाना।

५. कभी दो दो मास वरावर गिर कर वन्द हो जाना और फिर गिरने लगना।

इसके अनेक कारण हैं। (रतिशास्त्र)

१. ऐसे रोगोंसे कि जिनसे शरीरका रक्त पतला पड़ जावे।
२. गर्भाशयमें उन नसोंका मुख खुल जाना कि जिनसे रक्त आता है। यह नीचे लिखे कारणोंसे होता है।
   १. जब कि छोटे कदकी स्त्री पूरे जवानके साथ संयोग करे तो दबाव और चोटके कारण नसें खुल जाती हैं।
   २. पुरुषकी लिंगेन्द्रिय बड़ी होनेके कारण नसोंमें आघात पहुँचकर उनका खुल जाना।
   ३. कम उम्रवाली स्त्रीका पूरे बड़े जवान पुरुषसे संयोग द्वारा नसोंमें आघात पहुँचकर खुल जाना।
३. खूनमें किसी प्रकारकी खराबी होने से।
४. तपेदिक और गुरदेके विकारों से।
५. शरीरमें खून बहुत बनने से (यह मोटी ताजी स्त्रियोंमें होता है)
६. ऐसे रोग कि जिनसे खूनमें गरमी उत्पन्न हो।
७. खूनका गरम हो जाना, जैसे कुष्ट रोगका खून।
८. पांडुरोगके होनेसे।
९. गर्भाशयका मुँह चौड़ा हो जानेसे।
१०. गर्भाशयकी गरदन या गर्भाशय में परिवर्तनसे।
११. अतिमैथुनसे।
१२. फेफड़ेके अनेक रोगोंसे।
१३. रक्त पतला हो जानेसे।
१४. मसानेमें सूजन आ जानेसे।
१५. अण्डोंमें शोथ होनेसे।
१६. अण्डोंके पास कहींपर शोथ होनेसे।

१७. अण्डों और गर्भाशयपर दबाव पहुँचनेसे।
१८. कलेजेके अनेक रोगोंसे।
१९. हृदयके अनेक रोगोंसे।
२०. बच्चा पैदा होनेपर यदि गर्भाशयमें खेड़ी रह जाय।
२१ बच्चा पैदा होनेपर, जब कि गर्भाशय ठीक ठीक न सिकुड़े।
२२. ऐसे अधूरे मैथुनसे कि जिससे स्त्रीकी चाह पूरी नहो।
२३. दुर्बल स्त्रियोंमें किसी प्रकारकी गरमीसे।
२४. गरम वस्तु, जैसे मिर्च, खटाईके अधिक खानेसे।
२५. गर्भाशय और अण्डोंपर किसी प्रकारकी चोट पहुँचने और इनके अनेक रोगोंसे।
२६. गरम औषधियोंके खाने और गर्भाशय तथा योनिमें लगानेसे।
२७. शोक चिन्ता और व्यथा इत्यादिके सहन करनेसे।

इसके अनेक लक्षण हैं।

१. रक्तका बहुत निकलना।
२. शरीरका दुबला, निर्बल और शिथिल पड़ जाना।
३. शरीरका रंग पीला और फीका पड़ जाना।
४. आलस्य और मेहनत न होना।
५. हाथ पाँवमें दर्द, मन्दाग्नि अरुचि और मूर्च्छा।
६. कमर और पेड़ूमें अत्यन्त पीड़ा।
७ आँख, सर और गरदनमें दर्द।
८- रीढ़, पीठ, और कोखमें दर्द, घुमनी और प्यास।

इस रोगकी भयानक दशाके लक्षण।

१. स्त्रीका बेहोश हो जाना।
२ नाड़ीकी चाल कम पड़ जाना।

३. हाथ पाँव और शरीर पर शोथ।

४. शरीरमें वायुका फैल जाना।

५. गर्भाशय और अण्डोंमें विशेष पीड़ा।

६. प्यास और पेशाबका अधिक होना।

७. दस्तकी रुकावट।

ऐसी दशामें बहुत कम स्त्रियाँ बचती हैं। इसमें शरीरका सारा रक्त निकल जाताहै। कभी कभी रक्तकी धार भी निकलती है, और कभी छिछड़ेदार रक्त निकलता है अतएव रोग प्रारंभ होते ही उपाय करना चाहिये।

६, ठीक समयपर रजस्वला न होना।

इसके दो भेद हैं। (श० क०)

१. समयके पहिले होना। इसके अनेक कारण हैं।

१. खूनका विगड़ जाना।

२. रज ठीक न बनना और शरीरमें रक्तकी कमी।

३. अण्ड फलवाहिनी नली और गर्भाशयका रोगयुक्त होना। इसके अनेक लक्षण हैं।

१. सुस्ती, सरदर्द, चेहरेपर रूखापन, थोड़े परिश्रममें थकावट, छातीमें दर्द पेटमें ऐंठन और आँखोंमें जलन।

स्त्रियाँ इसे सामान्य रोग समझती हैं। प्रारम्भमें तो कुछ नही, परन्तु रोग बढ़नेपर बड़ी कठिनाई पडती है॥

इस प्रकार रजोधर्मके अनेक रोगोंसे स्त्रियोंको अत्यन्त कष्ट होता है। अतएव ऋतुधर्ममें जैसे ही कुछ विकार उत्पन्न हो तुरन्त उपाय करना चाहिये।

(१२) रजस्वलाके कर्तव्य।

स्त्रीका रजस्वला होना प्राकृतिक है। जिस प्रकार किसान-

को खेतीके लिये समय पाकर उत्तम खेत बनाना पड़ताहै,उसी प्रकार स्त्रियोंको ऋतुकालमें अपनेको सुयोग्य बनाना पड़ता है। जिस खेतको किसानने नहीं कमाया, जिसकी कुछ परवाह नहीं की, उस खेतसे उत्तम फसिल पैदा करनेकी आशा करना मूर्खता नहीं, तो और क्या है ? इसी प्रकार जिन स्त्रियोंने ऋतु-कालमें अपनेको सुयोग्य नहीं बनाया, उनका उत्तम सन्तानकी इच्छा करना भी व्यर्थ है। जिस प्रकार खेतके भले बुरे होनेका भार किसानकी मेहनतपर है, इसी तरह स्त्रियोंका अपने लिये सुयोग्य बना लेना उनके कर्तव्योंपर निर्भर है।

यदि खेत उत्तम है, तो खेती भी मनमानी तैयार की जा सकती है, परन्तु निकम्मे खेतमें घरकी पूँजी (बीज)का घाटा ही रहता है। इसलिये भावी माताओंको ऋतुकालमें अपने कर्तव्योंसे न चूकना चाहिये।

सन्तानके लिये माताका कर्तव्य रजो-दर्शनसे ही प्रारम्भ हो जाता है। सबसे पहला काम तो यह है कि रजवती होते ही उसे एकान्तवास करना चाहिये। यह हमारे देशकी पुरानी प्रथा है। इसका मतलब यह है कि—

रजोदर्शनके दिनोंमें माताका जैसा चित्त, चरित्र और व्यव-हार होता है, उसी गुण-दोषके अनुसार सन्तान उत्पन्न होती है।
(शं० क०)

अलग रहनेसे चित्त स्थिर रहता है, किसी तरहका विकार हृदयमें नहीं आता।

माताका हृदय एक तसवीर खींचनेवाले यंत्रके समान है। जैसे यंत्रकी डिब्बी हटाते ही उसके सामनेवाली चीजोंका अक्स शीशेपर आ जाता है, इसी प्रकार रजोदर्शनके समय माताके चित्त, चरित्र और व्यवहारसे हृदयपर पडे हुए गुण-

दोष सन्तानमें आ जाते हैं। इसी लिये एकान्त-वासकी विधि कही गयी है। ऐसे समयमें स्त्रियाँ भोजनका ज़रा भी विचार नहीं करतीं। पुरानी रीतिके अनुसार वासी भोजन करती हैं, परन्तु यह आलस्य पैदा करता है। गरम भोजनसे रजवाहिनी नलियोंमें गरमी पहुँचती है, जिससे अधिक रज निकलनेका भय रहता है। अतएव ताज़ा भोजन ठंढा करके खाना चाहिये। खट्टा, कसैला, वादी, चरपरा और तेलसे बना हुआ भोजन हानि पहुचाता है। इस लिये वैद्यकका मत है कि मीठा और जल्दी पचनेवाला भोजन करना उत्तम है। (शा० कु०)

रजवतीको सिवा एकान्त-वासके और कुछ न करना चाहिये, क्योंकि वैद्यकका मत है कि "ऋतु समयमें दिनमें सोनेसे बहुत सोने वाली, काजल लगानेसे अंधी, रोनेसे नेत्र विकारवाली, स्नान करने, उबटन और चन्दन लगानेसे दुःखी, तेल लगानेसे कुष्ठी, नाखून काटनेसे खराब नाखूनोंवाली, दौड़कर चलनेसे चंचल, हँसनेसे काले दांतों और काले ओठ तालू तथा काली जीभ वाली, बहुत बोलनेसे बकवादी, तेज आवाज़ सुननेसे बहिरी, बालोंमें कंघी करनेसे गंज रोगवाली, अधिक हवा खाने और कष्ट करनेसे मतवाली सन्तान उत्पन्न होती है।"

(सु० शा० अ० २ श्लो० २३-२४)

एक विद्वानकी राय है कि अश्लील गीत गानोंसे बुरी पुस्तकोंके पढ़ने, हँसी दिल्लगी, मज़ाक और बेहूदी बातें बकनेसे निर्लज्ज, परिश्रम करनेसे रोगी, सीनेसे नेत्र विकारवाली, पुरुष संयोगसे अनेक रोगयुक्त यदि कन्या हो तो वेश्या या गुप्त व्यभिचार वाली और यदि पुत्र हो तो वेश्याओंसे अटल प्रेम रखनेवाला बदचलन, शृङ्गार करनेसे कामी, व्यभिचारी और शौकीन, झूठ बोलनेसे पाखंडी, क्रोध करनेसे दुष्ट, मांस खानेसे पापी, शराब

गंनिल मनवाली, उपवास करनेसे पेटके रोगवाली सन्तान उत्पन्न होती है।

(रतिशास्त्र)

यह विचार केवल रजोधर्मके तीन दिनोंके लिये ही है। इनका मतलब यह है कि रजवतीके हृदयमें किसी प्रकारका विकार उत्पन्न न होना चाहिये।

धर्मशास्त्रका मत है कि रजवती पहले दिन चांडाली दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी, तीसरे दिन रजकी (धोबिन) के समान अशुद्ध रहकर चौथे दिन शुद्ध होती है।

(ध० संग्रह)

यह बात विचार करने योग्य है कि जो स्त्री आज ब्राह्मणी है, वह कल रजस्वला होनेपर चांडाली हो जावे। नहीं, धर्म प्रकरणमें यह बात इस कारण ले ली गयी है कि धर्मसमझकर भी रजवती किसीको स्पर्श न करे। इसी कारण तीन दिन अलग रहने और किसीको न छूनेकी विधि कही गयी है। सबसे बड़ा लाभ तो किसीके स्पर्श न करनेसे यह है कि रजवतीमें किसी प्रकारकी छूतका असर नहीं पहुँचता। परन्तु आजकल हानि भी बहुत बड़ी होती है। कड़ाकेका जाड़ा पड़ रहा है. रातका समय है, बहुजी एक पतली धोतीमें बैठी गिड़गिड़ा रही है। आराम करनेके लिये खरेडी चारपाई या तख्ता, बिछाने को चटाई और ओढनेको एक पुराना कम्बल बहुत है। धर्मकी प्रेमियों और छूत अछूत पर जान देनेवाली स्त्रियोंकी क्या यही धर्मकी मर्य्यादा है? याद रहे कि शरीरहीसे धर्म होता है। जब शरीर ही नहीं, तो धर्म कहाँसे होगा? इसलिये धर्मशास्त्रने शरीरकी रक्षा करना ही परम धर्म माना है। ऐसी दशामें रजवतीको यदि सर्दी लग जावे तो अण्डे, फलवाहिनी नली और गर्भाशयमें अनेक रोग लिपट जाते हैं। परिणाम यह होता है स्त्रियाँ और बच्चोंसे माताएं सदाके लिये विना हो

जाती हैं। अतएव एक विद्वानकी राय है कि रजवतीको एकांत-वास करते हुए आरामके साथ तीन दिन हलका भोजन करके रहना चाहिये। (रतिशास्त्र)

(१३) रजस्नाताके कर्तव्य।

स्नान करके स्त्री जब शुद्ध होती है, तो उस समयमें ईश्वरने स्त्रियोंकी आँखोंमें एक ऐसी शक्ति दी है कि वह जैसे स्त्री वा पुरुषका दर्शन करती है उसके हृदयपर उसका ऐसा प्रभाव पड़ता है कि जिससे उसीके अनुसार सन्तान उत्पन्न होती है। वैद्यकका मत है कि स्नान करके नये कपड़े पहन, मंगल पाठ और स्वस्तिवाचन (यह वैदिक कर्म है)पूर्वक पतिका दर्शन करना चाहिये। इस लिये कि उसीके समान सन्तान हो। (सु० श० अ० २ श्लो० ३३) परन्तु यहाँ पर यह शंका होती है कि यदि पति कुरूप और अँगहीन हो, तो उसके दर्शनसे उत्तम सन्तान कैसे हो सकती है?

इस विषयमें दूसरे आचार्य्यका यह मत है कि पति अथवा प्रियजन, देवर वा पुत्र इत्यादिके दर्शन करने चाहियें।

(भा० ग० श्लो० ११)

कोई आचार्य्य पतिके कुरूप होनेपर, देवर, पुत्र या ब्राह्मण का बालक, इनमें जो रूपवान हो उनके अथवा देवताकी सुन्दर प्रतिमाके दर्शन करनेका विधान करते हैं। (श० क०)

प्रायः लोग इस बातपर विश्वास नहीं करते परन्तु जहाँ तक यह बात देखी गई है, सत्य है।

(१) मेरे एक मित्रके साले अपनी बहनसे मिलने आये। वह रजवती थी और चौथा दिन था। स्नान करके स्त्री अपने भाईसे तुरन्त ही मिली। दैव-संयोग उसी स्नानसे

गर्भ रह गया। लड़का अपने मामाकी शकल सूरतका उत्पन्न हुआ।

(२) एक सज्जनके यहां एक काला कलूटा कहार नौकर था। भाग्यवश वहूजीने स्नान करके कहारके ही दर्शन पाये। उसी रजोदर्शनसे गर्भ रह गया। पुत्र उत्पन्न हुआ, जो ठीक उसी कहारके रँग रूपका था।

इन प्रत्यक्ष प्रमाणोंसे सिद्ध है कि इस विषयमें जो कुछ शास्त्रका मत है वह अक्षर अक्षर सत्य है। अतएव स्नान करके अत्यन्त सावधानीके साथ पति अथवा देवर, पुत्र इत्यादि जो प्रिय और सुन्दर हो, उसीका दर्शन करना चाहिये।

(१४) संयोगमें त्याज्य स्त्री और पुरुष।

संयोग कोई मामूली वात नहीं है। यह किसी समय बहुत वडे विचार और विधि-विधानके साथ किया जाता था. परन्तु आजकल इसकी दशा शोचनीय हो रही है। सवसे वड़ा कारण तो स्त्री और पुरुषोंकी अयोग्यता है। प्रायः देखा जाता कि स्त्री अथवा पुरुष रोगी हैं या भोजन किये थोड़ी ही देर हुई है, ऐसी दशाओंमें संयोग कर लिया जाता है। ऐसी असावधानियोंसे अनेक हानियाँ होती हैं कि जिनके अनेक कारण हैं। वैद्यकका मत है कि—

(१) रजस्वला होनेके पहले और उसके पीछे भी कम अवस्था वाली स्त्रीसे संयोग न करना चाहि। क्योंकि ऐसे समयों-में भीतरी अवयव पुष्ट नहीं होते, जिससे आगे होनेवाली सन्तान उत्पन्न होनेमें अनेक वाधाएँ पडती हैं। (शा० क०)

(२) जिन्होंने अधिक भोजन किया हो, जो तुरन्त ही खा चुके हों, जिनका भोजन पचा न हो, प्यास लगी हो, जो शोक

चिन्तामें व्याकुल हों, जो बूढ़े या बूढ़ी हो, जो रोगी हों, जिनको पाखाने पेशावकी हाजत हो, जो रजवती और पुरुषसे उमरमें बड़ी, तपेदिक, स्वास प्रमेह, प्रदर, गरमी, सूजाक का रोगी हो, जिनके कामदेव न जगा हो, शृङ्गार-रहित, नशेवाज, उन्मत्त और अति दुर्बल हो, उनसे संयोग न करना चाहिये। (ग० क०)

(२) जो अपनेको प्रिय न हो, जिसके देखनेसे चित्त विगड़ जाय, जिससे अनवन रहें, विरक्त, जो गुरुके खानदानकी हो दुष्ट योनिवाली और वदचलन हो, इनसे संयोग न करना चाहिये। (श० क०)

इस प्रकारके स्त्री और पुरुषोंसे संयोग न होना चाहिये; क्योंकि इससे अनेक रोग उत्पन्न होकर हानि पहुँचाते हैं।

(१५) वन्ध्या रोग।

हमारे देशमें वन्ध्याओंके लिये लोगोंका अनोखा विचार है। जहाँ चार छः वर्ष बच्चा न हुआ तुरन्त स्त्रीको वन्ध्या मान बैठते हैं और भाग्य भगवान्‌के भरोसे पड़े रहकर कुछ यत्न नहीं करते वैद्यकमें जितनी वन्ध्याओंका जिक्र किया गया है, उनमेंसे कुछ ही ऐसी है कि जिनके सन्तान नहीं हो सकती, किन्तु औषधि करनेपर वन्ध्याएँ निरोग हो सकती हैं। प्रायः लोग यही समझते हैं कि वन्ध्याएँ आठ प्रकार की होती हैं और यही वात प्रसिद्ध भी है, परन्तु और दूसरे ग्रन्थोंके देखनेसे पता चलता है कि वन्ध्याएँ अठारह प्रकारकी होतीं हैं। इनकी व्याख्या पृथक् पृथक् की जाती है। [रतिशास्त्र]

(१) जन्मवन्ध्या—उसको कहते हैं जो गर्भ ही धारण न कर सके। जाँच करनेपर मालूम हुआ है कि ऐसी स्त्रियोंके

गर्भाशय ही नहीं होता । अतएव इसका इलाज नहीं हो सकता । क्योंकि इस रोग का सामान जन्म ही से रहता है । इस को पण्डी भी कहते हैं ।

(२) काकवन्ध्या—उसको कहते हैं कि जिसके एक ही सन्तान उत्पन्न होकर रह जाय, दूसरी न हो । जाँच करने पर यह मालूम हुआ है कि ऐसी स्त्रियोंमें पहला बच्चा होनेके समय गर्भाशय नष्ट हो जाता है । इस कारण दूसरी सन्तान नहीं होती । इसमें औषधि करना व्यर्थ है ।

(३) मृतवत्सा—उसको कहते हैं कि जिसके सन्तान उत्पन्न होती हो, परन्तु मर जाया करे । इस विषयमें धर्म-शास्त्रने यह माना है कि स्त्री पूर्व जन्मके पापोंसे मृतवत्सा होती है । यह बात गीता और वेदान्त-शास्त्रसे सिद्ध है कि मनुष्यको पूर्वजन्मका कर्म इस जन्ममें अवश्य भोगना पडता है । परन्तु इस विषयमें डाक्टरोंका मत यह है कि जिस स्त्रीके बच्चे वारंवार मर जाते हैं, उसके दूध में एक प्रकारका विष होता है । मेरे एक मित्रके तीन बच्चे मर गए । चौथेको पैदा होते ही गायका दूध दिया गया, वह जिन्दा है; परन्तु पाचवाँ गायका दूध पिलाने पर भी मर गया । इसमें औषधि करना व्यर्थ है ।

(४) गर्भश्रावी—उसको कहते हैं कि जिसके गर्भ धारण होकर गिर जाया करे । जाँच करनेसे मालूम हुआ है कि यह रोग गर्भाशय के निकम्मे होनेसे होता है । यदि गर्भाशयमें थोड़ा विकार हो तो इसकी औषधि हो सकती है, परन्तु रोग अधिक होनेपर औषधि भी व्यर्थ होती है ।

धर्म-शास्त्रने इस रोगको भी पूर्व जन्मके पापोंका फल माना है ।

(५) गलद्गर्भा—उसको कहते हैं कि जिसके गर्भ रहकर गल जावे और बढ़ न सके। इस विषयमें जाँच करने से मालूम हुआ है कि यह रोग गर्भाशयके विकार से होता है। खास कर उस स्त्री को कि जिसको 'सरतान रहम' अर्थात् गर्भाशय में कीड़े पैदा हो गए हों। 'सरतान रहमका' मत हकीमोंका है अथवा उस स्त्री को होता है, जिस स्त्री की योनि अचरणा हो। अचरणा योनि उसको कहते है कि जिस में साफ़ न करने के कारण छोटे छोटे कीडे पड गए हों और खुजली उत्पन्न होती हो। (च० चि० अ० ३७ श्लो० ११) ऐसे रोगों के होने पर गर्भाशय नष्ट होकर गर्भ गलकर गिर जाया करता है। इस रोग का दूसरा कारण गर्भाशयकी गर्मी है। गर्भाशय की चढ़ी हुई गर्मी गर्भ को गला देती है। तीसरा कारण अत्यन्त बढ़ा हुआ गर्मी और सूजाक का प्रकोप है कि जिस से बच्चे का रक्त बिगड़ जाता है और गल कर गिर पड़ता है। बढ़े हुए कारणोंमें औषधि व्यर्थ होती है।

(६) कन्याप्रसूता—उसको कहते हैं कि जिस के कन्याएँ ही उत्पन्न हों। जाँच करने से मालूम हुआ है ऐसी स्त्रियाँ वही होती हैं कि जिनके दहिने ओर का अण्ड नहीं होता या निकम्मा हो जाता है। क्यों कि स्त्री के दहिने अण्ड से निकले हुए रज द्वारा पुत्र होता है। जब दहिना अण्ड ही नहीं है तो पुत्र हो कैसे? अतएव ऐसी दशा में भी औषधि व्यर्थ है।

(७) मूढगर्भा—उसको कहते हैं कि गर्भ रह कर उस की वृद्धि न हो, वैसा ही रह जावे और दूसरा गर्भ भी न रहे। मूढगर्भ वह है कि जिस में बच्चे के स्थान में माँस का लोथड़ा हो। इसका कारण यह है कि जब

चौथे दिन स्नान करके स्त्री स्वप्न में पुरुष संयोग करे या दो स्त्रियाँ आपस में स्त्री पुरुष की भाँति संयोग करें तो एककी योनि से वीर्य निकल कर जब दूसरी की योनि में पहुच जाय तो वह रज से मिलकर गर्भ में पिंड बना देता है। इसे गर्भाका माँस-पिंड कहते हैं।

(सु० शा० अ० २ श्लोक ५१ से ५३)

इस विषय में एक विद्वान् की राय है कि मृतगर्भ रहने पर फिर असली गर्भ नहीं रहता। (शा० क०)

डाक्टर लोग इसको (False pregnency) कहते हैं और इसका कारण रज-विकार मानते हैं। डाक्टरी मत के अनुसार उपचार हो सकता है।

(८) रजोहीना—उसको कहते हैं कि जो रजस्वला ही न हो। इस विषय में जाँच करने से मालूम हुआ है कि ऐसी स्त्रियोंके गर्भ-अण्ड ही नहीं होते। ऐसी दशा में सन्तान भला कैसे हो सकती है। अतएव औषधि करना व्यर्थ है।

(९) मेदी—उस को कहते हैं कि जिसके शरीर में चरबी अत्यन्त बढ़ गई हो। ऐसी स्त्री के सन्तान इस कारण नहीं हो सकती कि चरबी बढ़ने से गर्भाशय निकम्मा हो जाता है। चरबी गर्भकोष को बिगाड़ देती है और मुख सकुचित हो जाता है। इसकी औषधि हो सकती है।

(१०) अतिस्थूला—उसको कहते हैं जो अत्यन्त मोटी हो। ऐसी स्त्री के सन्तान इस कारण नहीं होती कि उनका गर्भअण्ड बिगड़ जाताहै और मोटाई के कारण लिंगेन्द्रिय गर्भाशय के मुख तक न पहुँच कर बीच में ही रह जाती है। अतएव वीर्य भी वहाँ तक नहीं पहुँच सकता। इसकी औषधि हो सकती है।

(११) नष्ट कोष्टी—उसको कहते हैं कि जिसका कोष्ट अर्थात्

गर्भाशय नष्ट हो गया हो और इस कारण गर्भ न रहता हो। इसके तीन भेद हैं—

(१) स्त्री का थोड़ी अवस्था में पुरुष से संयोग हो जाना। ऐसा होने पर गर्भाशय नष्ट और धातु क्षीण हो जाती है। एक विद्वान् की राय है ऐसा होने पर गर्भाशय दग्ध हो जाता है। (श० क०)

इसमें सन्देह नहीं कि थोड़ी अवस्था में संयोग हो जाने से गर्भाशय और गर्भअण्ड इतने निर्बल और निकम्मे होजाते हैं कि वे अपना काम नहीं कर सकते। इसकी औषधि हो सकती है, परन्तु इसे लग भग असाध्य ही समझना चाहिये।

२. यह कि अनेक रोगोंके कारण गर्भाशय का नष्ट हो जाना, इसमें बहुत से रोगों की औषधि हो सकती है और बहुतों की नहीं।

३. योनि-रोग कि जिससे गर्भाशय नष्ट हो जाता है। इसमें भी कुछ रोगों की औषधि हो सकती है, कुछ की नहीं। जब योनिरोग से गर्भाशय नष्ट हुआ हो, तो योनि और गर्भाशय दोनों की चिकित्सा होनी चाहिये।

(१२) बलक्षयी—उसको कहते हैं कि जिसको निर्बलताके कारण गर्भ न रहता हो। ऐसी स्त्रियाँ वही होती हैं कि जो अत्यन्त मैथुनप्रिय हैं और जिनके शरीर में रक्त नहीं है। इनकी औषधि हो सकती है, परन्तु बहुत कठिनाई से।

(१३) प्राक्संयोगिता—उसको कहते हैं कि रजस्वला होने के पहले ही जिसका पुरुष से संयोग हो गया हो। ऐसी स्त्री का गर्भाशय दग्ध होकर सिकुड़ जाता है और फिर गर्भ नहीं रहता। इसी कारण सुश्रुतने लिखा है कि

सोलह वर्ष से पहले पुरुष से संयोग न होना चाहिये। ऐसी दशा में औषधियाँ प्रायः व्यर्थ होती हैं, परन्तु डाक्टर लोग साहस रखते हैं।

(१४) वामिनी—उसको कहते हैं कि जिसके गर्भाशय में पहुंचा हुआ वीर्य छः या सात दिनों में बाहर निकल आवे। यह रोग गर्भाशय के विकार से होता है, खास कर उस समय में जब कि गर्भाशय का मुख चौड़ा होगया हो, अथवा गर्भाशय के दूसरे रोगों से। इसकी औषधि हो सकती है।

(१५) सूचीमुखी—उसको कहते हैं कि जिसके गर्भाशयका मुख बहुत छोटा हो, जिससे वीर्य भीतर न जा सके। यह रोग जन्म से होता है। इसकी औषधि करना व्यर्थ है।

(१६) रक्तस्रावी—उसको कहतेहैं कि जिसके हमेशा रक्तगिरा करता हो। ऐसी दशामें गर्भ नहीं रहता। यह कई प्रकार से होता है।

१. रक्त और पित्त के बिगड़ जाने से।
२. छोटी अवस्थावाली स्त्रीका पूरे जवान पुरुष के समागमके कारण गर्भाशय और फलवाहिनी नली की किसी रगके फट जानेसे।

यह रोग कठिनाई से अच्छा हो सकता है परन्तु अच्छे होने पर सन्तान होने की बावत ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता। होना और न होना दोनों सम्भव है। औषधि का प्रयोग कठिन ही है।

(१७) स्रावी—उसको कहते हैं कि जिसके योनिसे सफेद या रंगतदार पतला या लुवाबदार पदार्थ निकला करे यह कई कारणों से होता है।

१. वात, पित्त और कफके प्रकोपसे।

२. प्रदर रोगसे।

३. गर्भाशयके अनेक रोगोसे।

इसकी औषधि हो सकती है, परन्तु कब, जबकि केवल स्राव ही हो। जब गर्भाशयमें मस्से और गाँठ सबन्धी रोग होगा, तब प्रारम्भमें कुछ कठिनाई और रोग बढ़नेमें अत्यन्त कठिनता होगी। इसे प्रायः असाध्य ही जानना चाहिये।

(१८) शुष्की—इस प्रकारकी वन्ध्याके दो भेद होते है।

१. वह कि जिसके गर्भाशयमे वीर्य्य पहुँचकर जल जावे। ऐसी दशामें रज निकलनेमे अत्यन्त जलन जान पडती है। रज काला और गाढ़ा होता है। गर्मी बहुत मालूम होती है। यह रोग उस समय होता है जब कि गर्भाशयकी गर्मी अत्यन्त बढ़ गई हो। इसकी औषधि हो सकती है।

२. वह कि जब गर्भाशयमें वीर्य्य सूख जावे। ऐसी दशामें गर्मी अधिक जान पड़ती है। योनि और गर्भाशय सूखे रहते हैं। जलन और गर्मी अधिक होती है। यह भी अत्यन्त गर्मीके बढ़नेसे होता है। इसकी औषधि हो सकती है।

इन प्रकार अठारह तरहकी वन्ध्याओंमे सबको पूर्ण वन्ध्या न समझना चाहिये। जिनका वन्ध्यत्व औषधिसे छूट सकता है, उनके लिये औषधि अवश्य करनी चाहिये। विद्वान् लोग प्रायः उन्हीं स्त्रियोंको वन्ध्या मानते हैं कि जिनके गर्भ उत्पन्न करनेका अवयव ही न हो। इस प्रकार जाँच करके यत्न करना आवश्यक है।

(१६) मेद-वृद्धि अर्थात् शरीरमें चरबीका बढ़ना।

शरीरमें चर्बीके बढनेको मेद वृद्धि कहते हैं। यह रोग स्त्रियोंको विशेष रीतिसे होता है, खासकर उनको जो बैठी रहती हैं। और कुछ काम नहीं करतीं या जिन्हें उत्तमोत्तम भोजन मिलता है। वैद्यकका मत है कि दिनमें सोनेसे, कफ उत्पन्न करनेवाले चिकने मीठे पदार्थों के सेवन करनेसे, भोजन-का रस मधुर होकर मेदको बढाता है। बढती हुई चर्बीका असर शरीरमें हर जगह होता है। इस कारण रसवाही शिराओंका रास्ता बंद हो जाता है। ऐसी दशामें हड्डी, मज्जा और वीर्य पुष्ट न होकर केवल चर्बी ही बढती है। अतएव मनुष्य सुकुमार और आलसी होकर सब कामोंमें पौरुषहीन हो जाता है।

(श० क०)

स्वाँस रोग, प्यास, निद्रा, आलस्य, भूख, पसीना और दुर्गंध ये बातें चर्बी बढे हुए मनुष्यमें अवश्य होती हैं। प्रायः देखा गया है कि ऐसे रोगी खाते बहुत हैं। शरीरके सब स्थानों में तो चर्बी बढती ही है, परन्तु पेट, नितम्ब, छाती और पिंड-लियोंमें अधिक, किन्तु ताकत कम हो जाती है। स्त्रियोंमें नितम्ब और पेडूपर चर्बीका जमाव अधिक रहता है। उनके गर्भाशयका मुँह मोटा पड जाता है और चर्बीसे मिश्रित कोई पदार्थ उस जगह रहता है। चर्बीके कारण योनि संकुचित अर्थात् सकरी पड जाती है ऐसी स्त्रियोंमें खून ठीक ठीक नहीं बनता। यही कारण है कि सबसे पहले रजका बिगाड होता है। जब खूब अच्छी तरह चर्बी बदनमें छा जाती है, तो

रज वन्द हो जाता है। कभी कभी निकल भी आता है। कभी दो दो तीन तीन मास तक नहीं होता। अतएव गर्भ का सन्देह हो जाता है। इसका कारण गर्भाशय के मुखकी संकीर्णता भी है। प्रायः ऐसी दशामें गर्भाशय में रक्त जम भी जाता है, जिस से अनेक रोग उत्पन्न होजाते हैं। गर्भाशय में रज-एकत्र होने और चर्बी के प्रकोप से दूषित होने के कारण रज-जन्तुओं को हानि पहुँचती है। ऐसे स्त्री और पुरुष संयोग नही कर सकते। मैथुन में इनका दम उखड़ जाता है, देह शिथिल हो जाती है, पसीना निकलने लगता है, घबराहट प्रारम्भ हो जाती है, स्वाँस चलने लगता है, प्यास लग आती है और उठना बैठना कठिन हो जाता है।

लोग इसको अच्छा समझते हैं कि शरीर मोटा रहे, परन्तु यह बहुत बुरा रोग है। ऐसे स्त्री पुरुष कि जिनका शरीर चर्बी का स्थान हो रहा है, कभी सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकते। क्यों कि गर्भाशय चर्बी के विकार से चिकना होने पर वीर्य ग्रहण नहीं करता और पुरुष के मोटे होने पर इन्द्रिय निश्चित स्थान पर वीर्य्य नही पहुंचा सकती। दोनों में मेद-वृद्धि होनेसे सन्तान नही होती, लेकिन उन मोटे स्त्री पुरुषों से सन्तान होती है कि जिनका शरीर रक्त से मोटा होगया है और रजोधर्म्म में विगाड़ और गर्भाशय में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ है। (रतिशास्त्र)

मोटापन प्रारम्भ होते ही यह निश्चय करना चाहिये कि शरीर रक्त के कारण मोटा हो रहा है या चर्बी से। यदि चर्बी से हो रहा हो, तो ऐसे पदार्थ, जो चर्बी बढ़ाने में सहायक हों, तुरन्त छोड़ देने चाहिये। ऐसी अवस्था में किसी प्रकार का परिश्रम प्रारम्भ करके आराम छोड़ देना परम हितकर है।

(१७) योनिरोग।

योनि उस स्थान को कहते हैं कि जहां से बच्चा निकलता है और यही संयोग स्थान है। इसका और गर्भाशयका बहुत बड़ा संबन्ध है। इसके रोगों से गर्भाशय में और गर्भाशय के रोगोंसे इसमें अनेक रोग उत्पन्न होजाते हैं। योनि कई प्रकार की होती है। इस के बिगडने के मुख्य चार कारण होते हैं। (१) बुरा भोजन, (२) दूषित रज, (३) वीर्य्य दोष, (४) दैवका प्रकोप। इनके अनेक भेद हैं। (शा० क०)

१—अनेक प्रकार की बिगड़ी हुई योनि के भेद।

(च० चि० अ० ३० श्लोक ७ से २७ तक)

(१) वातल योनि—उस को कहते हैं कि जिसमे वायु पैदा करने वाले आहार-विहार और चेष्टा से वायु बिगड़कर योनिमें सुई छेदने की सी पीड़ा और चींटी चलनेका सा मालूम हो। कर्कशता, सुन्न, आयाम और दूसरे वायु से पैदा होने वाले रोग हों तथा वायुके कारण थोड़ा सा पतला, रूखा, आवाज़ करता हुआ झागदार रक्त निकला करे।

(२) पित्तल योनि उसको कहते हैं कि जिस में खटाई, नमक, खार इत्यादि मिले पदार्थों को अधिक खाने से पित्त द्वारा योनिरोग होता है। ऐसी योनिमे दाह, पाक ज्वर-युक्त गर्मी से व्याप्त नीला, पीला और काला खून निकलता है। इसमें मुर्दे कीसी अधिक दुर्गन्ध आती है।

(३) श्लैष्मिक योनि—उसको कहते हैं कि जिस मे अभिष्यन्दी आहार खाने से कफ़ बढ़ कर स्त्री की योनिमें कफज़ रोग उत्पन्न करता है। इसके कारण योनि में शीतलता, चिप-

चिपापन, खुजली, दर्द और पाण्डुता होती है और उससे पीला, गिलगिला रक्त निकलता रहता है।

(४) सन्निपातिकयोनि—उसको कहते हैं कि जिसमें वात, पित्त और कफ पैदा करनेवाले आहारके सेवनसे योनि और गर्भाशयमें भिन्न भिन्न वायु कुपित होकर अपने अपने लक्षण उत्पन्न करें और उन रोगोंके होनेसे दाह, शूल और पीड़ा अधिक हो। योनिसे सफेद और गिलगिला रज निकला करे।

(५) रक्तपित्तज योनि—उसको कहते हैं कि रक्त पित्त उत्पन्न करनेवाले आहारसे योनि दूषित होकर रक्त अधिक निकलने लगता है और वीर्य ग्रहण करने पर भी सन्तान नहीं होती।

(६) अरजस्का योनि—उसको कहते हैं कि योनि और गर्भाशयमें रहा हुआ पित्त जब रक्तको बिगाड़ देता है तब रजस्वला होना बन्द हो जाता है और स्त्री अत्यन्त दुर्बल हो जाती है।

(७) अचरणा योनि—उसको कहते हैं कि जिसमें साफ न रखनेके कारण छोटे छोटे कीड़े पड़ जावें और खुजलीके कारण पुरुष-सयोगकी बहुत इच्छा हो।

(८) अतिचरणा योनि—उसको कहते हैं जो अति मैथुन करनेके कारण वायु बिगड़कर योनिमें सूजन, सुन्न और दर्द उत्पन्न कर देती है।

(९) प्राक्चरणा योनि—उसको कहते हैं कि थोड़ी अवस्थाकी स्त्रीके साथ सयोग करनेसे स्त्रीकी पीठ. जाँघ, ऊरू और वक्षमें दर्द पैदाकर वायु योनिको दूषित कर देती है। (इसी कारण अत्यन्त कम अवस्थामें संयोग मना किया

गया है, सोलह वर्षसे कम अवस्थावाली स्त्रीसे संयोग न करना चाहिये ।)

(१०) उपप्लुता योनि—उसको कहते हैं जो कफ पैदा करनेवाले अधिक आहारके खाने तथा कै स्वाँसादिको रोकनेसे दूषित वायु कफको योनिमें पहुँचाकर योनिको दूषित कर देती है । उस समय योनिमें सूई गड़ानेके समान दर्द होता है । पीला वा सफेद रंगका स्राव होता है या सफेद कफ सरीखा स्राव निकलता है ।

(११) परिप्लुता योनि—उसको कहते हैं जब पित्तप्रकृतिवाली स्त्री संयोगके समय छींक और डकारको रोक लेवे तो पित्तके साथ वायु बिगड़कर स्त्रीकी योनि बिगड़ जाती है । उस समय योनिसे स्पर्श नहीं किया जाता । दर्दके साथ नीले, पीले रंगका स्राव होने लगता है । स्त्रीकी कमर, पीठ और वक्षस्थलमें दर्द और ज्वर होता है ।

(१२) उदावृत्ता योनि—उसको कहते हैं जो अधोवेग अर्थात् नीचेकी हवाको रोकनेसे हो । वायुके कारण योनिका वेग ऊपरको होता है, इससे कष्टके साथ रज निकलता है ।

(१३) कर्णिनी योनि—उसको कहते हैं कि छोटी उम्रमें गर्भ रह जानेसे आच्छादित वायु, कफ और रक्तसे मिली हुई योनिमें एक तरहकी कर्णिका उत्पन्न कर देती है । इससे रक्तका रास्ता रुक जाता है ।

(१४) पुत्रघ्नी योनि—उसको कहते हैं कि जब गर्भ स्त्रीके दूषित रक्तसे उत्पन्न होता है । तब वायु सूखेपनके कारण उस गर्भको बार बार नष्ट कर दिया करती है ।

(१५) अन्तर्वर्तिनी योनि—उसको कहते हैं कि जिस योनिमें रक्तके

निकलनेपर तुरंत चैन पड़ जावे। रज ऊपर जानेसे इसे उदावर्तिनी योनि कहते हैं।

(१६) अंतर्मुखी योनि—उसको कहते हैं जब खूब भोजन करनेके पीछे स्त्री उलटे और टेढ़े इत्यादि होकर संयोग करे तो अन्दरकी वायु योनिमें आकर योनि मुखको टेढ़ा कर देती है। इससे मांस और हड्डियोंमें पीड़ा होती है। ऐसे समयमें स्त्रीके साथ मैथुन नहीं किया जा सकता।

(१७) सूचीमुखी योनि—उसको कहते हैं कि माताके दोषके कारण वायु सूखापन लेकर गर्भकी कन्याके योनिको दूषित करके योनिद्वारको छोटा कर देती है।

(१८) शुष्का योनि—उसको कहते हैं कि मैथुन समयमें जब स्त्री पाखाना और पेशाबके वेगोंको रोक लेती है तो उसके मल और मूत्रके रुकनेसे योनि सूखी हो जाती है।

(१९) वामिनी योनि—उसको कहते हैं कि गर्भाशयमें पहुंचा हुआ वीर्य्य दर्दके साथ या बिना दर्दके ही छः या सात दिनके अन्दर गर्भाशयसे निकल आता है।

(२०) षण्ढी—उसको कहते हैं कि जिसके बीज-दोषके कारण गर्भस्थ कन्याका गर्भाशय नष्ट हो जावे। उसको पुरुष-समागमकी इच्छा नहीं होती और न छाती निकलती है। ऐसी स्त्री हिजड़ी होती है। इसका इलाज नहीं हो सकता।

(२१) महा योनि—उसको कहते हैं कि दुःख पहुँचानेवाली टूटी चारपाई पर सोकर उलटी रीतिसे संयोग करनेपर वायु बिगड़ कर गर्भाशय और योनि मुखको रोक देती है। इससे योनि असंवृत्तमुखा, दर्दयुक्त रूखा और झाग दार रज निकलनेवाली होती है और योनिमुखका मांस ऊंचा

उठ जाता है। ऐसी स्त्रीके जोड और पेड़में शूल होने लगता है।

इन इक्कीस प्रकारके योनि-रोगो के उपद्रवोंसे योनि वीर्य्यको ग्रहण नहीं करती और न ऐसी स्त्रीको गर्भ ही रहता है, अनेक प्रकारके रोग, गुल्म, अर्श और प्रदर इत्यादि उत्पन्न होते हैं। इन रोगोंमें हमेशा स्त्रीको वायुका दोष होता है। इन इक्कीस प्रकारके योनि-रोगोंमें वातज, पित्तज कफज और त्रिदोषज इनमें मामूली दोष होता है। रक्त पित्तज और अरजस्का पित्तजन्य है, परिप्लुता और वामिनी वातपित्तात्मक, कर्णिनी और उपप्लुता वात-कफज और वाकी सव वातज हैं। वातादि दोष सारे रोगोंमें अपने अपने लक्षण प्रकाश करके जोड़ो उत्पन्न करते हैं।

२. बाहरी योनिकी मामूली सूजन।

इसके कई कारण हैं। (ना० क०

१ वह कारण जब कि यह रोग लड़कियोंमें हो।

१. सफाईका न होना और रोगांकी छूत पहुँचनेसे।

२. चोट लगनेसे।

२ वह कारण जब कि यह रोग जवान स्त्रियोंमें हो।

१. अतिमैथुन और सफाईका न होना।

२. प्रदर और वाहरी चोट लगने से।

३. वदबूदार चीज या छूतदार रोगोंकी छूतसे।

इस रोगमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. पीडा—जहाँ सूजन हो।

२. कमर, पेडू और जाँघमें दर्द।

३. पेशाव जलनके साथ होना।

४. मैथुनमें अत्यन्त कष्ट होता है।

५. कभी कभी जब योनिसे बदबू आती है तब सूजन में मवाद पड़ जानेका सन्देह होता है।

पीड़ाके अनुसार सूजनका अनुमान करना चाहिये। जैसी कम ज्यादा सूजन होती है कष्ट उतना ही कम ज्यादा होता है। बढ़े रोगमें गर्भ नहीं रहता।

२, योनीकी सड़न।

इसके अनेक कारण होते हैं।

१. सूजनके पक जानेपर जब छूत या गन्दगीका असर पहुंच जावे।

२. शीतला रोगके पीछे जब कि घाव हो जावे और किसी तरह की गन्दगी पहुँचे, या गरमी सूजाकके अत्यन्त प्रकोपसे।

३. बालके उखड़ जानेसे जब किसी तरह की गन्दगी पहुँचे।

४. योनिके घावमें पानी या श्वेत प्रदरके चिकने पदार्थके लगनेसे।

इसमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. जलन और दर्द।

२. योनि मुखपर यदि सड़न है तो सामनेसे साफ दिख-लाई पड़ेगी। यदि अन्दर है तो योनिके ओठोंको उलट कर देखनेसे साफ़ पता चलेगा।

३. कुछ ज्वर अवश्य आ जाता है।

यह रोग लड़कियोंमे पाया जाता है और जवान स्त्रियों को भी होता है।

योनि-कन्द।

इसके अनेक कारण हैं। (रतिशास्त्र)

१. अतिमैथुन और रजका विगाड।
२. योनिमें नाखून लगने, घाव और जखम हो जाने से।
३. वायुके विगड जानेसे।
४. पीप पड जाने और रक्तके दूषित होनेसे।

इसमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. योनिमें पीडा और भारीपन मालूम होना।
२. चलने, फिरने और उठने वैठनेमें पीड़ा होना।
३. यदि योनिकन्द रूखा, खुरखुरा और फटा हुआ मालूम हो तो वातजन्य समझना चाहिये।
४. यदि नीले फूलके समान हो और खुजली आती हो तो कफजन्य समझना चाहिये।
५ यदि उसमें दाह और काला रंग हो और ज्वर आवे तो पित्तज समझना चाहिये।
६. यदि वात, पित्त और कफ तीनोंके लक्षण मिलें तो त्रिदोषज समझना चाहिये।

यह एक विचित्र रोग है। इसमें योनिके अन्दर वड़हल के फल के समान एक गाँठ होती है। इसीको योनि-कन्द कहते हैं।

५. योनिका घाव।

इसके कई कारण हैं। (श क)

१. रज और योनिके विकारसे।
२. उपदंश और गर्भाशयके अनेक छूतदार रोगोंसे।
३. रक्तविकार और सूजनके उपद्रवोंसे।

इसमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. सुई चुभोनेके समान पीड़ा होती है।
२. घाव जल्दी बढ़ता है।
३. घाव उभरा नहीं होता, बराबर रहता है।
४. निर्बलता बढ़ जाती है और शरीर दुर्बल होता चला जाता है।

५. रक्तका बहाव बराबर जारी रहता है।

यह एक बड़ा कठिन रोग है। रक्तमें बड़ी बदबू आती है। ऐसा ज़ख्म बड़ा और दो तरहसे होता है। पहले एक दाना पड़ता है और वह फूटकर फैलने लगता है। दूसरा इस तरह होता है कि एक गाँठ सरीखी पड़कर पक जाती है और घाव फैलता चला जाता है। प्रायः काले रंगकी अधेड़ स्त्रियोंमें, जिनकी अवस्था ४० वर्षसे कुछ कमवेश हो, यह रोग अधिक होता है।

६, योनिभ्रंश।

इसके कई कारण हैं। (१० क्र०)

१. गर्भाशयके आगे टल जानेसे।
२. कूदने, दौड़ने और ऊँचे नीचे चढ़नेसे।
३. मुख या पीठके बल गिर पड़नेसे।
४. गर्भाशयके टल जानेके अनेक कारणोंसे। (इस विषयमें पहले लिख चुके हैं।)

इस रोगमें अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१. मैथुनमें अत्यन्त कष्ट।
२. लसदार पतला पदार्थ योनिसे गिरना।
३. पेशाब, पाखानेमें कष्ट होता है।
४ आगे वज़न मालूम होता है।
५. पेडूमें मरोड़के समान दर्द होता है।

योनि दो तरहसे भ्रंश होती है। आगे और पीछे। जब योनि आगेकी ओर उतरती है तब उसके साथ मूत्राशय भी उतर आता है और साथ ही साथ धातु जाने लगती है। जब योनिके पीछेका भाग उतरता है तब उसके साथ गुदाका कुछ भाग भी उतर आता है। यह दशा कठिन है।

७. योनिकी गहरी सूजन।

इसके अनेक कारण हैं। (ग० क०)

१. मूत्रके रास्तेकी सूजनसे।
२. अन्दर घाव हो जाने से।
३. सर्दी लगने और जहरीले जन्तुके काटनेसे।
४. योनि साफ़ न रहने और आस पासमें सूजन होनेसे।

इस रोगमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. खाजका होना और जलन मालूम होना।
२. पेशाब होते समय अत्यन्त कष्ट होना और चिकने पदार्थका गिरना।
३. मैथुनमें पीड़ा और कुछ ज्वरका रहना।

इस प्रकारकी गहरी सूजन दूर तक होती है। जब कभी गरमी सूजाकके कारण छूत पहुँचती है तो पाक भी हो जाता है। इसमें उमरका नियम नहीं। हर उमरमें यह रोग होता है; परन्तु खासकर उन स्त्रियोंको कि जिनके कई बच्चे हो चुके हों, या जो अत्यन्त निर्बल हों।

८. योनिकी खुजली।

इसके अनेक कारण होते हैं। (श० क०)

१. मसानेकी खुजलीकी छूतसे।
२. बाहरसे अनेक प्रकारकी छूत पहुंचनेसे।

३. रक्तके दूषित हो जानेसे।
४. योनिमें दानोंके पड़ जानेसे।
५. योनिकी गन्दगी और उपदंशके विकारसे।
६. ऋतुधर्मके विगाड़से।
७. प्रदर और मूत्राशयके शोथसे।
८. योनिके भीतर और योनि-मुखके शोथसे।
६. योनिके मुखमें छोटे छोटे कीड़ोंके पैदा हो जानेसे।
१०. योनिकी गन्दगीसे जब कि अन्दर सफाई न की जावे।
११. अन्दर मैल और पसीनेके जम जानेसे।

इस रोगमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. पहले खाज कम होती है। ज्यों ज्यों खुजलाया जाता है, जलन अधिक होती है।
२. खाजकी जलन सहन नही होती।
३. योनिका रस्ता कुछ सकरा पड़ जाता है।
४. रोग बढ़नेपर बदबू बहुत आती है।

ऐसी खुजली कफ़के विगाड़से होती है। यह योनिके अन्दर हर जगह पर हो सकती है। ज़रा ज़रासे ढदोडे भी पड़ जाते हैं।

६. योनिकी फुंसियाँ।

इसके कई कारण हैं। (श० क०)

१. रज विकार और छूतका बाहर या भोतरसे पहुंचना।
२. योनिकी गन्दगी और रक्त निकलनेसे।

इस रोगमे अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. जलन, दर्द कुछ सूजनका होना और मैथुन न हो सकना।
२. ज्वर और खाजका आना, उठने वैठनेमें कष्ट।

यह रोग योनिके हर स्थानपर हो सकता है। रोग बढ़नेपर योनिके छूनेमें भी अधिक पीड़ा होती है।

इस प्रकार अनेक रोगोंसे योनि दूषित हो जाती है और फिर वह वीर्य्य ग्रहण नहीं करती। अतएव सन्तानका होना कठिन हो जाता है। रोगके प्रारम्भमें अनेक प्रकारके सन्देहों से कुछ परवाह नहीं की जाती। परिणाम यह होताहै कि रोग अच्छी तरह बढ़ जाता है और फिर बड़ी कठिनाई पड़ती है। अतएव रोग प्रारम्भ होते ही यत्न करना चाहिये।

(१८) मूत्ररोग।

यह बहुत बड़ा रोग है। मल और मूत्रकी खराबीसे शरीर नाश हो जाता है। इनसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होकर बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ उपस्थित करते हैं। जब मूत्ररोग हो तो योनि गर्भाशय और मसानेके रोगोंपर अवश्य विचार करना चाहिये। इसके कारण और भी हैं, परन्तु बहुधा इन्हींसे यह रोग होता है। इसके अनेक भेद हैं।

१. मूत्रके मार्ग (रास्ते) की जलन।

इसके अनेक कारण हैं। (रतिशास्त्र)

१. गुर्देकी खुजली, योनिमार्गमें शोथ और घाव।
२ रज कष्टसे आना और गर्मी सूजाकके विकारसे।
३. योनिके भीतरी घाव और रजविकारसे।
४. शरीरमें पित्तकी अधिकता और मसानेकी खुजलीसे।
५. गुर्दे, मसानेके घाव और पाक होनेसे।
६. मूत्रमार्गकी नलीकी सूजन और गर्भाशयके मुखके घावोंसे।
७. प्रदर और कुसमयमें रज निकलनेसे।
८. कलेजेकी गर्मी और गर्भाशयके टल जानेसे।

९. मूत्रमार्गकी नलीकी चोट और दाने-पड़ जानेसे।
१०. गर्मअण्डकी सूजन और अतिमैथुनसे।
इस रोगमें अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।
१. मूत्रमें तेज़ी, जलन और विशेष खारापन।
२. मूत्रका रंग पीला हो।
३. शरीरमें सूखापन और खुरखुराहट।
४. मूत्रका जलनके साथ निकलना।
५. बारंबार मूत्र निकलना।

इस रोगमें बहुत कष्ट होता है। बढ जानेपर इसके साथी दूसरे रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

२, मूत्र बन्द हो जाना।

इसके कई कारण हैं। (रतिशास्त्र)
१. गुर्देकी सूजन और मसानेमें हवाका भर जाना।
२. मूत्रकी नलीमें रुकावट, चाहे वह कैसी ही हो।
३. मसानेकी सूजन, पीप और रक्तका जमाव।
४. मूत्रकी नलीमें सूजाकके जख्म होनेसे।
इस रोगमें अनेक लक्षण होते हैं।
१. नलीका भारी मालूम होना और दर्द इत्यादि।

यह कठिन रोग है। जब मूत्रकी नलीमे जख्म पड़ जाता है तो अच्छा होनेपर वहाँ मांस बढ़ने लगता है और ऊँचा होकर नलीको रोक लेता है। इससे मूत्र रुक जाता है।

३, एक एक बूंद मूत्र आना।

इसके तीन भेद और अनेक कारण हैं। (श० क०)
१. पहला भेद—इसके ये कारण हैं-
१. गर्मीसे मूत्रमें तेजीका होना और अतिमैथुन।

२. गरम पदार्थके खाने और सूजाकके विकारसे।

इस रोगमें ये लक्षण होते हैं।

१. मूत्रमें जलन और पीला रंग।

२. कड़क और रुक रुककर मूत्र निकलना।

२. दूसरा भेद–इसके कई कारण हैं।

१. मसानेपर सर्दीका पहुँचना।

२. मसानेके पट्ठोंमें ढीलापन होनेसे।

३. मसानेकी रुकावटसे।

इस रोगमें अनेक लक्षण होते हैं।

१. सफेद मूत्रका आना और प्यास अधिक लगना।

२. आप ही आप थोडेसे मूत्रका निकल जाया करना।

३. कभी छिछड़ासा निकल आना।

३. तीसरा भेद–इसके ये कारण हैं।

१. मसानेकी सूजन और उसमें रक्त जम जानेसे।

२. मसानेकी खुजली और घावसे।

इस रोगमे अनेक लक्षण होते हैं।

१. पेशावकी रंगतका लाल होना।

२. मूत्रके साथ पीप और मांसके रेशोंका आना।

इन रोगोंका किसी विशेष अवस्था में होना निश्चित नहीं है। जब चाहे तभी विकार उत्पन्न हो जायँ, परन्तु यह रोग बच्चोंको कम होता है।

४. अधिक मूत्रका आना।

इसके कई कारण हैं।

१. मसाने और उसके पट्ठोंका ठंढकके कारण ढीला पड़ जाना।

२. दिमागी काम करना और रजका बिगड़ना ।
३. पाचन शक्ति का कम होना ।
इस रोगमें अनेक लक्षण होते हैं ।
१. बारबार पेशाब का आना ।
२. अत्यन्त निर्बलता और प्यास लगना ।
३. मूत्रमें सफेदी ।

यह रोग प्रायः चालीस वर्ष के लग भग होता है । निर्बल स्त्रियाँ इस रोग मे अधिक फँसती हैं ।

५. मूत्रके साथ रक्तका आना ।

इसके तीन भेद और अनेक कारण है । (रति शास्त्र)

१. पहला भेद—कोई नस गुरदे मे खुल जाने या फट जानेसे । इसमें अनेक लक्षण होते हैं ।

१. साफ और पतला रक्त बिना पीड़ा के निकलता है ।
२. रगों के मुख खुलनेपर थोडा थोड़ा रक्त आता है ।
३. यदि रग फट गई हो तो अधिक रक्त निकलता है ।
४. रक्त रुक जानेसे नितम्बकी हड्डियोंकी ओर दर्द होता है ।

२ दूसरा भेद—इसमें गुरदा और कलेजा निर्बल होने और रक्त बन कर शरीर मे ठीक ठीक न पहुंचने से या गुरदे पर चोट लागने से ।
इसमें कई लक्षण होते है ।

१. मूत्र मांस धोवन के समान लाल हों जब कि कलेजे का विकार हो ।

२. गुरदे के विकार से मूत्र सफेद और कुछ गाढ़ा हो ।

३. तीसरा भेद—इसमें मूत्रमार्ग के अवयव की रगों में जखम हो जाते हैं । प्रायः मसाने की रगोंमें ऐसा जखम होता है ।

इसमें कई लक्षण होते हैं।

१. मूत्र निकलने में अत्यन्त कष्ट।

२. पीप सहित मूत्र रक्तके साथ आता है।

३. मूत्र में बदबू आती है।

यह रोग जवान और अमीर स्त्रियों को बहुत होता है। इसमें नंबर २ का रोग बूढ़ी स्त्रियों में भी पाया जाता है।

इस प्रकार मूत्र-रोगों से स्त्रियों में अनेक दूसरे रोग उत्पन्न होते हैं। अतएव रोग उत्पन्न होते ही यत्न करना आवश्यक है।

(१६) प्रदर रोग।

यह एक बड़ा बलवान रोग है। आज कल सौ में पंचानवे स्त्रियाँ इससे ग्रसित देखी जाती हैं, परन्तु इसको मामूली बात ख्याल करके ज़रा भी परवाह नहीं की जाती। या यों कहिये कि उनको इस रोग की भलाई बुराईकी बाबत कुछ मालूम नहीं है। वैद्य, हकीम और डाक्टर तीनों की यही राय है कि इससे शरीरका सर्वनाश हो जाता है।

१. वैद्यकका मत।

वैद्योंने यह माना है कि जो स्त्री अत्यन्त नमक खटाई, चरपरे जलन पैदा करने वाले और चिकनाई से बने हुये, चर्बी बढ़ाने वाले तथा ग्राम्य और औदक पशुओंका मांस, खिचड़ी खीर, दही, सिरका, मन्थ और शराब हमेशा सेवन करती है, उसकी वायु बिगड़कर प्रमाणसे अधिक रक्त निकलता है। रज निकलनेवाली शिराओंमें रक्तके साथ वायु पहुंच कर रजको बढ़ा देती है। इसको रक्तप्रदर कहते हैं।

(च० चि० अ० न० १३४)

इसप्रकार वर्णन करते हुए वैद्योंने प्रदर चार प्रकार का माना है।

१. वातजनित प्रदर । इसका निम्न कारण है—

१. रुक्षादि (रूखे) पदार्थों के खानेसे वायु बिगाड़कर पहले (ऊपर कहे हुए) की भांति रुधिरको लेकर प्रदर उत्पन्न करती है। (च० चि० अ० ३० श्लो० १२७)

इसके अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. इसमें रक्त झागदार, पतला, रूखा, काला या लाल रंग-का होता है। देखनेमें पलाशके औटाए जलके समान हो। इसमें पीड़ा होती भी है और नहीं भी। वायुके कारण कमर, वक्ष, हृदय, पसली, पीठ और नितंबोंमें कठिन पीड़ा उत्पन्न होती है। (च० चि० अ० ३० श्लो० १२८)

२. पित्तजनित प्रदर—इसके निम्न कारण हैं।

१. खट्टे, गर्म, नमकीन और खारे पदार्थों के बहुत खानेसे पित्त बिगड़कर पहले (ऊपर कहे हुए) की भांति प्रदर उत्पन्न करता है। (च० चि० अ० ३० श्लो० १२९)

इसमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. इसमें रक्त कुछ कुछ नीला, पीला और अत्यंत गरम, काला और पीड़ाके साथ वारम्वार निकलता है। इसमें दाह, लाली, प्यास, मोह, ज्वर और भ्रम, ये उपद्रव होते हैं। (च० चि० अ० ३० श्लो० १४०)

३. कफजनित प्रदर—इसका निम्न कारण है।

१. भारी पदार्थों के खानेसे कफ बिगड़कर पहले (ऊपर कहे हुए) की भांति प्रदर उत्पन्न करता है।

(च० चि० अ० ३० श्लो० १४१)

इसके अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१. इसमें रक्त गिलगिला, पीला, भारी, चिकना, शीतल

और झागदार निकलता है । पीडा कम होती है । के, अरुचि, स्वांसरोग और खांसी होती है ।

(च० चि० अ० ३० श्लो० १४२)

४ सन्निपातिक प्रदर—इसका निम्न कारण है ।

१. वात, पित्त और कफके जो कारण ऊपर कहे गए हैं वे सब इसमें होते हैं । (च० चि० अ० ३० श्लो० १४३)

१. वात, पित्त और कफके जो जो कारण ऊपर कहे गए हैं वे सब इसमें होते हैं । (च० चि० अ० ३० श्लो० १४४)

यह रोग अच्छा हो सकता है, परन्तु जिसे बराबर रक्त निकला करे, प्यास दाह और ज्वर हो, रक्तके अधिक निकलने से स्त्री दुर्बल हो जाय, जिसका बहुतसा रक्त निकल गया हो, ऐसी स्त्रीका प्रदर अच्छा नहीं होता । अतएव औषधि करना व्यर्थ है । (चरक)

प्रदर दो प्रकार का होता है । रक्त प्रदर और श्वेत प्रदर । रक्त प्रदरमें रक्त निकलता है । श्वेत प्रदरमें चिकना अथवा पानी सरीखा सफेद रंगका स्राव होता रहता है ।

२. डाक्टरोंका मत ।

इस मतमे भी दो प्रकारके प्रदर माने गए है । एक वह कि जिसमें केवल पानी सरीखा सफेद रंगका स्राव होता है; दूसरा वह कि जिसमें कुछ लाली लिये पतला या गाढा स्राव होता है । यह दो स्थानोंसे होता है—योनि और गर्भाशयसे । इसलिये कोई इसको योनि प्रदर और कोई गर्भाशयका प्रदर कहते हैं । इन दोनोंके अनेक कारण हैं ।

१. योनि और गर्भाशयका शोथ ।

२. गर्भाशयका मस्सा और गर्भ-स्राव हो जाना ।

३. अतिमैथुन और गर्भाशयमें सर्दी पहुंचनेसे।
४. उपदंशके अनेक विकारोंसे।
५. पांडुरोग, दूषित आहार और रजके विगाड़से।
६. कुपच और शरीरका निर्बल हो जाना।
७. अतिमैथुनसे योनिमें घाव होने और पक जानेसे।
८. गर्भाशयके रोग छाले, मस्से, शोथ, टल जाने, मोटे पड़ जाने और दग्ध हो जानेसे।
९. योनिमें छाले, दाने और जख्म हो जानेसे।
१०. ज़हरीले ज्वर और क्षय इत्यादिसे।

इसमें अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१ ज्वर, सर, कमर और नेत्रोंमें पीड़ा, अपच, हृदय, पसली, पीठ, नितम्बोंमें कठिक दर्द प्यासका लगना साँसका उखड़ जाना, खाँसी कँपकँपी इत्यादि।

यह वड़ा विलक्षण रोग है। इसमें प्रायः ऋतुधर्मके बाद दो तीन दिन तक सफेद स्राव हुआ करता है। परन्तु वे स्त्रियाँ कि जो विशेष कारणोंसे इस रोगमें फँसती हैं. उनको नित्य होता है। बढ़े हुए रोगमें ऐसे स्रावके साथ लाली अवश्य आती है। जब योनिसे सफेद स्राव हो तो वह दूधमें मिले हुए पनीके समान पतला और सफेद होता है और जब ऐसा स्राव गर्भाशयसे आता है तो चिकना और गढ़ा होता है, परन्तु इसमें कुछ बदबू अवश्य आती है। जब गर्भ न रहे और चिकना स्राव हुआ करे, तो गर्भाशयका शोथ इत्यादि जानना चाहिये। पतले सफेद स्रावमें योनिशोथ इत्यादि समझना चाहिये। जब इस दशामे छाले, घाव इत्यदि हो जाते हैं तब लाली आती है या जब कभी ऐसी दशामें योनि और गर्भाशय की नस इत्यादि किसी दबावके कारण फट जाती है-तो रक्तसे

मिला हुआ पानी या चिकनाईके साथ रक्त आता है। यह रोग कुछ अधिक दिनोंतक यदि बराबर रहे, तो अनेक दूसरे रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

(२) सोम रोग।

यह स्त्रियोंके लिये बहुत बुरा रोग है। जिनके पीछे लग जाता है वे जिन्दगीसे हाथ धो बैठती हैं। इसमें पेशाब बहुत होता है। बढ़े हुए रोगमें तो यहाँ तक देखा गयाहै कि दम-दममें हुआ करता है। हर समय कपड़ा तर रहता है। शरीरका पानी मसानेमें इकट्ठा होता है। धारण-शक्ति पेशाबको नहीं रोक सकती। थोड़ी थोड़ी देरमें प्यास लगती है। ज्यों ज्यों पानी पीया जाता है, पेशाब होता चला जाता है। पुराना होनेपर यह कलेजेको निर्बल कर देता है।

इसके अनेक कारण हैं। (श० क०)

१. अतिमैथुन और अत्यन्त शोक।
२. अतिसार और विषका दोष।
३. रज-विकार और मद्यपान।

इसमें अनेक लक्षण प्रकट होते हैं।

१. निर्मल, शीतल, गंध-रहित, साफ़, सफेद, बिना दुःखके पेशाब होता है।
२. मूत्र रोकनेमें बेचैनी होना, मस्तक कनपटी और आँखोंमें शिथिलता तथा मुख व तालूका सुख जाना।
३. मूर्छा आती है, शरीर सूख जाता है। पीनेवाली चीजोंमें सन्तोष नहीं होता और अत्यन्त दुर्बलता बढ़ती है।

इस रोगमें स्त्री गर्भ ग्रहण नहीं कर सकती। रज निकम्मा

हो जाता है। ऐसी स्त्रीसे संयोग करनेसे पुरुषको भी अनेक रोग उत्पन्न होते हैं।

(२१) मसानेके रोग।

मसाना शरीरका एक प्रधान अंग है। यह थैलीकी भाँति दोनों सिरे कोनेदार और बीचमें चौड़ा होता है। पुरुषके मसानेमें तीन और स्त्रीके एक झुकाव रहता है। यहींसे मूत्र इकट्ठा होकर बाहर निकलता है। इसमें अनेक संबन्धी अवयवोंके विकारसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं जिसके अनेक भेद हैं। (रतिशास्त्र)

१. मसानेकी सूजन—इसके कई कारण हैं।

१. मसानेकी पथरीके खुरखुरेपनसे छिलने या औज़ारोंकी चोट लगनेसे।

२. मूत्रविकार और इसके संबन्धी अवयवोंके विकारसे। इस रोगमें अनेक लक्षण होते हैं।

१. पेडूमें सुई चुभनेकासा दर्द।

२. पेडूका भारीपन और फूल जाना।

३. गर्मी मालूम हो और प्यास लगे।

४. ज़बानमें कुछ कालापन मालूम होना।

५. पेशाब थोड़ा थोड़ा निकलना या न होना।

६. पेडूपर लालिमाका होना (जब सूजन आगे हो)

रोग बढ़नेपर यह सूजन आँतोंतक पहुँच जाती है और अत्यन्त कष्ट होता है।

२. मसानेकी खुजली—इसके कई कारण हैं।

१. गरम पदार्थोंके खानेसे खूनमें गर्मी पैदा हो जानेके कारण।

२. ऐसे आहार-विहारसे कि जिससे पित्त और वायु बिगड़ जाय।

ऐसी दशामे अनेक लक्षण होते हैं।

१. मूत्रमें जलन और बदबू।

२. मसानेमें दर्द और खाजका आना।

३. पीप या पीपदार पानी आना।

४. मूत्रके साथ गरम रक्त निकलना।

५. पेशाबकी रंगतका कुछ लाल होना।

इस रोगमें स्त्रीको बड़ा दुःख होता है। खाज जब अधिक होती है, तब रोगको बढ़ता हुआ समझना चाहिये।

३. मसानेका दर्द—इसके कई कारण हैं।

१ मसानेमें अनेक प्रकारके रोग, सूजन, खुजली, घाव, पथरी, फुंसियाँ और मूत्र-विकारसे।

इसमे निम्न लक्षण होते हैं।

१. प्यास लगना और मसानेमें जलन होना।

२ पेशाबकी रंगत पीली होना और रुक रुक कर आना। कभी कभीतो ऐसा दर्द होता है कि स्त्रीको चैन नहीं पड़ता।

४. मसानेमें रक्तका जम जाना—इसके कई कारण हैं।

१. पेशाबकी नलीमें चोट लगनेसे।

२ पेशाबमें खून आनेसे।

३ मसानेपर चोट लगनेसे।

इसमें अनेक लक्षण होते हैं।

१. पीड़ा, बेहोशी, बेचैनी, नाड़ीका मन्द पड जाना, घुमनी, जी मचलाना, उठने बैठनेमें दर्द और कुपचका होना।

यह बहुत बुरा रोग है। इससे अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

४. मसानेका फूल जाना—इसके कई कारण हैं।

१. मसानेमें रतुव्रत पैदा हो जाने और नरम करनेकी शक्ति न होनेसे।

२. मूत्र इकट्ठा हो जानेसे।

इसमें कई लक्षण प्रकट होते हैं।

१. पेटके अफरेके समान मसानेमें अकरा मालूम होना।

२. मूत्रके निकलनेमें कुछ थोड़ी रुकावट।

३. जल्दी जल्दी पेशाब लगना।

पेटका अफरा पचानेवाली दवा खानेसे अच्छा हो जाता है; परन्तु यह इससे नहीं अच्छा होता।

इस प्रकार मसानेके रोगसे स्त्रियाँ पीड़ित रहती हैं और इनके अनेक उपद्रवोंसे दूसरे रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतएव कुछ सन्देह होते ही इलाज करना आवश्यक है।

(२२) स्त्रियोंका उपदंश।

पुरुषोंकी भाँति स्त्रियोंको भी उपदंश (आतशक) होता है। इस रोगसे प्रायः सदाचरणी स्त्रियाँ बची रहती हैं। परन्तु बाजारू (रण्डियाँ) और बदचलन स्त्रियोंको तो यह अवश्य होता है। वे स्त्रियाँ जो कि बदचलन नहीं हैं, उनको यह रोग उनके बदचलन पतिसे मिलता है। बदचलन पुरुषोंको बदचलन स्त्रियोंसे मिलता है; परन्तु कहीं कहीं सदाचारी पुरुष भी अपनी स्त्री से ऐसे रोगको पाते हैं। सारांश इसका यह है कि यह रोग इसी प्रकार फैलता है। वैद्यकके मतसे यह पाँच प्रकारका होता है—वातज, पित्तज, कफज, रक्तज और सन्निपातिक। इसका कारण वैद्यकमें इस प्रकार कहा है।

१. हाथसे चोट लग जाने, नखून और दाँतकी चोटसे। दुष्ट अर्थात् बदचलन स्त्रियोंके संयोगसे, लिंग और योनिकी सफाई न होने से अतिमैथुनसे उपदंश होता है। (श० क०)

२. सूकरी इत्यादिके मूत्र और उपदंशके रोगीने जिस स्थानपर पेशाब किया हो, वहाँ पेशाब करनेसे। (श० क०)

इन कारणोंसे पाँच प्रकारका उपदंश होता है।

१ वातज उपदंश।

१. इसमें योनिके मुख या ओठपर छोटे छोटे दाने हो जाते हैं, उनमें दर्द और खुजली होती है। पानी लगनेपर फुंसियाँ फैलती जाती हैं। (श० क०)

२ पित्तज उपदंश।

१. इसमें पीले रंगकी फुंसियाँ और घाव होते हैं, मवाद आता है और अत्यन्त दाह होता है। (श० क०)

३ रक्तज उपदंश।

१ इसमें लाल रंगकी फुंसी होती है और खुजली होती है। (श० क०)

४. कफज उपदंश।

१. इसमें सफेद और बड़े घाव होते हैं। पकनेमें अधिक समय लगता है। मवाद गाढ़ा आता है। खुजली और शोथ अधिक होता है। जख्म सफेद पीपसे भरा रहता है। (श० क०)

५ सन्निपातिक उपदंश।

१. इसमें वात, पित्त और कफ तीनोंका दोष मिला रहता है। पीड़ा अधिक होती है, जल्दी आराम नहीं होता। अनेक प्रकारके स्राव होते हैं। (श० क०)

ऐसी दशामे जखम होनेके कारण पुरुष-समागम करनेमें बड़ा दुःख होता है। जो स्त्रियाँ संयोग करती हैं, उनके भीतरी अवयव नष्ट हो जाते हैं। बढे हुए उपदंशमं भीतरी अवयवतक सड़ते और गलते हुए देखे गए हैं।

इसमे सबसे बड़ी बात तो यह होती है कि स्त्रीका रज नष्ट हो जाता है। और इस कारण रज-कीट निकम्मे पड जाने हैं। परिणाम यह होता है कि सन्तान नही होती।

(२३) गर्भ न रहनेके कारण।

हम लोग ऐसी अवस्थामें हैं कि जिसमे इस बातका निश्चय बहुत कठिनाईसे कर सकते हैं कि हमारी स्त्रियाँ जो अच्छी तरहसे हैं, जिनको हम निरोग समझते हैं, उनके सन्तान क्यों नहीं होती? इसका कारण यह है कि हम अनेक मतोंको माननेवाले हैं। इसलिये हमारे हृदयमे यह बात बहुत कम जमती है। हम लोग यह नहीं देखते कि स्त्रीको किन कारणों से सन्तान नही होती। जहाँ चार पाँच वर्ष व्यतीत हुए और कोई बच्चा न हुआ, स्त्रियाँ तुरंत भूत-प्रेत या पीर पैगम्बरोंका विचार करने लगती हैं। स्त्रियाँ ही नहीं, पुरुष भी इस अंध-विश्वासके वशमे देखे जाते हैं। इसको छोड़िये, सबसे बड़ी बात तो यह है कि वैद्य कहते हैं कुछ डाक्टर साहबकी दूसरी ही राय है. हकीम साहबके डेढ़ चावलकी खिचड़ी अलग ही पकती है। ऐसी दशामे गरज़से बावला एक गरीब भारतीय किसी एक बात पर अपने चित्तको कैसे ठहरा सकता है? अन्तमें भाग्य भगवान्के भरोसे यही मान लेता है कि स्त्री वन्ध्या है। कैसे शोककी बात है कि ज़रासे फेरफार के

लिये लोग अच्छी खासी बच्चा जननेवाली स्त्रीको वन्ध्या बना देते हैं। इस विषयमें स्त्री और पुरुष दोनोंको विचार करनेकी आवश्यकता है, क्योंकि कहीं कहीं पुरुषोंके निकम्मेपनसे भी स्त्रियाँ ही बदनाम होती हैं। पुरुषों तक किसीका विचार भी नहीं जाता, क्योंकि वे तो पुरुष ही ठहरे।

जहाँ तक देखा गया है गर्भ न रहनेके अनेक कारण होते हैं, जो स्त्री और पुरुष दोनोंमें पाए जाते हैं।

(१) स्त्रियोंमें होनेवाले कारण।

१, योनिके परदे का न फटना।

१. यह वह परदा है कि जिसको (Hymen) कहते हैं। योनिद्वारके पीछेका भाग चलगर्मी झिल्लीसे अर्द्ध चंद्राकार ढका होता है। कभी कभी यह पूर्ण चंद्राकारसे पूरे योनिद्वारको ढके रहता है। यों तो आम तौरसे यह मुलायम रहता है, परन्तु किसी किसीका चिमड़ा और कड़ा होता है। यह पुरुष प्रसंग होनेसे फट जाता है। इसीसे स्त्रीके क्षता अर्थात् पुरुषसे प्रसंग कर चुकने और अक्षता अर्थात् पुरुषसे प्रसंग न होनेकी पहचान होती है। जिन स्त्रियोंमें यह परदा चिमड़ा या कड़ा होता है, तो वह नहीं फटता। इसके कई कारण हैं।

१ जब कि परदा बहुत कड़ा हो।

२. जब कि परदा चिमड़ा और अत्यन्त मुलायम हो।

३. जब कि परदे तक लिंगेन्द्रिय न पहुँचे।

इन कारणोंसे जब परदा नहीं फटता और वीर्य्य वहाँतक पहुँच नहीं सकता, तो गर्भ धारण नहीं होता।

२, गर्भ अण्डके अनेक रोगोंसे।

('अण्डोंके रोग' प्रकरण देखो।)

१. अण्डोंके न होनेसे। यह रोग जन्मसे होता है।

१. ऐसी स्त्री पूरी वन्ध्या होती है। उसको कभी संतान नहीं होती। क्योंकि गर्भ और गर्भअण्डका बहुत बड़ा संबंध है। जब गर्भ-अण्ड ही नहीं रहेगा, तो गर्भ कैसे रह सकता है?

२. अण्डोंका अपूर्ण खिलना। यह रोग जन्मसे होता है।

१. ऐसी दशामें जब कि गर्भ-अण्ड अधखिला रहता है, उससे रज उत्तम रीतिसे नहीं निकल सकता और न बन ही सकता है। जब ऐसा विकार होता है, तो गर्भाशयमें भी विकार अवश्य होता है; इसलिये गर्भ नहीं रहता।

३. अण्डोंकी सूजनसे।

१. ऐसी दशामें जब कि अण्डोंमें सूजन होती है, रज बिगड़ जाता है। इसलिये दूषित रजके कारण गर्भ नहीं रहता।

४. अण्डोंके पक जानेसे।

१. जब अण्डे पक जाते हैं तो इनसे शुद्ध रज नहीं निकलता, अतएव दूषित रज निकलनेसे गर्भ नहीं रहता।

५ अण्डोंके भ्रंश होनेसे।

१. यह बहुत बड़ा रोग है। ऐसी दशामें शुद्ध रज नहीं निकलता और गर्भाशयमें परिवर्तन हो जाता है। अतएव गर्भ नहीं रहता।

६ अण्डोंकी गांठोंसे।

१. इस रोगमें गांठें पड़ जाती हैं और रज बिगड़ जाता है; अतएव गर्भ नहीं रहता।

७. अण्डोंके सुस्त हो जानेसे।

१. ऐसी दशामें रज नहीं आता। यदि आता भी है तो कम और निकम्मा, अतएव गर्भ नहीं रहता।

८. अण्डोंके जलोदरसे।

१. इसमें रज बिगड़कर अयोग्य हो जाता है अतएव गर्भ नहीं ठहरता।

३, अनेक प्रकारके दूषित रजसे।

(इस विषयमें इसी पुस्तकका 'शुद्ध और दूषित रज-वीर्य्य' प्रकरण देखो)।

१. वायु दूषित रजसे।

१. इस रोगमें रजका रंग काला और कुछ लाली लिये होता है। अतएव दूषित होकर बिगड़ जाता है और गर्भ नहीं रहता।

२. पित्तके दूषित रजसे।

१. इस रोगमें रज लाली और पीलापन लिये होता है, अतएव दूषित हो जाता है। इससे गर्भ नहीं रहता।

३. कफके दूषित रजसे।

१. इस रोगमें रज लालीमें सफेदी लिये होता है और दूषित हो जाता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

४ रक्तके दूषित रजसे।

१. ऐसे रजमें मुर्देकीसी बदबू आती है। अतएव रज बिगड़कर गर्भ नहीं रहता।

५. कफ़ और वायुके दूषित रजसे।

१. इस रोगसे रजमें गांठें पड़ जाती हैं। अतएव गर्भ नही रहता।

६. पित्त और कफ़के दूषित रजमें।

१. इस रोगमें रज पीप सरीखा गाढ़ा और बदबूदार होता है अतएव गर्भ नहीं रहता।

७. पित्त और वायुके दूषित रजमें।

१. इस रोगमें रज क्षीण हो जाता है, अतएव गर्भ नही रहता।

८ त्रिदोष (वात पित्त कफ) के दूषित रजमें।

१. इस रोगसे दूषित रज अनेक रंगका और निकम्मा होता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

४. प्रदर रोगके अनेक विकारोंसे।

(इसके विषयमें इसी पुस्तकका 'प्रदर रोग' प्रकरण देखो)।

१. इस रोगमें गर्भाशय और योनिमें विकार पैदा हो जाता है और रज निकम्मा पड़ जाता है। पुरुषके वीर्य्य से प्रदरके श्वेत पदार्थका संयोग हो जानेसे वीर्य्यके कीड़े नाश हो जाते हैं। यह रोग रज और वीर्य्य दोनो-को नष्ट कर देता है। इसलिये गर्भ नहीं रहता।

५. गर्भाशयके अनेक रोगोंसे।

(इस विषयमें इसी पुस्तकका "गर्भाशयके रोग" प्रकरण देखो।)

१. गर्भाशयके बाहरी मुखका छोटा पड जाना—इसमें दो भेद हैं।

१. जन्मसे गर्भाशयका मुख छोटा होना। इस कारण वीर्य्य गर्भाशयके अंदर नहीं जाता।

२. रोगोंसे किसी समयमें गर्भाशयको मुख छोटा होना, इससे भी वीर्य्य अंदर नहीं जा सकता।

२ गर्भाशयकी सूजनसे।

१. यह कई प्रकारकी होती है। जितने प्रकारकी सूजन है सबमें नीचे लिखी बातें होती हैं।
   १. रजका बिगड़ जाना और समयपर न आना।
   २. गर्भाशयके आकारमें तबदीली।
   ३. गर्भाशयके मुखका छोटा पड जाना।
   ४. अनेक कारणोंसे कुछ गाढ़ा पानी निकला करना। इन कारणोंसे गर्भ नहीं रहता।

३ गर्भाशयके फट जानेसे।

१. यह रोग दो दशाओंमें होता है।
   १. जब कि बच्चा पैदा होनेका समय निकट हो।
   २. जब कि बच्चा पैदा होनेका समय हो।

एक वार जहां गर्भाशय फट जाय, तो इसके बाद गर्भ नहीं रहता।

४ गर्भाशयके फूल जानेसे।

१. यह भयंकर रोग है। इसमें रज बिगड़ जाता है। गर्भाशयमें तबदीली हो जाती है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

५. गर्भाशयके जुकामसे।

१. इस रोगमें रज बिगडता है और एक तरहका चिपचिपा पदार्थ निकला करता है, इस कारण गर्भ नहीं रहता।

६. गर्भाशयके मुखकी सूजनसे।

१. इस रोगमें मुख छोटा पड जाता है और तनाव रहता

है। योनिसे एक तरहका पतला पदार्थ निकला करता
अतएव गर्भ नहीं रहता।

गर्भाशयकी जलनसे।

१. इस रोगमे दाह उत्पन्न होता है और रज बिगड जाता है। अतएव गर्भ नहीं रहता है।

८. गर्भाशयके मोटे हो जानेसे।

१. इस रोगमें गर्भअण्डमें विकार उत्पन्न हो जाता है कि जो रज बननेका स्थान है। अतएव गर्भ नहीं रहता।

९. गर्भाशयमें जलके भर जानेसे।

१. इस रोगमें गर्भाशय फूला चला आता है और उसमें विकार उत्पन्न हो जाता है। इस कारण गर्भ नहीं रहता।

१०. गर्भाशयकी गाँठोंसे।

१. इस रोगमें दो प्रकारकी गाँठें होती हैं। कैसी ही गाँठ हो, उससे गर्भाशय बिगड़ जाता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

११. गर्भाशयका मुख बन्द हो जानेसे।

१. इस रोगमें गर्भाशयके अन्दर बहनेवाला पदार्थ भरा रहता है। मुख बंद होनेके कारण गर्भाशयमें विकार उत्पन्न हो जाता है। अतएव गर्भ नहीं रहता।

१२. गर्भाशयके अर्बुदसे।

१. इस रोगमें योनिसे बदबू आती है। एक तरहका गाढ़ा पानी निकला करता है और गर्भाशयके आगेका मुख छोटा पड़ जाता है। अतएव गर्भ नहीं रहता।

१३. गर्भाशयमें दाने पड़ जानेसे।

१. इस रोगमें कभी रक्त और कभी मवाद निकलता है।

इस कारण गर्भाशय विगड़ जाता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१४ गर्भाशयके घावोंसे।

१ इस रोगमें घावके कारण मवाद पड़ जाता है। गर्भाशयका मांस गलने लगता है और घाव सड़ जाता है। इससे अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१५. गर्भाशयकी रसौलीसे।

१ यह गर्भाशयके अंदर होती है। इससे गर्भाशयमें अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१६ गर्भाशयके नासूरसे।

१. इस रोगमें पतला मवाद या पानी रिसा करता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१७ गर्भाशयके टेढ़े हो जानेसे।

१. गर्भाशय आगे और पीछेसे टेढ़ा होता है। ऐसा जन्म से भी होता है और जवानीमें भी सम्भव है। इस रोगमें गर्भ नहीं रहता, परंतु पीछेसे टेढ़ा होनेपर गर्भ रह जाता है।

१८. गर्भाशयके टल जानेसे।

१. इस रोगमें आगे, पीछे, दहिने और बाएं गर्भाशय टल जाया करता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१९ गर्भाशयके उलट जानेसे।

१. इस रोगमें जब एक बार गर्भाशय उलट जाता है, तो ठीक हो जानेपर भी गर्भ नहीं रहता।

२०. गर्भाशयका मुख अधिक खुल जानेसे ।

१. इस रोगमें वीर्य्य अंदर पहुंचकर फिर निकल आता है, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

२१. गर्भाशयके मस्सोंसे ।

१. ऐसे मस्से गर्भाशयके अंदर होते हैं, अतएव विकार उत्पन्न होनेसे गर्भ नही रहता ।

२२. गर्भाशयके दग्ध हो जानेसे ।

१. थोड़ी अवस्थामें पुरुष-प्रसंग होनेसे गर्भाशय दग्ध होकर अनेक विकार उत्पन्न करता है, अतएव गर्भ नहीं ठहरता

२३. गर्भाशयमें रक्त जमकर सूख जानेसे ।

१. गर्भाशयका मुख सकरा होनेके कारण रक्त जम जाता है, अतएव विकार उत्पन्न होनेसे गर्भ नहीं रहता ।

२४. गर्भाशयमें वीर्य्य न ठहरनेसे ।

१. गर्भाशयके अंदर चरबी बढ़ जानेसे चिकनाईके कारण वीर्य्य बाहर निकल आता है, अतएव गर्भ नही रहता ।

२५. गर्भाशयमें मांस बढ़ जानेसे ।

१. इस रोगमें गर्भाशयके अंदर मांस बढ़ जाता है और बदबूदार रज निकलता है, अतएव इस बिगाड़से गर्भ नहीं रहता ।

२६. गर्भाशयमें कीड़े पड़ जानेसे ।

१. इस रोगमें एक प्रकारके कीड़े गर्भाशयमें पड़ जाते हैं, और पतला बदबूदार स्राव हुआ करता है, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

६. रजोधर्मके अनेक रोगोंसे ।

(इस विषयमें इसी पुस्तकका 'रजोधर्मके रोग' नामक प्रकरण देखो) ।

१ रजोधर्मके न होनेसे।

१. ऐसी दशामें रजका स्राव न होनेके कारण गर्भ नहीं रहता

२. रज कम निकलनेसे।

१. ऐसी दशामे जब कि रज एक ही दिन निकलकर रह जाय और फिर न निकले, तो गर्भ अण्ड और गर्भाशय में विकार हो जाता है, अतएव संतान नहीं होती।

३. कष्ट रजके प्रकोपसे।

१. ऐसी दशामें गर्भाशय और गर्भ-अंडमें विगाड उत्पन्न हो जाता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

४. अधिक रज निकलनेसे।

१. ऐसी दशामें जब कि बराबर आठ आठ दस दस दिन तक रज निकला करे। इस रोगमें रगोंका मुख खुल जाता है, अतएव इस प्रकारके अनेक विकारोंसे गर्भ नहीं रहता।

७, अनेक प्रकारके वन्ध्या रोगोंसे।

(इस विषयमें इस पुस्तकका "वन्ध्या-रोग" प्रकरण देखो)

१ जन्म वन्ध्यासे।

१. गर्भ उत्पन्न करनेवाले अवयवोंके न होनेसे इस रोगमे गर्भ रहता ही नहीं।

२ काक वन्ध्यासे।

१. एक वार बच्चा हो जानेपर गर्भाशय नष्ट हो जानेसे दूसरी वार गर्भ नहीं ठहरता।

३. रजोहीनासे।

१. इस रोगमें गर्भ अंडके न होनेपर रज नहीं होता, अतएव गर्भ नहीं रहता।

४. मेदीसे।

१. शरीरमे चरबी बढ़कर गर्भाशय नष्ट होनेसे गर्भ नहीं रहता।

५. अतिस्थूलासे

१. अधिक मोटे होनेसे वीर्य्य गर्भाशयतक नहीं पहुंचता, अतएव गर्भ नहीं रहता।

६ नष्ट-कोष्टीसे

१. इस रोग मे गर्भाशय नष्ट हो जाता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

७ बलक्षयी से।

१. इस रोग में निर्बलता के कारण गर्भ नहीं रहता।

८. प्राक्सयोगिता से।

१. छोटी अवस्था में रजोधर्म के पहले पुरुष-संयोग होनेसे गर्भाशय दग्ध जाता है, जएव गर्भ नहीं रहता।

९. वामिनी से।

१. ऐसी दशामें ग शिय से र वाहर निकल आता है, अतएव गर्भ नह रहता।

१० सुचीमुखी से।

१. ऐसी दशामें गर्भाशयका मुख अत्यन्त छोटा हो जाता है, अतएव गर्भ नहींरहता।

११ रक्तस्रावी से।

१. इसमे बराबर रक्त गिरा करता है। अतएव गर्भ नहीं रहता।

१२. स्रावी से।

१. इस दशा में हमेशा पतला स्राव हुआ करता है, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१२ शुष्की से ।

१. ऐसी दशामें वीर्य्य गर्भाशयमें सूख जाता है और वहीं जल भी जाता है, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

८, अनेक प्रकारके योनि-रोगोंसे ।

(इस विषय में इसी पुस्तकका 'योनिरोग' प्रकरण देखो)

१ वातल योनिसे ।

१. वायु के बिगड़ जाने से ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

२ पित्तल योनिसे ।

१. पित्तके बिगड़ जाने से ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

३. श्लैष्मिक योनिसे

१. कफके बिगड़ जानेसे ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

४ सन्निपातिक योनि ।

१ वात, पित्त और कफ के बिगड़ने से ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

५ रक्त-पित्तज योनिसे ।

१. रक्त पित्तके बिगड़ जानेसे योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती अतएव गर्भ नहीं रहता ।

६ अरजस्का योनिसे ।

१. गर्भाशय के पित्त से रज बिगड़ कर योनिको दूषितकर देता है । ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

७ अचरणा योनिसे ।

१. ऐसी योनिमें गन्दगीसे कीड़े पड़ जाते हैं और इससे

ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता।

८ अतिचरणा योनिसे।

१. अत्यन्त मैथुनसे वायु बिगडकर योनि दूषित होनेसे वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता।

९ प्राक्चरणा योनिसे।

१. थौड़ी अवस्थामें पुरुष-संयोग होने के कारण वायु योनिको बिगाड़ देती है, अतएव वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, इससे गर्भ नही रहता।

१० उपलुप्ता योनिसे।

१०. कफ उत्पन्नकरनेवाले आहारसे, कै और स्वासादिको रोकनेसे वायु और कफ दूषित होकर योनिको दूषित कर देने हैं, अतएव योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती। इससे गर्भ नहीं रहता।

११ परिप्लुता योनिसे।

१. पित्त-प्रकृतिवाली स्त्रीके छींक और डकारके रोकनेसे पित्तके साथ वायु बिगड़कर योनि दूषित हो जाती है, अतएव ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं कर सकती, इससे गर्भ नहीं रहता।

१२ उदावृत्ता योनिसे।

१. नीचेकी वायुको रोकनेसे योनिका वेग ऊपरको होता है, इस कारण योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१३. कर्णिनी योनिसे।

१. छोटी अवस्थामें गर्भ रहनेसे योनिमें एक तरहकी कर्णिका उत्पन्न हो जाती है। उससे योनि दूषित हो

जाती है और फिर वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नही रहता।

१४, उदावर्तिनी योनिसे।

१. जिस योनिमें रक्त निकलनेसे तुरन्त चैन पड जावे, ऐसी दशामें योनि दूषित होकर वीर्य्य ग्रहण नही करती, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१५, अन्तर्मुखी योनिसे।

१. खूब भोजन करके उलटे टेढ़े रीतिसे संयोग करने पर वायु योनि-मुखको टेढ़ा कर देती है, ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१६ सूचीमुखी योनिसे।

१. माताके दोषसे गर्भस्थ कन्याकी योनि दूषित होनेसे योनि मुख छोटा हो जाता है। ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१७ शुष्की योनिसे।

१. जब मैथुनके समयमें स्त्री पाखाना पेशाबके वेगको रोक ले, तो मालमूत्र रुककर योनि सूखी हो जाती है। ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नही रहता

१८ वामिनी योनिसे।

गर्भाशयमें गया हुआ वीर्य्य बाहर निकल आता है और योनि वीर्य्य नहीं ग्रहण कर सकती, अतएव गर्भ नहीं रहता।

१९ महायोनिसे।

१. उलटे रीतिसे संयोग होनेपर वायुसे गर्भाशय और योनि-मुख बिगड जाता है, ऐसी योनि वीर्य्य ग्रहण नहीं करती, अतएव गर्भ नहीं रहता।

२०. बाहरी योनिकी मामूली सूजनसे।

१. इस रोगमे मैथुन कष्टके साथ होता है, बढ़े हुए रोगमें मवाद पड़ जाता है। इस कारण गर्भ नहीं रहता।

२१. योनिकी सड़नसे।

१. इस रोगमें घाव होकर सड़न फैलती है अतएव मैथुन अत्यन्त कष्टसे होता है। इससे योनि दूषित हो जाती है। अतएव गर्भ नही रहता।

२२. योनिकन्द।

१. इस रोगमें बड़हलके फल समान योनिमें एक गाँठ उत्पन्न हो जाती है, अतएव गर्भ नही रहता।

२३. योनिके घाव से।

१. इस रोगमें अन्दर घाव पड़ जाते हैं, अत्यन्त पीड़ा और जलन होती है। अतएव योनि दूषित हो जाती है और गर्भ धारण नहीं कर सकती।

२४. योनि-भ्रंशसे।

१. इस रोगमें योनि आगे या पीछे टल जाती है। इस कारण दूषित होनेसे गर्भ नही रहता।

२५. योनिकी गहरी सूजन।

१. इस रोगमें योनि-मार्ग बहुत तङ्ग हो जाता है, सूजन फैल जाती है। इस कारण योनि दूषित होकर गर्भ धारण नहीं करती।

६. सोम रोगसे।

१. इस रोगमें बहुत मूत्र आता है, मसाले अत्यन्त निर्बल हो जाते हैं और रज बिगड़ जाता है, अतएव गर्भ नहीं ठहरता।

१०. फलवाहिनी नलीके रोगोंसे ।

(इस विषयमें इसी पुस्तकका "फलवाहिनी नली" प्रकरण देखो।)

१ फलवाहिनी नलीका शोथ ।

१. इस रोगमें नली सूज जाती है अतएव अण्ड और गर्भाशय दूषित हो जाते हैं, इसलिये गर्भ नहीं रहता ।

२ फलवाहिनी नलीका टेढा हो जाना ।

१. इस रोगमें नली टेढी हो जाती है, अतएव गर्भ-अण्ड और गर्भाशयमें विकार उत्पन्न हो जाता है, इसलिये गर्भ नहीं रहता ।

३ फलवाहिनी नलीमें रक्त जम जाना ।

१. इस रोगमें रक्त जमकर गर्भअण्ड और गर्भाशय दोनोंमें विकार उत्पन्न हो जाता है, अतएव गर्भ नहीं रहता ।

११ उपदंशसे ।

(इस विषयमें इसी पुस्तकका 'उपदंश' प्रकरण देखो)

१ यह छूतदार रोग है, इसमें योनि और गर्भाशय इत्यादि नष्ट हो जाते हैं। रजजंतु निकम्मे पड़ जाते हैं, अतएव बढ़े हुए रोगमें गर्भ नहीं रहता ।

१२. रजकीटके निकम्मे होनेसे ।

१ जब रजका कीड़ा निकम्मा हो जाता है, तो गर्भ नहीं रहता ।

(२) पुरुषोंमें होनेवाले कारण ।

१३. लिंगेन्द्रियके छोटे होनेसे ।

१. छोटी लिंगेन्द्रिय ठीक रीतिसे वीर्य्य अंदर नहीं पहुंचा सकती, अतएव ऐसा होनेपर गर्भ नहीं रहता । (शा० क०)

१४. वीर्य्य कीट उत्तम न होनेसे ।

१. जब वीर्य्य-कीट अर्थात् वीर्य्य-जन्तु अच्छे नहीं होते और उनमें कूदनेकी शक्ति नहीं होती, तो संयोग होने-पर भी गर्भ नहीं रहता ।

१५. फ़ोतेका न होना या अधूरा होना ।

१. प्रायः ऐसा होता है कि पुरुषके फ़ोते अच्छी तरह नहीं उतरते । ऐसा होनेपर इस प्रकारके पुरुषसे गर्भ नहीं रहता ।

२. फ़ोतोंका अधूरा खिलना । इसका अर्थ यहहै कि फोतों का अधूरा बना होनाहै । ऐसी दशा में इस प्रकार के पुरुष के संयोगसे गर्भ नहीं रहता ।

१६. हस्तमैथुन करनेसे ।

१. वह पुरुष कि जो प्रमादके कारण एकान्तमें अपना वीर्य्य हाथसे मैथुनके तरीकेपर गिरा देते हैं उनकी लिंगे-न्द्रिय शिथिल पड़ जाती है, और वीर्य्य दूषित हो जाता है । अतएव उनसे गर्भ नहीं रहता । (रतिशास्त्र)

१७. फ़ोतोंकी नसोंका शोथ ।

१. फ़ोतोंमें एक प्रकारका शोथ हो जाता है । मांस और पनी चढ़ जाता है । इस प्रकारके बढ़े रोग से फ़ोते संयोग कालमें अपना काम ठीक ठीक नहीं कर सकते, अतएव गर्भ नहीं रहता । (१ा० क०)

१८. गरमी और सूजाकसे ।

१. इन रोगोंसे वीर्य्य नष्ट हो जाता है और उसके वीर्य्य-जन्तु निकम्मे हो जाते हैं, अतएव बढ़े हुए रोगमें गर्भ नहीं रहता ।

१९. प्रमेह रोगसे।

१. इस रोगमें वीर्य्य नष्ट करता है, यह वीर्य प्रकारका होता है। वीर्य्य और होनेकेकारण उसकेजन्तु निकम्मे होजाते हैं, अतएव ऐसे बढ़े हुए रोगमें गर्भ नहीं रहता।

२० वीर्य्य जन्तुओंका न होना।

१. यह अतिमैथुन से होता है। जितना अधिक मैथुन किया जायगा वीर्य्यमें जन्तुओं की उतनी ही कमी होगी ऐसी अवस्थामें मैथुन करनेसे गर्भ नहीं रहता।

२१. लिंगेन्द्रियका ढीला पड़ जाना।

१. यह रोग वीर्य्यदोष लौंडेबाजी और हस्तमैथुन इत्यादि बुरे कर्मों से होता है। अतएव ऐसी दशा में गर्भ नहीं रहता।

२२. नामर्दी से।

१. जितने तरहके नामर्द होते हैं, वे सब स्त्री को गर्भ या स्थ नहीं कर सक्ते। अतएव ऐसोंके संयोग से गर्भ नहीं रहता।

२३. अनेक प्रकारके दूषित वीर्य्यसे

(इस विषय में हमारी पुस्तक "शुद्ध और दूषित रजवीर्य्य प्रकाश" देखो।)

१. बहु काल दूषित वीर्य्यसे।

१. ऐसे वीर्य्यका बहुत कालमें काला लिये दूषित होताहै, अतएव गर्भ धारण के उपयोगी नहीं होता।

२. पित्तके दूषित वीर्य्यसे

१. इस रोगमें वीर्य्य नीले पीले रङ्गका दूषित होता है। इसलिये इनसे गर्भ नहीं रहता।

कफके दूषित वीर्य्यसे।

१. ऐसे वीर्य्यका रङ्ग सफेदी में पीलापन लिये होता है, अतएव इससे गर्भ नहीं रहता।

४. खूनके दूषित वीर्य्यसे।

१. इस रोग में वीर्य्य का रंग लाल होता है, अतएव ऐसे दूषित वीर्य्य से गर्भ नहीं रहता।

५ कफ और वायुके दूषित वीर्य्य से।

१. ऐसे वीर्य्य में गाँठें पड़ जाती हैं, अतएव दूषित हो जाता है और गर्भ नहीं रहता।

६ पित्त और कफके दूषित वीर्य्यसे।

१. ऐसे वीर्य्यमें बदबू आती है और वीर्य्य पीप के समान हो जाता है। अतएव इससे गर्भ नहीं रहता।

७. पित्तऔर वायुके दूषित वीर्य्यसे।

१. ऐसा वीर्य्य कमज़ोर रहता है। अतएव इससे गर्भ नहीं रहता।

८ वात, पित्त और कफके दूषित वीर्य्य से।

१. ऐसे वीर्य्यमें मलमूत्रकी बदबू सी आती है, अतएव दूषित होने से गर्भ नहीं रहता।

२४-लिंगके अत्यन्त मोटे और टेढ़े होनेसे।

१. ऐसी दशामें वीर्य्य उस स्थान पर नहीं पहुँच सकता जहाँ पर कि वीर्य्य को पहुंचना चाहिये। अतएव गर्भ नहीं रहता। (रतिशास्त्र)

(३) स्त्री और पुरुषके मिले हुए दोषोंसे।

२५. स्त्री पुरुष दोनोंके एक साथ स्खलित न होनेसे।

१. गर्भ तभी रहता है जब कि स्त्री और पुरुष दोनों एक

ही साथ स्खलित हों। आगे पीछे स्खलित होनेसे, गर्भ नहीं रहता। अतएव सर्वगुणसम्पन्न माता-पिताके रहते हुए भी गर्भ धारण नहीं होता। (रति-शास्त्र)

२६. समयके बाहर संयोग होनेसे।

१. रजस्वला होनेके दिनसे सोलह दिन तक गर्भ रहसकता है, जब इसके बाद संयोग होता है तो गर्भ नहीं रहता। गा० क०

२७. कम अवस्था होने पर।

१. जब स्त्री की अवस्था कम हो अर्थात् रजस्वला होनेके पहले और कुछ दिन पीछेतक रजवीर्य्य इस योग्य नहीं होते कि गर्भ धारण हो सके, तो गर्भ नहीं रहता। (गा० क०)

२८. अवस्था अधिक हो जानेपर।

१ ऐसी दशामें रज और वीर्य्य के कीड़े निकम्मे हो जाते हैं। अतएव गर्भ नहीं रहता।

२९. अतिमैथुनसे।

१ यह बहुत बुरी बात है। जितना अधिक मैथुन होगा निर्बलता उतनी ही बढ़ेगी और रजवीर्य्य के जन्तु उतने ही कम और निर्बल होंगे। अत्यन्त मैथुन होने-पर रजवीर्य्य के जन्तु अत्यन्त निर्बल हो जाते हैं। उनके शक्तिहीन होनेसे गर्भ नहीं रहता।

३०. स्त्री कोषमें वीर्य्यकीटके न मिलने से।

१ ऐसा उसी समय होता है जब कि स्त्री पुरुष दोनोंमें से एक पहले और दूसरा पीछे स्खलित हो। साथ साथ

स्खलित होनेसे अवश्य दोनोंके कीटोंका मिश्रण होता है। अतएव आगे पीछे स्खलित होनेसे गर्भ नहीं रहता

३१. गर्भाशयमें मिले हुए रज-वीर्य्यके बाहर निकल आनेसे

१, ऐसा उस समय होता है जब कि गर्भाधानके समयमें या प्रदर-रोगमे गर्भाशयका मुख आवश्यकतासे अधिक खुल जाता है। ऐसी अवस्थामे गर्भ नहीं रहता।

३२, प्रकृतिके विरुद्ध संयोगसे।

१. उलटे, टेढ़े, करवट इत्यादि होकर संयोग करनेपर गर्भाशयमें विकार उत्पन्न हो जाता है, अतएव गर्भ नहीं रहता। (श० क०)

३४, अधूरा मैथुन होनेसे।

१. यह दशा उस समय होती है कि जब स्त्रीकी इच्छा देर तक संयोग करनेकी हो और पुरुष उसके पहले ही स्खलित हो जाय। ऐसी अवस्थामें भी गर्भ नहीं रहता। (श० क०)

इस प्रकार अनेक कारणोसे रोगी और नीरोग स्त्रियाँ गर्भ धारण नहीं करती। इसमें पुरुष और स्त्री दोनोंको सावधान रहना चाहिये।

(२४) गर्भाधानमें स्त्री और पुरुष की अवस्था।

लोग यह समझते हैं कि रजस्वला होनेके साथ ही साथ स्त्रियोंमें गर्भ धारण करनेकी योग्यता भी आ जाती है और चौदह पन्द्रह वर्ष की अवस्थाका पुरुष गर्भाधान कर सकता है। इसमे सन्देह नहीं कि ऐसा हो सकता है, क्योंकि हमारे देशमे कन्याएँ जल्द सयानी बना ली जाती हैं और ब्रह्मचर्य्य

का महत्व न जानते हुए बच्चे उठते हुए कामवेगको रोक नहीं सकते। ऐसी दशामें कच्चे रजवीर्य्यसे उत्पन्न हुई सन्तान कहाँ-तक योग्य हो सकती है? जिस प्रकार कच्चे फलका वीर्य्य अच्छे खेतमें बोनेसे और अच्छा वीर्य्य बिना कमाये हुए खेत-में बोनेसे नहीं जमता या जमनेपर किसी योग्य नहीं होता, उसी प्रकार कम अवस्थाके गर्भाधानको समझना चाहिये। रज वीर्य्य अवस्थाके अनुसार पकता है और उसी समयकी सन्तान उत्तम होती है। इस विषय में कई मत हैं।

१. स्त्री और पुरुषकी अवस्था।

१ वैद्यका मत।

१. पच्चीस वर्षकी अवस्थामें पुरुषका वीर्य्य और सोलह वर्षकी अवस्थामें स्त्रीका रज बराबर अच्छी तरह पक जाता है। (श० क०)

२ सोलह वर्षसे कम उम्रकी स्त्री और पच्चीस वर्षसे कम अवस्थावाले पुरुष हों और ऐसी अवस्थामें यदि गर्भा-धान हो जाय, तो गर्भ कुक्षिमें विकारसे खण्डित हो जाता है। यदि बच्चा हो भी जाय तो जीता नहीं। यदि जीवे भी तो अत्यन्त दुर्बल होता है। इस कारण अत्यन्त छोटी अवस्थामें गर्भाधान न करना चाहिये।

(सु० शा० अ० १० श्लोक ६७—६८)

३. सोलह वर्षकी स्त्रीका बीस वर्षके पुरुषसे संयोग हो और साथ ही गर्भाशय शुद्ध और हृदय दोषसे संतप्त न हो, तो वीर्य्यवान पुत्र उत्पन्न होता है। यदि इससे कम अवस्था हो, तो रोगी और अल्पायु सन्तान उत्पन्न होती हैं, या गर्भ ही नहीं रहता। (वा० शा० अ० १ श्लो० ८—९)

स्त्रीकी अवस्थाके विषयमे मतभेद नहीं है । सब सोलह वर्षकी अवस्थाका नियम बतलाते हैं; परंतु पुरुषोंके लिये दो मत हैं। एक आचार्य्यकी राय है कि २५ और दूसरेका मत है कि २० वर्षकी अवस्था गर्भाधान कराने योग्य है । अतएव गर्भाधानके लिये ज्यादासे ज्यादा पुरुषकी अवस्था पच्चीस और कमसे कम बीस होना ज़रूरी है ।

(२५) गर्भाधानका समय।

समय बड़ा बलवान है। सबको इसके सामने सर झुकाना पड़ता है। बिना इसके कोई बात नही होती । यदि समयके विपरीत कोई बात की भी जाय, तो उसका फल उलटा होता है। जिस प्रकार वर्षाके समयमे नये वृक्ष लगाये जाते हैं, तरह तरहकी बेलें चढ़ाई जाती हैं, इसी प्रकार स्त्रियोमें रजोधर्मके पीछे गर्भाधानका समय समझना चाहिये। इस विषयमे अनेक मत हैं।

१. गर्भाधानका समय।

१. धर्मशास्त्रका मत।

१. रजस्वला होनेके चार दिन सहित स्त्रियोके लिये सोलह दिन-रात्रि स्वाभाविक ऋतु-काल होता है । इनमेंसे आदिमें रजोधर्मकी चार, ग्यारहवी और तेरहवीं रात्रि निषिद्ध हैं, बाकी १० उत्तम हैं। (मनु० अ० ३ श्लो० ४६-४७)

२. सोलह रात्रियोंमे रजोधर्मकी चार रात्रि निकालकर बाकी रात्रि अच्छी हैं। (व्या० अ० १)

३ स्त्रियोमें ऋतु रजोदर्शनसे सोलह रात्रि रहता है, उनमे सम रात्रियोंमे गमन करे और आदिकी चार रात्रियोको छोड़ दे, तो वह ब्रह्मचारी होता है।(या० वि० प्र० ७९)

२ वैद्यकका मत

१. रजस्वला होनेके दिनसे सोलह रात्रियोंमें पहलेकी तीन और एक तेरहवीं रात्रि कुल चार रात्रि निंदित हैं। वारह रात्रि उत्तम हैं।

(सु० शा० अ० २ श्लो० ३१ और अ० ३ श्लो० ५)

२. रजोदर्शनके तीन दिन पीछे जब रज न निकले, तो तेरह दिन गर्भाधान योग्य हैं। (च० शा० अ० २ श्लो० ७)

३. सोलह दिनोंमें पहलेकी चार रात्रियोंको छोड़कर वारह रात्रियां गर्भाधान करने योग्य हैं। (शा० क०)

अब धर्मशास्त्र और वैद्यकमें कई मत भेद हैं। मनुमहाराज पहलेकी चार रात्रियां, ग्यारहवीं और तेरहवीं छोडकर दस रात्रि उत्तम मानते हैं, परंतु याज्ञवल्क्य और व्यास केवल चार रात्रि निकाल कर वारह उत्तम मानते हैं। इसी प्रकार वैद्यकमें सुश्रुत महाराज आदिकी तीन और तेरहवीं निंदित मानकर वारह रात्रि शुभ और गर्भाधान योग्य मानते हैं। महात्मा चरकके मतसे जब रज न निकले उसके वाद सब रात्रियां उत्तम हैं। इसी प्रकार शरीर-कल्पद्रुमके लेखक मेडा-चार्य्य आरम्भकी चार रात्रियां छोडकर वारह रात्रि उत्तम मानते हैं। अतएव इन भेदोंका निर्णय होना ज़रूरी है।

२. आदिकी चार रात्रियां क्यों वर्जित हैं?

इसके अनेक कारण हैं।

१. पहली रात्रि—वैद्यकका मत

१. रजस्वला होनेके पहले दिन संयोग करनेसे पुरुषकी उमर कम होती है और यदि गर्भाधान हो भी जाय तो जन्म होते ही बालककी मृत्यु होती है।

(सु० शा० अ० २ श्लो० ३०)

२. रजवती के साथ पहले दिन गमन करने से पुरुषको कुष्ट रोग होनेका भय रहता है। यदि गर्भ रह जाय, तो बालक गर्भमे या पैदा होते ही मर जाता है। (शा० क०)

२. दूसरी रात्रि—वैद्यकका मत।

१. रजस्वला होनेके दूसरे दिन संयोग करने से पुरुष की उमर कम होती है। यदि गर्भ रह जाय तो जन्म लेते ही वा सौरीहीमें बालक १० दिनमें मर जाता है।
(सु० शा० अ० ३ श्लो० ३२)

२. दूसरे दिन गमन करने से उपदंश (गरमी) और रक्त विकार हो जाता है और स्त्रियों को गर्भाशय के रोग हो जाते हैं। (शा० क०)

३. तीसरी रात्रि—वैद्यका मत।

१. रजस्वलाके साथ तीसरे दिन संयोग करने से पुरुषकी उमर कम होती है। यदि गर्भ रह जाय तो अधूरे अंगकी और थोडे दिन जीनेवाली सन्तान उत्पन्न होती है।
(सु० शा० अ० श्लो० ३२)

२. तीसरे दिन गमन करने से पुरुषके आँखों की रोशनी जाती रहती है और गर्भ रह जाने पर बालक अंगहीन उत्पन्न होता है। (शा० क०)

४. चौथी रात्रि—वैद्यकका मत

१. रजस्वला के चौथे दिन गमन करनेसे बालक सब अंगों से पूर्ण बहुत दिनोंतक जीनेवाला होता है।
(सु० शा० अ० २ श्लो० ३२)

२. चौथे दिन गर्भमें आया हुआ बालक उत्तम और दीर्घायु होता है, परन्तु इस दिनके संयोगसे गर्भाशय को हानि पहुँचती है। (शा० क०)

५ चारों रात्रियोंके संयोगपर विचार—वैद्यक कामत।

१. तीन रात्रियों में रजवती स्त्री से संयोग करने से अनेक प्रकारके रोग हो जाते हैं। जैसे, कुष्ट गरमी, मूत्रकृच्छ्र, रक्त-विकार और चौथी रात्रि में गमन करने से गर्भाशय को बहुत बडी हानि पहुचती है। कारण यह है कि रज निकलने से उसमें कुछ परिवर्तन हो जाता है। अतएव संयोग की रगड से हानि पहुँचती है। (रतिशास्त्र)

२. जब तक रज निकलता है, उस समयतक गमन करने-से पुरुषके वीर्य्य का नाश हो जाता है। (श० क०)

२. धर्मशास्त्रका मत

१. रजवती स्त्री के साथ गमन करने से पुरुष की बुद्धि, तेज, बल नेत्र की ज्योति और उमर घट जाती है। (मनु० अ० ४० श्लो० ४१)

२ रजस्वला होने पर आरम्भ की चार रात्रियो मे गमन न करना चाहिये, क्यों कि इनमे स्त्री पुरुप दोनों को रोग उत्पन्न हो सकता है। (वृ० मनु०)

३. चौथी रात्रिमें गमन करने से थोड़े दिनों जीने वाला और दरिद्र पुत्र उत्पन्न होता है। (नि० सिंधु०)

ऋतु समय में जब कि चार दिन रज निकलता है या चौथे दिन जब कि रज न निकलता हो, संयोग करना चाहिये या नहीं? पहलेके तीन दिन में सयोग या गर्भाधानके लिये तो सर्वसम्मति है—कि न करना चाहिये। परन्तु चौथे दिनके विपय में मतभेद है वैद्यकके आचार्य लोग दोनों बात मानते हैं। धर्मशास्त्र में भी दोनों बातें मानी हैं। क्यों कि मनुने रज-वतीके गमनसे पुरुपकी बुद्धि इत्यादिका ह्रास मानाहै। केवल रजवती कहने से यह पता नहीं चलता कि तीन दिनके लिये

कहा गया है या चार दिनके लिये। इससे तो यही मालूम होता है कि जबतक रज निकला करे तबतक संयोग न करना चाहिये।

चौथे दिन संयोगके लिये सुश्रुतकी भी आज्ञा है, परन्तु चरकने यह नही माना है। इनका मत है कि जब रज न निकलता हो तो चौथे दिन संयोग करे।

शरीर कल्पद्रुम (वैद्यक) के मतसे चौथे दिन संयोग न करना चाहिये, क्योंकि इस दिनके संयोग से स्त्रीको रोग उत्पन्न होता है।

धर्म्मशास्त्र (बृ० मनु०) से भी ऐसा ही मालूम होता है और निर्णय-सिन्धुका मत भी है कि चौथे दिन गर्भाधान होने से अल्पायु और दरिद्र सन्तान उत्पन्न होती है। इसलिये यह विचार निश्चय किया गया कि अल्पायु और दरिद्र सन्तानको लेकर ही मनुष्य क्या करेगा, जिसके उत्पन्न होनेसे स्त्रीको भी रोगी बनना पड़े। अतएव चौथे दिन संयोग न करना चाहिये यही सार सम्मति है?

४. ग्यारहवीं रात्रि क्यों वर्जित है?

इसमें अनेक मत हैं।

१ धर्मशास्त्रका मत।

१. मनुने इस बातको कहा है कि ग्यारहवी रात्रिमे गर्भाधान न करना चाहिये, परन्तु कोई कारण नहीं बतलाया। दूसरे ग्रन्थोंसे पता चलता है कि—

ग्यारहवें दिनके गर्भाधानसे धर्महीन कन्या उत्पन्न होती है। (नि० सिन्धु)

२. वैद्यकका मत ।

१. ग्यारहवीं रात्रिके गर्भाधानसे वेश्या या गुप्त व्यभिचार करानेवाली कन्या उत्पन्न होती है । (रतिशास्त्र)

३ हिन्दुओंका प्राचीन मत ।

१ एक वार भोजने कालिदाससे पूछा कि—"कर्मका बुरा फल कैसे होता है ।" कालिदासने उत्तर दिया कि—जिस प्रकार ग्यारहवीं रात्रिके गर्भसे दुष्ट सन्तान।" (भो०का०म०)

४. तेरहवीं रात्रि क्यों वर्जित है ।

१ धर्मशास्त्रका मत ।

१. इस बातको कि तेरहवीं रात्रिमें गर्भाधान न करना चाहिये मनु और सुश्रुतने माना है । परन्तु कारण नहीं लिखा । केवल इतना ही लिखा है कि यह निन्दित रात्रि है । दूसरे ग्रन्थोंसे पता चलता है कि—

तेरहवीं रात्रिमें गर्भाधान होनेसे पापिनी और वर्णसंकर करनेवाली अर्थात् व्यभिचारिणी, अन्य पुरुषोंसे संयोग करने-वाली, कन्या उत्पन्न होती है । (नि० सिन्धु)

२ वैद्यकका मत ।

१. तेरहवीं रात्रिको गर्भाधान होनेसे कुरूपा और कुलटा कन्या उत्पन्न होती है । (रतिशास्त्र)

चारों रात्रि पहलेकी और ग्यारहवीं व तेरहवीं रात्रियों का निर्णय, जहाँ तक प्रमाण मिले हैं, किया गया है । सोलह रात्रि-योंमें ये छ रात्रियाँ जो निषिद्ध मानी गई हैं, निकाल कर दस रात्रि बचीं । अब इनका विचार करना भी जरूरी है ।

५. गर्भ धारण योग्य दस रात्रियाँ ।

१ धर्मशास्त्रका मत ॥

१. इन रात्रियोंके निर्णयका सम्बन्ध धर्मशास्त्रसे विशेष है;

क्योंकि मनु महाराजने इन्हींको श्रेष्ठ माना है। इनमें पर्व, तिथि, दिन और समयका विचार आवश्यक है।

६, पर्व और तिथिपर विचार।

१. धर्मशास्त्रका मत।

१. अमावस्या, अष्टमी, पूर्णिमा और चतुर्दशीको स्त्रीसे संयोग न करना चाहिये। (मनु० अ० ४ श्लो० १२८)

२. ऊपर कहे हुए मनुके प्रमाणके अनुसार गौतम स्मृति अ० ५ श्लो० १ और वृ० पा० अ० ४ श्लो० ६६ और विष्णु स्मृति अ० ६८ में भी पाया गया है।

३. छठ, अष्टमी, चौथ, दोनों पक्षोंकी चतुर्दशी और अमावस्या तथा पूर्णिमा इनमें संयोग व गर्भाधान न करना चाहिये। (नि० सिन्धु)

४. श्राद्ध तिथियोंमें संयोग न करना चाहिये। (वृ० नारद)

७, पर्व दिनका विचार।

१. धर्मशास्त्रका मत।

१. स्त्रियोंसे संयोग करनेमें मनुष्यको पर्व दिन छोड़ देना चाहिये। (मनु० अ० ४ श्लो० ८५)

२. ऊपर कहे हुए प्रमाणके अनुसार वसिष्ठ स्मृति अ० १२ श्लो० १८ और वृ० पा० अ० ४ श्लो० ६६ में भी पाया गया है।

पर्व दिनमें व्यतीपात, प्रदोष, एकादशी, संक्रान्ति, ग्रहण, रामनवमी, जन्माष्टमी इत्यादि हैं।

८, पर्व समयपर विचार।

१. धर्मशास्त्रका मत।

१. पर्व समयमें स्त्री-संयोग न होना चाहिये। (वृ० पा० अ० ४)

१. दिन, सन्ध्या और रात्रिपर विचार।

१. धर्मशास्त्रका मत।

१. संध्याके समय गर्भाधान या स्त्रीप्रसङ्ग नहीं होना चाहिये। (कू० पा० अ० ८ श्लो० ६६)

२. रात्रिका गर्भाधान उत्तम है। (व्यास० अ० २ श्लो० ३२)

२ वैद्यकका मत।

१. दिनमें गमन करनेसे मनुष्यकी आयु, बुद्धि और आँखोंकी ज्योति कम होती है। (भा० प्र०)

२. दिनमें गमन करनेसे सूर्यमुखी बालक उत्पन्न होनेका भय रहता है। (रतिशास्त्र)

३. प्रातःकाल और आधी रातके समय संयोग करनेसे वायु कुपित होती है। (भा० प्र०)

३ पुराणका मत।

१. सायङ्कालके समय गमन करनेसे कश्यप और अदिति ऐसे सुयोग्य मातापिताके होते हुए भी हिरण्यकशिपु-का जन्म हुआ। (भाग०)

२. आधी रातके पश्चात् गमन करनेसे पुरुषको अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। (न० मा०)

इससे सिद्ध है कि दिनमें, सन्ध्याको और रात्रिमें आधी रातके बाद संयोग न करना चाहिये।

इस विषयके पूरे विचारसे मालूम होता है कि रजस्वला होनेके दिनसे चार रात्रि, ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रिको छोड़ कर दश रात्रि संयोग और गर्भाधान करने योग्य है। इन दश रात्रियोंमें पर्वतिथि, पर्वदिन, पर्वसमय, श्राद्धतिथि, दिन, सन्ध्या और आधी रातके बादका समय इत्यादि छोड़

देना चाहिये। परन्तु यह विचार रहे कि जो समय प्रायः आठ बजेसे ग्यारह बजे तक का मिलता है इसमें भोजन करनेके तीन घण्टे बाद संयोग किया जाय। जो जो बातें निषिद्ध मानी गई हैं, उनको छोड़कर रात्रिमें ६ बजेसे ११ बजे तकका समय संयोगके लिये उत्तम है।

(२६) बिना रजस्वला हुए भी गर्भ स्थित हो जाता है।

लोग यह कहा करते हैं कि बिना रजस्वला हुए भी गर्भ रहता है, यह बात असम्भव नहीं है। ईश्वर सब कुछ कर सकता है। उसकी माया बड़ी विचित्र है कि जिसको समझने वाला अकेला वही है। इस विषयमें आचार्योंका मत यों है।

१. वैद्यकका मत।

१. रजस्वला न होनेपर भी ऋतुकाल अर्थात् गर्भ स्थितिका समय कभी कभी हो जाता है। (सु० शा० अ० २ श्लो० ५)

२. ऐसा ऋतुकाल स्त्रियोंको ऐसे समयमें होता है जब कि बालक दूध पीता हो और छोड़ दे या दूध पीते हुए बालककी मृत्यु हो जाय या बालक गोदमें हो और बहुत दिनोंसे पतिकी इच्छा हो। यदि ऐसे समयपर संयोग हो जाय तो गर्भ रह जाता है। इसको इनामका गर्भ कहते हैं। (शा० क०)

३. इस प्रकारसे जो स्त्री ऋतुमती होती है उसका मुख पुष्ट और प्रसन्न होता है। शरीर, मुख, और मसूढ़े गल-गलाये हुए से होते हैं। स्त्रीको पुरुषकी इच्छा होती है, मीठी, प्यारी बातें करती है; कुक्षि, नेत्र और बाल ढीले हो जाते हैं; हाथ, छाती, कमर, नाभि, जानु और जाँघें

फड़कने लगती हैं। हर्ष और आनन्दमें स्त्री मग्न हो जाती है। जब ऐसे लक्षण हों, तो बिना रजस्वला हुए भी स्त्रीको ऋतुमती समझना चाहिये।

(सु० शा० अ० ६ श्लो० ६ व ७)

८. जब कि रजस्वला होनेको दो चार दिन बाकी हों और पुरुषकी प्रबल इच्छा हो तो ऐसे समयमें भी पुरुष-संयोगसे गर्भ रह जाता है। (रति शास्त्र)

इस प्रकार बिना रजवती हुए भी स्त्रियाँ गर्भवती हो जाती हैं।

(२७) कन्या या पुत्र उत्पन्न करना मनुष्यके आधीन है।

हम लोगोंमें बहुतसे लोग ऐसे हैं कि कर्तव्यको न समझ कर अपनी सारी बातें भाग्यपर ही छोड देते हैं। हम कोई बात ऐसी नहीं देखते जो कर्तव्यके आधीन न हो। कुछ पढ़े लिखे लोग प्रकृति (कुदरत) को प्रधान मानकर उसीके भरोसे रहते हैं। ऐसे लोगोंका कहना है कि प्रकृति आप ही आप कार्य्य कर लेती है; परन्तु इसके साथ ही साथ यह भी जानना पड़ेगा कि प्रकृतिके गुप्त भेदोंका पता लगा कर उसको सहायता देना हमारा परम कर्तव्य है। यह बात तो सब जानते हैं कि संयोग करनेपर पुत्र या कन्या होती है। इसी अन्ध-विश्वासपर रहते हुए प्रकृतिके गुप्त भेदोंका पता नहीं लगता। इन बातोंके न जाननेसे देशकी जो हानि हो रही है, वह विचार-क्षेत्रसे कहीं बाहर है। यही कारण है कि कहीं लडके ही लड़के और कहीं लड़कियाँ ही लड़कियाँ दिखाई पडती हैं। लोग इसको ईश्वरकी देन समझते हैं। हाँ, यह देन अवश्य है; परन्तु ईश्वर देता कैसे है? घर आकर तो दे नहीं जाता? उसका

देना भी तो हमारी क्रियाओंके अधीन है। अतएव हमारा काम है कि हम विद्वानोंकी बतलाई उन क्रियाओंको देखे कि जिनका उपदेश धर्म्मशास्त्र, वैद्यक और अनेक रीतियोंसे किया गया है, और जिसको हमने केवल भाग्य के भरोसे भुला दिया है। किसी समयमें हम इस विषयके मर्मज्ञ और हमारी स्त्रियाँ इन गुप्त भेदोंकी पण्डिता थीं, परन्तु आज इन बातोंका पता नहीं है। केवल भाग्यकी ही महिमा दिखलाई पडती है। इस विषयमें प्रकृतिके अनेक भेद हैं और उनमें नये और पुराने अनेक मत हैं, जिनके अनुसार कन्या और पुत्र उत्पन्न करना मनुष्यके अधीन है।

१, वेदका मत।

१. वीर्य्य बलवान होनेसे पुत्र और रज बलवान होनेसे कन्या उत्पन्न होती है। (गर्भोपनिषद)

२, धर्मशास्त्रका मत।

१. रजस्वला होनेके दिनसे ६-८-१०-१२-१४ और १६वीं रातमें गर्भाधान करनेसे पुत्र और ५-७-९-११-१३ और १५ वीं रातके गर्भाधानसे कन्या उत्पन्न होती है।

(मनु० अ० ३ श्लोक० ४८)

२. पिताका वीर्य्य अधिक होनेसे पुत्र और माताका रज अधिक होनेसे कन्या होती है। यदि रज और वीर्य्य बराबर हों, तो नपुंसक या दो सन्तान होती हैं। यदि वीर्य्य क्षीण या कम हो तो गर्भ ही नहीं रहता।

(मनु० अ० ३ श्लो० ४९)

३. गर्भाधानके समय रज बलवान होनेसे कन्या और वीर्य्य बली होनेसे पुत्र उत्पन्न होता है। (भा० ध० अ० १२)

३, वैद्यकका मत ।

१. गर्भाधान समयमें वीर्य्य अधिक होनेसे पुत्र और रज अधिक होनेसे कन्या, दोनों बराबर होनेसे नपुंसक सन्तान होती हैं। (सु० शा० अ० ६ श्लो० ४)

(भोज वैद्य और चरकने भी ऐसा ही कहा है।)

२. रजस्वला होनेसे ६-८-१०-१२-१४ और १६ वीं रातमें गर्भाधान होनेसे पुत्र और ५-७-९-११-१३ और १५वीं रातमें कन्या उत्पन्न होती है। (सु० शा० अ० ६ श्लो० ११)

(विदेहाचार्य्य भोज वैद्य और भावमिश्र भी ऐसा ही कहा है।)

३. पुरुषके दाहिने अङ्गसे पुत्र और बाएँसे कन्या, इसी भाँति स्त्रीके दाहिने अङ्गसे पुत्र और बाएँसे कन्या उत्पन्न होती हैं। (शा० क०)

४. स्त्रीके काममन्दिरवाले मुखमें तीन नाड़ी होती हैं। गर्भाधान समय में इनमें वीर्य्य गिरने से गर्भ रहता है। इनका ब्यौरा इस प्रकार है। (भा० ग० प्र० श्लो० १७ से २०)

(१) समीरणा—इस नाडीमें वीर्य्य गिरने से गर्भ नहीं रहता।

(२) चन्द्रमसी—इसका मुख थोड़े ही संयोगसे खुल जाता है। इसमें वीर्य्य गिरने से कन्या होती है।

(३) गौरी—इसका मुख खूब अच्छी तरह कामोद्दीपन होनेसे खुलता है। इसमें वीर्य्य गिरनेसे पुत्र उत्पन्न होता है।

४, हिन्दुओंका प्राचीन मत ।

१. एक बार महारानी लीलावतीने महाराज भोजसे कहा

कि—"आपके दरबार में अनेक विद्वानोंके रहते हुएभी यह निश्चय नहीं हुआ कि कन्या और पुत्रका गर्भ कैसे बनता है।" उस समय महाराज चुप रहे। दूसरे दिन दरबारमें महाराजने प्रश्न किया कि—"मातापिताका रजवीर्य्य ही कन्या और पुत्र उत्पन्न होनेका कारण है, इसलिये एक माता पिताके रजवीर्य्यसे कभी कन्या और कभी पुत्र उत्पन्न होनेका कारण क्या है?" सभामें अनेक विद्वान् थे, उनमेंसे राज्यवैद्यने कहा—"राजन् स्त्रीऔर पुरुष अपने अपने प्रधान अङ्गसे कन्या और पुत्र उत्पन्न करते हैं। पुरुषका प्रधान दाहिना और स्त्री का प्रधान बायाँ अङ्ग है। जब पुरुषके दाहिने अङ्गसे निकला हुआ वीर्य्य स्त्रीके दहिने अङ्गसे निकले रजसे मिलता है, तो पुत्र और जब पुरुषके बाएँ अंगसे निकला वीर्य्य स्त्रीके बाएँ अंगसे निकले हुए रजके साथ मिलता है, तो कन्या उत्पन्न होती है। (भो० जी० च० दुर्गादत्त ० लि०)

५. बौद्ध लोगोंका मत।

१. कन्या और पुत्रका होना माता पिता के सबल और निर्बल रजवीर्य्यपर निर्भर है।

६. यूनानीमत।

१. वीर्य्यके प्रबल होनेसे पुत्र और रजके प्रबल होनेसे कन्या होती है।
२. स्त्रीपुरुषके दाहिने अंग के अवयवसे पुत्र और बाएँसे कन्या उत्पन्न होती है। (अरस्तू)

७. युरोपीय विद्वानोंकी राय

१. प्रोफेसर मोन्सथ्यूरीकी राय है कि रजोदर्शनसे चौथे

दिन शुद्ध होनेपर तीन चार दिन पीछे रज पक जाता है। इसलिये रजोधर्मसे सात, आठ या दस दिन पीछे संयोग होने से पुत्र और रजोदर्शन से शुद्ध हानेपर उसी दिन या दूसरे तीसरे दिनके संयोगसे कन्या उत्पन्न होती है।

२ डाकृर सीक्स्टकी राय है कि पुरुषके दहिने अण्डसे निकला हुआ वीर्य्य स्त्रीके दहिने अण्डसे निकले रजके साथ मिलकर पुत्र और पुरुषकी वाई गोली अर्थात् अण्डसे निकला हुआ वीर्य्य स्त्रीके बाएँ अण्डसे निकले हुए रजके साथ मिलकर कन्या उत्पन्न करता है।

३ डाकृर वेलहिंग की राय है कि स्त्रीके दहिने अण्डसे पुत्र और बाएँ से कन्या उत्पन्न होती है। एक स्त्रीके नौ पुत्र हुए थे। उसके मर जानेपर गर्भाशयकी जाँचकी गई, तो मालूम हुआ कि इस स्त्रीके दहिनी ओरका अण्ड अच्छा था और बाईं ओरका सूख कर सिकुड़ गया। इसलिए उसके लड़के ही हुए।

८. यूरोपियन विद्वानोंके जाँच

१. डाकृर रूलमेन के इलाजमें एक ऐसा व्यक्ति था कि जिसके बाएँ अण्डमें चोट लग गई थी। वह अच्छा हो गया, परन्तु डाकृर महोदय को अण्डकोषके बिगड़ जानेका सन्देह रहा। इसके बाद उस व्यक्तिके जितनी सन्तानें हुई वे सब पुत्र थे। मरने पर देखा गया, तो मालूम हुआ कि उसका बायाँ अण्ड किसी कामका नहीं था।

२. डाक्टर वेलहिंगने इसी प्रकार एक स्त्री की जाँचकी

जिसका बायाँ अण्ड सूख गया और उसके पुत्र ही पुत्र हुए।

६. मेरी स्वयं जाँच मनुष्योंके विषयमें।

१. बाबू मदनमोहन अरोड़ा जो मेरे पास दो मासतक रहे उनसे इस विषयपर बातचीत होनेसे मालूम हुआ कि उनकी स्त्रीके बाएँ (Ovary) अण्डमें मवाद पड़ गया था। जनाने अस्पतालमें वह अण्ड निकाल लिया गया। इसके पीछे उनकी स्त्रीको चार पुत्र उत्पन्न हुए।

२. मेरे मित्र पण्डित राजबली मिश्रके फोतोंमें पानी भर जाया करता था। उसे आप एक नाईसे निकलवा दिया करते थे। एक बार अंधेरेमें नश्तर देते समय नाईने दहिने अण्डमें लोहेकी छुच्छी कर दी। वे तुरन्त बेहोश हो गये। अस्पताल आये। दहिना अण्ड निकाल लिया गया। वे अच्छे हो गये। इसके बाद उनके तीन कन्यायें उत्पन्न हुई।

१०. मेरी स्वयं जांच पशुओंके विषयमें।

१. देवीपाटनके मेलेमें एक सौदागरके पास सांड़ घोड़ा था। सौदागर यह कहा करता था कि इस सांड़से बछेरी नहीं होती। सांड़ तीन घोड़ियों पर छोड़ा गया। दोको गर्भ रहा और बछेरे पैदा हुए। तीसरे वर्ष सौदागर फिर उस सांड़को लेकर आया, तो देखनेसे मालूम हुआ कि सांड़के दहिने ओरका ही अण्ड है, चोट लगनेसे बायाँ काट कर निकाल दिया गया था।

(सन् १९१६ ई०)

२. मेरे मास्टर पण्डित मालती प्रसादके पास एक कुत्ता

था। दूसरे कुत्तोंसे झगड़ा होनेके कारण उसका बायाँ अण्ड बाहर निकल आया। एक मुसलमानने चीर कर निकाल लिया। इस कुत्तेसे दो कुत्तियोंके गर्भ रहा। दोनोंके सात बच्चे हुए। सब कुत्ते थे, कुत्ती एक भी नहीं थी।

(सन् १९०१)

३. मेरे एक परममित्र शेखजीने दो बकरीके बच्चोंको बधिया कराया। इनमेंसे एक पूरा बधिया नहीं हुआ। अर्थात् एक ओरका अण्ड नहीं निकला। कुछ दिनोंके बाद मालूम हुआ कि एक बकरेके दहिना अण्ड रह गया है। इस बकरेसे दो बकरियोंको गर्भ रहा। दोनोंके छ बच्चे हुए जो सारे बकरे थे, बकरी एक भी नहीं थी।

(सन् १९०९ ई०)

४. मेरे पास एक पालतू बिल्ली थी। वह एक ऐसे बिलावसे गर्भवती हुई कि जिसका बायाँ अण्ड चोट लगनेसे कुछ छोटा पड़ गया था और कभी कभी फूलकर बहुत बड़ा हो जाया करता था। बिल्लीके तीन बच्चे हुए, सब बिलाव थे।

(सन् १९०६ ई०)

जिन लोगोंने इन बातोंपर विचार नहीं किया है उनका कहना है कि कन्या और पुत्र होना ईश्वरके आधीन है या भाग्य में जो हो वही होता है। परन्तु जिन्होंने इसकी बारीकियोंपर विचार किया है, उनका अटल विश्वास यही है कि कन्या या पुत्र पैदा करना मनुष्यके हाथमें है। हम इस विषयमें बहुत खुलासा साफ़ साफ़ लिखना चाहते हैं कि जिससे सर्वसाधारण इस विषयको अच्छी तरह समझ जायँ।

पुत्र अथवा कन्या कैसे पैदा होती है? इस विषयमें हमारा विश्वास इस बातपर है कि स्त्री और पुरुष अपने अपने प्रधान

अङ्गसे कन्या और पुत्र उत्पन्न करते हैं। पुरुषका दाहिना और स्त्रीका बायाँ अङ्ग प्रधान है। जब पुरुषके दहिने अण्डसे वीर्य्य निकलकर स्त्री के दहिने अण्डसे निकले रजके साथ मिलता है तो पुत्र; और जब पुरुषके बाएँ अण्डसे निकला वीर्य्य स्त्रीकेबाएँ अण्डसे निकले रजके साथ मिलता है तो कन्या उत्पन्न होती है। ऐसा कभी नहीं होता कि पुरुषके दहिनें अण्डसे निकला वीर्य्य स्त्रीके बाएँ या पुरुषके बाएँ अण्डसे निकला वीर्य्य स्त्रीके दहिने अण्डके रजसे मिले। इससे यह बात सिद्ध है कि स्त्री और पुरुष दोनोंके दहिने और बाएँ अण्डसे निकला रज वीर्य्य दहिनेका दहिने और बाएँका बाएँसे मिलता है। इसका कारण यह है कि पुरुषका दहिना अङ्ग प्रधान है इसलिये पुरुष के दहिने अण्डमें पुत्रका वीर्य्य और बाएँमे कन्याका। इसी भाँति स्त्रीका बायाँ अङ्ग प्रधान है इस कारण स्त्रीके बाएँअण्ड में कन्या और दहिनेमें पुत्रका रज रहता है। इसलिये पुरुषके दहिने अण्डसे पुत्रका वीर्य्य निकलकर स्त्रीके दहिने अण्डसे निकले पुत्रके रजसे मिलकर पुत्र उत्पन्न करता है और इसी प्रकार स्त्रीके बाएँ अण्डसे कन्याका रज निकलकर पुरुषके बाएँ अण्ड-से निकले कन्याके वीर्य्यसे मिलकर कन्या उत्पन्न करता है।

यहाँ पर पाठकोंको यह शङ्का होगी कि कुछ लोगोका यह मत है कि पुरुष अथवा स्त्रीके दोनों अण्डोंमें एक ही प्रकारका पदार्थ रहता है तो फिर दहिनेमे पुत्र और बाएँमें कन्याका रज वीर्य्य कैसे रहता है? यह एक बड़े भूलकी शङ्का है। सबसे पहली बात तो यह है कि यदि दोनोंमें एक ही पदार्थ होता तो प्रकृतिको दो अण्डे बनानेकीजरूरत ही क्या थी? इसके अतिरिक्त डाकृरोंकी जाँचसे यह पता चलता है कि जब पुरुषका बायाँ अण्ड खराब हुआ तो पुत्र ही पुत्र हुए और जब स्त्रीका

दहिना अण्ड खराब हुआ तो कन्या ही कन्याएँ हुई । इससे साफ जाहिर है कि स्त्री और पुरुषके दहिने अण्डोंमें पुत्र और बाएँमें कन्याका रज वीर्य्य रहता है ।

अब हम पाठकोंको यह दिखलावेंगे कि हम इस विषयमें जितने मत लिख चुके हैं वे सब हमारे माने हुए मतसे मिलते हैं या नहीं । इनमें एक एक मत पर विचार करनेकी आवश्यकता है ।

१. वेद, धर्मशास्त्र, बौद्ध और यूनानी मतसे यह बात कही जाती है कि वीर्य्य बलवान् होनेसे पुत्र और रज बली होनेसे कन्या उत्पन्न होती है । अब यह देखना चाहिये कि रज और वीर्य्य बलवान् कब होता है । इस विषयमें एक विद्वानकी राय है कि पुरुषके दाहिने और स्त्रीके बाएँ अङ्गसे निकला वीर्य्य और रज प्रबल होता है ।

(रतिशास्त्र)

हमने इस बातको माना कि पुरुषके प्रधान दाहिने अङ्गसे वीर्य्य निकल कर स्त्रीके दहिने अङ्गसे निकले रजसे मिलकर पुत्र और स्त्रीके प्रधान बाएँ अङ्गसे निकला रज पुरुषके बाएँ अङ्गसे निकले वीर्य्यसे मिल कर कन्या उत्पन्न करता है । हमारे मतसे ऊपर कहे हुए यह मत कि "बलवान् वीर्य्यसे पुत्र और बली रजसे कन्या उत्पन्न होती है" इस कारण मिलता है कि पुरुषके दाहिने अङ्ग अर्थात् दाहिने अण्डसे निकला हुआ बलवान् वीर्य्य स्त्रीके दहिने अण्डसे निकले निर्बल रजके साथ मिलकर पुत्र और स्त्रीके बाएँ अण्डसे निकला बली रज पुरुषके बाएँ अण्डसे निकले निर्बल वीर्य्यसे मिलकर कन्या उत्पन्न करता है अतएव हमारे माने हुए मतसे यह सिद्धान्त पूरा मिलता है ।

२. धर्मशास्त्र और वैद्यकसे यह बात कही जाती है कि रजस्वला होने से ६-८-१०-१२-१४ और १६ वीं रात्रि में संयोग करने से पुत्र और ५-७-६-११-१३ और १५ रात्रिमे गमन करने से कन्या उत्पन्न होती है। इन रात्रियों मे रजकी दशा पर विचार करना आवश्यक है। इस विषयमें विदेहाचार्य्यने लिखा है कि ४-६-८-१०-१२-१४-१६ इन रात्रियोंमें रज बहुत ही कम और ५-७-६-१३-१५ इन रात्रियोंमें बहुत ज्यादा निकलता है। एक और विद्वान् की राय है कि ४-६-८-१० १२-१४-१६ इन रात्रियोंमे स्त्रीको रज कम निकलता है और इससे पुत्र उत्पन्न होता है। यदि इन रात्रियों में बाएँ अंगसे रज निकले तो वह किसी योग्य नही होता। इसी प्रकार ५-७-६-११-१३-१५ इन रात्रियोंमें स्त्रीके रज अधिक निकलता है और उससे कन्या उत्पन्न होती है। यदि इन रात्रियोंमें रज दाहिने अंगसे निकले तो वह भी किसी योग्य नही होता। (रतिशास्त्र)

इन प्रमाणों से यह बात सिद्ध हुई कि ४-६-८ इत्यादि सम रात्रियों में स्त्रीके दहिने अंगसे निकला रज पुत्र और ५-७-६ इत्यादि विषम रात्रियोंमे बाएँ अंगसे निकला रज कन्या उत्पन्न करता है। यदि इसके विपरीत ४-६-८ इत्यादि रात्रियोंमें बाएँ अंग से और ५-७-६ इत्यादि रात्रियोंमें दहिनेअंगसे निकला रज किसी योग्य नहीं होता, तो इससे यह बात सिद्ध होती है कि जब सम रात्रियोंमें रज स्त्रीके दहिने अङ्गसे निकल कर पुरुषके दहिने अंगसे निकले वीर्य्यसे मिलेगा तो पुत्र और जब स्त्रीके बाएँ अङ्गसे विषम दिनोंमें निकल कर पुरुषके बाएँ अंगसे निकले हुए वीर्य्यसे मिलेगा तो कन्या होगी। यह

सिद्धान्त हमारे माने हुए मतसे जुदा नही है। इसलिये हमारी मानी हुई बात और यह सिद्धान्त एक ही है।

३. धर्मशास्त्र और वैद्यकसे यह बात कही जाती है कि जब वीर्य्य अधिक हो और रज कम हो, तो पुत्र, यदि रज अधिक हो तथा वीर्य्य कम हो, तो कन्या उत्पन्न होती है। इस विषयमें यह देखना है कि रज और वीर्य्य अधिक कब निकलता है। नम्बर २ में विदेहाचार्य्यका मत लिखा गया है कि ४-६-८ इत्यादि सम रात्रियोंमें रज कम और ५-७-६ इत्यादि विषम रात्रियोंमें अधिक निकलता है। एक विद्वान्‌की रायहै कि ४-६-८ इत्यादि सम रात्रियों में कम निकले हुए रजसे पुत्र और ५-७-६ इत्यादि विषम रात्रियोंमें निकले हुए अधिक रजसे कन्या उत्पन्न होती है। यदि ४-६-८ इत्यादि सम रात्रियों में स्त्रीके वाएँ अंगसे रज निकले या ५-७-६ इत्यादि विषम रात्रियोंमें दाहिने अंगसे निकले, तो दोनों अयोग्य होते हैं।

(रतिशास्त्र)

जब इस प्रकार ४-६-८ आदि सम रात्रियो में रज स्त्रीके दहिने अंग से कम निकलकर पुरुषके दाहिने अंग से निकले हुए अधिक वीर्य्यके साथ मिलेगा, तो पुत्र होगा। इसी प्रकार जब ५-७-६ इत्यादि विषम रात्रियों में रज स्त्रीके वाएँ अंगसे अधिक निकल कर पुरुष के वाएँ अङ्गसे निकले हुए कम वीर्य्य के साथ मिलेगा, तो कन्या होगी। इसमें यह वात है कि जब स्त्रीका रज कम होगा तो पुरुषका वीर्य्य अधिक होगा। जब स्त्रीका रज अधिक होगा तो पुरुषका वीर्य्य कम होगा। कारण यह कि पुरुषका प्रधान अङ्ग दहिना है, इसलिये दहिने से अधिक और वाएँ से कम वीर्य्य निकलता है। इसी प्रकार स्त्री-

के प्रधान बाएँ अंगसे अधिक और दहिने अंगसे कम रज निकलता है। अतएव पुरुषके दहिने अंगसे निकला हुआ अधिक वीर्य्य स्त्रीके बाएँ अंगसे निकले हुए कम रजके साथ मिलकर पुत्र और स्त्रीके दहिने अंगसे निकला अधिक रज पुरुषके बाएँ अगसे निकला कम वीर्य्यके साथ मिलकर कन्या उत्पन्न करता है। इस कारण यह सिद्धान्त हमारे विरुद्ध नहीं, क्योंकि हमारी मानी हुई बात और यह सिद्धान्त एक ही है।

४. वैद्यक, हिन्दुओंका प्राचीन मत, यूनानी मत, यूरोपीय विद्वानोंकी राय, यूरोपीय विद्वानोकी जाँच- पशुओं और मनुष्यों पर अनुभव करनेसे और मित्रों द्वारा जो बातें मालूम हुई उससे यह कहा जाता है कि स्त्री-पुरुष के दहिने अंगसे पुत्र और बाएँसे कन्या उत्पन्न होती है। इस विषयका खुलासा यह है कि पुरुषके दहिने अण्डमें पुत्र और बाएँमें कन्याका वीर्य्य रहता है। इसी प्रकार स्त्रीके दहिने अण्डमें पुत्र और बाएँमें कन्याका रज रहता है। इसलिये जब पुरुषके दहिने अण्डसे वीर्य्य निकलकर स्त्रीके दहिने अण्डसे निकले रजसे मिलता है, तो पुत्र और जब स्त्रीके बाएँ अण्डसे निकला रज पुरुषके बाएँ अण्डसे निकले वीर्य्यसे मिलता है, तो कन्या उत्पन्न होती है। यहाँ पर पाठक यह शङ्का करेंगे कि पुरुषके दहिने और स्त्रीके बाएँ या स्त्रीके दहिने और पुरुषके बाएँ अण्डोंसे निकले रज-वीर्य्यसे क्या होता है? इस विषयमें एक विद्वान्की राय है कि दहिनेका बाएँ और बाएँका दहिने अण्डसे निकला रज वीर्य्य मिलता ही नहीं। (रतिशास्त्र)

५. वैद्यकके मतसे यह कहा जाता है समीरणा, चन्द्रमसी

> और गौरीमें वीर्य्य गिरनेसे कन्या और पुत्र उत्पन्न होते हैं। भावमिश्र जहाँ इस प्रकरणको अपने ग्रन्थ भाव-प्रकाशमें लिखते हैं,वहाँ यों लिखा है कि "स्त्रियों के काम मन्दिरके मुखमें समीरणा, चन्द्रमसी और गौरी तीन नाडियाँ होती हैं। काममन्दिर क्या है? इस विषयमें एक विद्वान्‌की राय है कि काममन्दिर गर्भाशयको कहते हैं। (रतिशास्त्र)

अब यह सिद्ध हुवा कि गर्भाशयके मुखमें तीन नाड़ियाँ होती हैं। इनमें समीरणा वह भाग है जो गर्भाशयके मुखके बीचमें होता है। इस स्थानपर वीर्य्य गिरनेसे बाहर निकल आता है। चन्द्रमसी गर्भाशयकी बाईं ओर है। इस रास्तेसे वीर्य्य जाकर स्त्रीके बाएँ अण्डके निकले हुए रजसे मिलता है। इस मार्गसे गया हुआ वीर्य्य कन्या उत्पन्न करता है। इसी प्रकार गौरी गर्भाशयके दहिनी ओर है, इस रास्तेसे वीर्य्य जाकर स्त्रीके दहिने अण्डके निकले हुए रजसे मिलता है, इस मार्गसे गया हुआ वीर्य्य पुत्र उत्पन्न करता है। गर्भाशयके दहिने बाएँ दो अण्ड होते हैं। इन्हीं अण्डोंसे गर्भाशयमें रज पहुँचता है। इधरसे चन्द्रमसी रास्तेसे बाईं ओर होकर वीर्य्य पहुँचता है और बाएँ अण्डके निकले रजसे मिलकर कन्या उत्पन्न करता है। जब वीर्य्य गर्भाशयके दहिने ओर गौरीके रास्तेमें पहुँचता है तब दहिने अण्डके रजसे मिलकर पुत्र उत्पन्न करता है। अतएव यह सिद्धान्त हमारे माने हुए मतसे पूरा पूरा मिलता है।

> ६. एक डाक्टरका मत है कि रजोदर्शनसे ७-८-१० दिन बाद संयोग करनेसे पुत्र और स्नान करके दूसरे तीसरे दिनके गर्भ रहनेसे कन्या उत्पन्न होती है। इसका कारण

यह कहा जाता है कि आरंभमें स्त्रीको संयोगकी बहुत इच्छा रहती है, अतएव कन्या और ७-८-१० दिनके बाद संयोग करनेसे पुत्र होता है। कारण यह कि उस समय स्त्रीको संयोगकी विशेष इच्छा नहीं रहती। यह सिद्धान्त निर्मूल है। क्योंकि बहुतसे बच्चे ऐसे मौजूद हैं कि जिनका गर्भाधान इस मन्तव्यके विरुद्ध हुआ है। मेरे एक मित्रके यहाँ स्नानके दूसरे दिन अर्थात् छठे दिनके गर्भाधानसे पुत्र और स्नानसे ग्यारह दिन बादके गर्भाधानसे कन्या उत्पन्न हुई। अतएव ऐसे सिद्धान्त पर विश्वास नहीं किया जा सकता। हमारा माना हुआ मत इसके विरुद्ध है और वही ठीक है।

हमारे पाठकोंने इस विषयमें अनेक भेद देखे हैं, परन्तु प्रायः जितने मत हैं उन सबका सिद्धान्त यही है कि पुरुषके दहिने अण्डसे निकला हुआ वीर्य्य जब स्त्रीके दहिने अण्डसे निकले रजके साथ मिलता है, तो पुत्र और जब स्त्रीके बाएँ अण्डसे निकला रज पुरुषके बाएँ अण्डसे निकले वीर्य्यके साथ मिलता है, तो कन्या उत्पन्न होती है।

हम इस बातको पहले कह आये हैं कि कन्या या पुत्र पैदा करना मनुष्यके आधीन है, इस लिये यह बतलाना आवश्यक है कि स्त्री या पुरुष अपने अण्डोंसे रज-वीर्य्य कैसे निकाल सकते हैं, क्योंकि जबतक यह न मालूम होगा उस समय तक यह बात नहीं कही जा सकती कि कन्या या पुत्र उत्पन्न करना मनुष्यके आधीन है।

यह प्रकृतिका नियम है कि जिस समय रज-वीर्य्य निकलने लगता है उस समय अण्डकोष कुछ ऊपरको चढ़ जाते हैं।

स्त्रियोंमें ढके होनेके कारण दिखलाई नही देते, परंतु पुरुषोंमें ऊपर चढ़ते साफ दिखलाई पड़ते है। इतना ही नहीं, हर समय स्त्री या पुरुषोंका एक अंड ऊपरको चढ़ा रहताहै और उस ऊपर चढ़े हुए अण्डसे ही रज-वीर्य्य निकल पडता है।

अब प्रश्न यह होता है कि अण्डे ऊपरको चढ़ते कैसे हैं? इस विषयमें यह ईश्वरीय नियम है कि दहिनी या बाईं जिस ओरकी नाकसे श्वाँस निकलती हो उसी ओरका अण्ड ऊपरको चढ जायगा। अब यहाँपर यह शंका होती है कि दहिनी या बाई नाकसे श्वाँसका निकलना अपने अधीन है या नहीं? हाँ यह भी हमारे हाथमें है। जब चाहें दहिनी नाकसे श्वाँस निकाले वा जब चाहें बाईंसे। इसमें कुछ क्रिया करनी पड़ती है,वह यह है कि—बाईं करवट लेटने से दहिने नाकसे और दहिनी करवट लेटनेसे बाई नाकसे श्वाँस निकलने लगती है और किसी तरहकी कोई बाधा नहीं होती। (रति-शास्त्र)

पाठकोंको कन्या और पुत्र पैदा करनेके सारे हाल मालूम हो चुके हैं। इन सबका खुलासा यह है कि जब पुत्र पैदा करनेकी इच्छा हो तो रजस्वला होनेके दिनसे ४-६-८-१०-१२-१४ और १६ वीं रात्रिको और जब कन्या उत्पन्न करनी हो तो रजस्वला होने से ५-७-९-११-१३ और १५ वीं रात्रिको संयोग करना चाहिये।

दोनोंके दहिने नाकसे श्वाँस निकलनी चाहिये। इससे दोनो स्त्री और पुरुषका दहिना अण्ड ऊपरको चढ़ जायगा और इसीसे रज वीर्य्य निकलकर पुरुषके दहिने अंगका वीर्य्य स्त्रीके दहिने अंगके रजसे मिलकर पुत्र उत्पन्न करेगा। इसी भाँति जब कन्या उत्पन्न करनी हो तब स्त्री और पुरुष दोनोंके बाएँ नाकसे श्वांस निकलनी चाहिये। इससे

दोनों स्त्री और पुरुष का बायाँ अण्ड ऊपरको चढ जायगा और उसीसे रज वीर्य्य निकलकर स्त्रीके बाएँ अण्डसे निकला रज पुरुषके बाएँ अण्डके निकले वीर्य्यसे मिलकर कन्या उत्पन्न करेगा परन्तु यह बिचार रहे कि यह क्रिया पुत्र केलिये रजो रजोधर्म से ४-६-८-१०-१२-१४ और १६ वीं रात्रि और कन्याके लिये रजोधर्मसे ५-७-६-११-१३ और १५वीं रात्रिमें कीजावे । इन क्रियाओंसे हम अपनी इच्छाके अनुसार मन चाही ,न कन्या और पुत्र उत्पन्न कर सकते हैं, परन्तु यह तभी ।गा जब स्त्री पुरुष दोनोंमें अण्डे अच्छी तरह हों और किसी नकार का रोग न हो ।

गर्भाशय और योनि विकारयुक्त न हो, पुरुषोंमें वीर्य्य दोष इत्यादि न हो, ऐसा होने पर इसी रीतिके अनुसार कन्या और पुत्र उत्पन्न करना मनुष्यके आधीन है ।

(२८) संयोग-विधि

स्त्री और पुरुषके संयोग होनेपर ही गर्भाधान हो जाता है लोग इसको बहुत मामूली बात समझते हैं, पर यह बहुत बड़े गौरव का विषय है । इस काम में स्त्री और पुरुषों की कितनी बड़ी जिम्मेदारी होती है, पर वे ज़रा भी विचार नहीं करते । यह कार्य्य बड़ी प्रसन्नता और उत्साहके साथ होना चाहिये । परन्तु यह उसी समय हो सकता है जब कि दोनोंमें प्रेम हो । प्रेमका प्रवाह जिन स्त्री-पुरुषोंमें अथाह होकर बहता है, वेही योग्य सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं ।

दोनोंका शृंगार भी जरूरी है । जिस प्रकार हवन करनेके लिये घीकी जरूरत होती है उसी प्रकार गर्भाधानमें एक

दूसरेके चित्तको अपनी ओर खींचने के लिए शृंगारकी जरूरत है।
(रतिशास्त्र)

कैसी ही कुरुपा स्त्री क्यों न हो, शृंगारयुक्ता होनेपर वह भली मालूम होती है। इसी प्रकार रूपवती विना शृंगारके अपना विकाश नहीं फैला सकती। इसका तात्पर्य्य यह है कि शृंगार एकमात्र चित्त वशीभूत करके कामोद्दीपन करता और संयोग शक्तिको बढाता है।
(रतिशास्त्र)

पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ भी शृंगारयुक्त पुरुषको देख कर मोहित हो जाती हैं। अतएव दोनोंका शृंगार गर्भाधानके समय ज़रूरी है।

कितने शोककी बात है कि आज हम अपने नये जवानों-को प्रकृतिके विरुद्ध सीधे रास्ते को छोड कर निकम्मे मार्गका अवलम्ब करते हुए देखते हैं।

लोग यह समझते हैं कि चाहे जिस प्रकारसे संयोग करलें किसी प्रकारसे बाधा नहीं है, क्यों कि हर तरहके संयोग ही से सन्तान तो होती ही है। यदि ऐसा न होता तो कोकशास्त्र में चौरासी प्रकारके आसनों का विधान क्यों किया जाता? इस विषयमें वैद्यकका मत है कि—

१. कुबडी होकर संयोग करानेसे वायु प्रवल होकर योनि बाधा को प्रकट करती है। यदि दहिने करवट होकर सयोग हो, तो कफ गिर कर गर्भाशयको ढक लेता है। बाईं करवट होकर संयोग होने से पित्त गर्भके रक्त और वीर्य्य को नष्ट कर देता है। इस कारण चित्त करके संयोग करना उत्तम है, क्यों कि चित्त होकर संयोग करने से वात, पित्त और कफ़ सब अपने अपने

स्थानपर ठीक रीतिसे रहते हैं। किसी प्रकारका विगाड़ उत्पन्न नहीं होता। (च० शा० अ० ८ श्लो० ७ से ८)

(२) खड़े होकर संयोग करनेसे शुक्राश्मरी रोग हो जाता है। (भा० प्र०)

(३) सिवाय चित्त होकर संयोग करनेके जितने तरह से किया जाता है, सबमें वात पित्त और कफ़ उत्पन्न होकर बाधा पहुंचती है। (शा० क०)

शरीरका संचालन एकमात्र वात, पित्त और कफ़से ही होता है। इनमेंसे यदि एक भी बिगड़ जाय तो शरीरका ढाँचा किसी तरह नहीं चल सकता। ऐसी अनुचित क्रियाओंसे सहज हीमें अनेकों रोग खड़े हो जाते हैं जिनसे गर्भाशय नष्ट हो जाता है। अतएव सर्वसम्मतिसे यही निश्चय होता है कि स्त्रीको चित्त होकर संयोग करना अति उत्तम है और किसी दूसरी रीतिसे कभी संयोग न होना चाहिये।

(२९) गर्भ कैसे रहता है ?

रज और वीर्य्य ही गर्भके कारण हैं॥ रजस्वला होनेसे सोलह दिनतक गर्भाशयका मुख खुला रहता है। यही गर्भ-धारण होनेका समय है। (रतिशास्त्र)

संयोग समयमें सहवासकी गरमीसे वीर्य्य पतला होकर वायुसे लिंग द्वारा गर्भाशयकी गर्दनपर, जो सुराहीदार योनिके सिरेसे गर्भाशयतक होती है, पहुँचता है और रजसे मिलकर गर्भ बनाता है। इस विषयमें कई मत हैं।

१; डाक्टरोंका मत।

१. इसके अनुसार यह माना गया है कि आगेकी ओरसे वीर्य्यके साथ जो कीड़े उसमें होते हैं, गर्भाशयकी

गरदनके उस सिरेपर पहुँचते हैं जो गर्भाशयसे मिली रहती है। और उधरसे रजके साथ कीड़े जो कि उसमें होते हैं, अण्डवाही नलियोंके छेदोंसे गर्भाशयमें पहुँचते हैं। जब ये दोनों रज वीर्य्यके कीडे आपसमें गर्भाशयसे मिली हुई गरदनके सिरेपर पहुँच कर मिलते हैं, तब वीर्य्यका कीड़ा जो रजके कीड़ेसे छोटा होता है, तुरन्त रजके कीडेमें घुस जाता है; घुसते ही उसकी पूँछ कट जाती है और अगला भाग जिसको सर कहते हैं वह रजके कीड़ेमें मिल जाता है तथा गर्भाशयकी गरदनके सिरेसे दोनों कीड़ोंका मिला हुआ पदार्थ गर्भाशयमें पहुँचकर बढता है। यही बच्चेका पहिला स्वरूप है। परन्तु सबसे बड़ी बात इसमें यह है कि वीर्य्यका कीडा रजके कीडेमें कूदकर घुसता है। इसलिये वीर्य्यके कीडेमें चंचलता और कूदनेकी शक्ति जरूर होनी चाहिये। यदि ऐसा न हो, तो गर्भस्थापित होनेमें बाधा पडती है।

२; वैद्यकका मत।

१. संयोग होनेसे शरीरमें गरमी उत्पन्न होती है। इससे वायु उत्कट होकर गरमीके संबंधसे पुरुषका वीर्य्य निकलता है और योनिमें पहुँचकर रजसे मिल जाता है। इन दोनोंसे मिला हुआ पदार्थ गर्भाशयमें पहुँचता है। और वायुसे तत्काल प्रेरणा किया हुआ जीवात्मा गर्भाशयमें प्रवेश होकर स्थित होता है। (सु० शा० अ० ३ श्लो० २ व ३)

२. रज और वीर्य्य जैसे ही गर्भाशयमें मिलते हैं उसी समय जीवात्माका संयोग होकर गर्भ रहता है। (शा० का०)

३. स्त्री और पुरुष जब दोनो एक ही साथ स्खलित होते हैं, तब उधरसे रज आता है और इधरसे वीर्य्य पहुंचता है और दोनों गर्भाशयमें मिलकर गर्भ बनाते हैं। यदि स्त्री और पुरुष दोनों एक साथ स्खलित न हों, तो गर्भ नहीं बनता। (रति शास्त्र)

डाक्टरी मतसे यह बात सिद्ध होती है कि रज और वीर्य्यके कीड़े दोनों आपसमें मिलकर गर्भ उत्पन्न करते हैं। वैद्यकका मत यह कहता है कि रजवीर्य्यके मिलनेपर जब जीवात्मा इनमें प्रवेश करता है, तब गर्भ रहता है। जीवात्माके प्रवेश होनेसे मतलब यह है कि रजवीर्य्यसे मिला हुआ पदार्थ सजीव हो जाता है डाक्टरी रीतिसे कीड़ों द्वारा और वैदिक रीतिसे रज-वीर्य्य मिले हुए पदार्थसे जीवात्मा द्वारा गर्भका स्थित होना सिद्ध है।

(३०) गर्भ स्थित होनेके तात्कालिक लक्षण।

प्रायः यह सन्देह ही रहा करता है कि अमुक समयके गर्भाधानसे गर्भ स्थित हुआ या नहीं? इस विषयमें आचार्योंके अनेक मत हैं।

१, वैद्यकका मत।

१. तात्काल गर्भधारण करनेवाली स्त्रीको थकावट, ग्लानि, प्यास साथलोंका थक जाना, योनिका फरकना, और रज-वीर्य्यका बाहर न निकलना इत्यादि लक्षण होते हैं। (सु० शा० अ० १२ श्लो० १२)

२. गर्भ धारण समयमें स्त्रीकी चेष्टा अत्यन्त मनोहर हो जाती है और लावण्यता अधिक बढ जाती है। (श० क०)

२, विद्वानोंकी राय ।

१. जब गर्भ धारण होता है तब ज्योंही रज-वीर्य्य मिलकर गर्भाशयमें पहुचता है त्यों ही स्त्रीकी नाभिके नीचे थोडासा मीठा मीठा दर्द होता है। (रति शास्त्र)

१. गर्भ धारण समयमें वीर्य्य योनिसे बाहर नहीं निकलता और गर्भधारण होते ही संयोगकी चाह जाती रहती है। (चक्रपाणि)

जब ऐसे लक्षण हों, तो समझ लेना चाहिये कि गर्भ धारण हो गया। ये लक्षण गर्भधारण होनेके साथ ही साथ मालूम होते हैं।

(३१) जीव गर्भमें कब आता है ?

इस विषयमें कि गर्भ समयमें बच्चेमें जीव कब आता है अनेक विवाद हैं। कोई गर्भधारण होनेके साथ ही, कोई चार मास के बाद, कोई चैतन्यता उत्पन्न होनेपर जीवका गर्भमें आना मानते हैं। इसी प्रकार अनेक मत हैं, परन्तु यदि यह बात मान ली जाय कि गर्भधारण होनेके साथ ही साथ जीव नहीं आता, तो यहाँ एक बहुत बड़ी शंका यह होगी कि गर्भ फिर बढ़ता कैसे है ? क्योंकि निर्जीव पदार्थका वृद्धि-क्रम नहीं होता इसलिये यह बात माननी पडेगी कि सजीव गर्भाधान होता है या गर्भाधान होनेके साथ ही साथ गर्भ सजीव हो जाता है।

१, वैदिक मत

१. गर्भाधानसे लेकर दस मास अर्थात् पैदा होनेतक गर्भ सजीव रहता है और सजीव ही उत्पन्न होता है।

(ऋ० म० ५ सू० ७८ म० ९)

२. धर्मशास्त्रका मत ।

१. स्त्री और पुरुषके संयोगसे पुरुषका शुद्ध वीर्य्य योनिमें जाकर स्त्रीके शुद्ध रजसे मिलता है। उसी समय भूतात्मा, आप ही आकाश वायु जल पृथिवी और अग्नि अर्थात् पंच महाभूतोंके साथ गर्भाशयमें स्थित होता है।

(या० य० ध० प्र० ७२)

३. वैद्यकका मत ।

१. जब गर्भाशयमे रज-वीर्य्य और जीव इन तीनोका संयोग (मेल) हो जाता है, तो उसको गर्भ कहते हैं, अर्थात् रज-वीर्य्य और जीव इनके मिलनेपर ही गर्भ स्थित होता है। (च० श० अ० ४ श्लो० ३)

२. जिस समय गर्भाशयमें रजवीर्य्यका मिश्रण होता है। उसी समय जीव उनके साथ उसमें प्रवेश करता है। जिस प्रकार सूर्यकी किरण और मणिके संयोगसे अग्नि प्रकट होती है, इसी प्रकार रज-वीर्य्यके मिलनेसे जीव प्रगट होता है। (भा० प्र० ग० प्र० ३२ ३३)

६. डाक्टरोंका मत ।

१. रज-वीर्य्यके कीडे आपसमें मिलकर गर्भ उत्पन्न करते हैं, विना इन जीवोंके मिले गर्भ नहीं रहता अर्थात् प्रारम्भसे ही गर्भ सजीव होता है।

धर्मशास्त्र और वैद्यकसे यह बात मालूम होती है कि जब गर्भाशयमें रज-वीर्य्य मिलता है उस समय उनमें जीव आ जाता है। वेदसे भी यही स्पष्ट है कि गर्भ प्रारम्भ से ही सजीव होता है। डाक्टरी मतका भी अभिप्राय यही है कि गर्भ सजीव स्थित होता है। अतएव सर्वसम्मतिसे यह बात निश्चय है कि

रज-वीर्य्य मिलते ही जीवका संयोग मिले हुए पदार्थमें हो जाता है या यों कहो कि गर्भ सजीव ही स्थित होता है ।

(३२) प्रेम द्वारा उत्तम सन्तानकी उत्पत्ति।

प्रेम ईश्वरका दिया हुआ एक उत्तम पदार्थ है। संसारी जीव प्रेमके फन्देमें फंसे दिखलाई पड़ते हैं, कारण यह है कि ईश्वरकी सृष्टिही प्रेममय है। अतएव विना प्रेमके निर्वाह होना कठिन है। प्रेम मनसे उत्पन्न होता है, इसलिये मनको जो वस्तु प्रिय होती है उसीसे प्रेम होता है। सारे सम्बन्ध प्रेमके सामने झूठे हैं। इसलिये प्रेमका सम्बन्ध सबसे बलिष्ठ है। हर एक मनुष्य हर एक बातसे प्रेम नहीं रखता। एक जिससे प्रेम रखता है दूसरा उसको बुरा बतलाता है। इसका कारण मन ही है। प्रेम दो तरहका होता है ।

(१) वह जो थोड़ी देर तक रहे। इसको 'चर' प्रेम कहते हैं।

(२) वह जो बराबर बना रहता है और बढ़ता जाता है जिसको 'अखण्ड' या 'अटल' प्रेम कहते हैं। किसी वस्तुको देखकर प्रसन्न हो जाना और फिर उसकी परवाह न रखना या उससे अच्छी वस्तु पाकर भूल जाना, ऐसे प्रेमका सम्बन्ध हृदयसे अधिक और मस्तकसे कम रहता है। इसीको चर प्रेम कहते हैं। अखण्ड या अटल प्रेम वह है जो सोते, जागते एक समान रहता है, कभी कम नहीं होता, किन्तु बढ़ता ही जाता है। अच्छीसे अच्छी वस्तु प्रेमीके हृदयसे प्रेमको अपनी ओर नहीं खींच सकती। ऐसे प्रेमका सम्बन्ध मस्तकसे अधिक और हृदयसे कम होता है। चर प्रेममें स्वार्थ होता है, परन्तु अटल प्रेममें स्वार्थ नहीं होता। जहाँ सच्चा प्रेम है वहाँ स्वार्थ कहाँ? प्रेम भी एक प्रकारका नहीं होता। प्रेमके अनेक प्रकार

है । जब हम प्रेमको मनकी शक्ति मानेंगे तो इसपर भी विचार करना होगा कि मनुष्यको हर बातका प्रेमी होना चाहिये। क्योंकि मन प्रत्येक बात पर जाता है। इसमे सन्देह नहीं कि मन हर एक बातोंपर अवश्य जाता है, परन्तु वह सबका प्रेमी नहीं बनता। उसको अपनी इच्छाके अनुसार खास खास बातोंका प्रेम होना पड़ता है, जैसे माताका प्रेमी, जातिका प्रेमी, देशका प्रेमी, ईश्वरका प्रेमी और स्त्रीका प्रेमी इत्यादि।

शरीर-रचना-शास्त्रसे पता चलता है कि प्रेमका स्थान सर है। जितने तरहके प्रेम हैं सबका स्थान सरमें अलग अलग बना हुआ है। जिसका जितना जिस प्रकारके प्रेमका स्थान बली है, मनुष्य उसका उतना ही प्रेम होता है। सरमें प्रेमके जितने स्थान हैं सब बली क्यो नहीं होते ? इस विषयमें वैद्यकका मत है कि गर्भाधान समयमें जिस बातसे माता पिता दोनोंको प्रेम होता है, सन्तान उस बातकी अटल प्रेमी हो जाती है। जिस बातमे उस समय केवल माता पिताको प्रेम होता है, सन्तानका अधूरा प्रेम उस बातसे रहता है। जिस बातसे उस समय मातापिता दोनोंका प्रेम नहीं होता, सन्तान उसकी कट्टर विरोधी हो जाती है। जिस बातसे उस समय केवल माता या पिताको प्रेम नही होता, सन्तानको उसमे विशेष रुचि नही होती। (रतिशास्त्र)

इससे स्पष्ट है कि गर्भाधान समयमें मातापिताका प्रेम जिस बातमें जितना होता है, बच्चेके सरमे उस प्रेमका स्थान उतना ही प्रबल और निर्बल होता है। इस कारण हर मनुष्य हर बातका प्रेमी नहीं होता।

एक बात सारे मनुष्य क्या, जीवमात्रमे दिखलाई पड़ती है कि सब लोग स्त्री-जातिके प्रेमी होते हैं और स्त्री-जाति पुरुष

जातिकी प्रेमी होती है। इसका कारण यह है कि गर्भाधान समयमें स्त्री जातिको पुरुष जाति और पुरुष जातिको स्त्री जातिसे प्रेम अवश्य होता है और इसी प्रेमके कारण सन्तानमें ऐसे प्रेमका स्थान प्रबल हो जाता है। इसलिये हर स्त्री जाति पुरुष जाति और हर पुरुष जाति स्त्री जातिसे प्रेम करती है और दोनों एक दूसरेके प्रेमी होते हैं। सच्चा प्रेम बिजलीसे भी अधिक बलवान् है। जब स्त्री-पुरुष एक दूसरेके प्रेमी होते हैं, तो उनमें कुछ प्रेमकी गहराई मालूम होती है। दोनोंमें एक दूसरेके चित्तको खींचनेकी शक्ति इतनी प्रबल होती है कि दोनोंकी आत्मा एक हो जाती है, इसीलिये 'दो शरीर और एक प्राणकी' कहावत प्रसिद्ध है।

प्रेमसे शरीरमें एक प्रकारकी शक्ति पैदा होती है। जिस प्रकार बिजलीके तारको हाथमें लेनेसे उसकी शक्तिका कुछ ज्ञान होता है, इसी प्रकार प्रेमके फन्देसे जकडे हुए प्रेमियोंके शरीरमें प्रेमकी शक्तिका प्रवाह चिन्तवन मात्रसे ही उमड़ पडता है। एक दूसरेकी प्रेममूर्तिको देखते ही शरीरमें प्रेम-शक्तिका सञ्चार हो जाता है। एक दूसरके प्रेममें लीन हुए स्त्री पुरुषोंके देखनेसे प्रेम और प्रेमीकी मर्यादा मालूम होती है। सच्चा प्रेम उनके हृदयको इतना कोमल बना देता है कि एक दूसरेके प्रीति पात्र हो जाते हैं और प्रेमशक्ति उनके हृदय-को पवित्र बना देती है। प्रेमीको प्रेमानन्दके सामने स्वर्गके सुख और राजा महाराजोंके महलोंके वैभव तिनकेके समान जान पडते हैं।

प्रेम केवल प्रेम हीके लिये किया जाता है, इसका और कोई मतलब नहीं है। सच्चा प्रेम स्त्री और पुरुषके मनको एक कर देता है, विचारोंको मिला देता है और भावोंको एक करनेके

प्रयत्न करता है। जब दोनों के चित्तपर प्रेम अपना अधिकार इस प्रकार जमा लेताहै तभी स्त्री पुरुष रूपवान और गुणवान सन्तान उत्पन्न करनेमें समर्थ होते हैं। प्रेमका कैसा महत्व है कि यदि स्त्री पुरुष के परस्पर प्रेमसे गर्भाधान हो तो सन्तान हर प्रकार से सुन्दर, गुणवान, सुशील निरोग और बुद्धिमान उत्पन्न होती है। कारण यहहै कि गर्भाधानके समय रजवीर्य्य पर प्रेमका प्रभाव पड़ता है और यही प्रेम रूपवान और गुण-वान सन्तान उत्पन्न करने का कारण है। प्रेमही से माता-पिता के गुण बच्चोंमें आतेहैं। प्रेम ही प्रत्येक गुणों को उत्तेजितकर संजीवनी शक्ति उत्पन्न करता है। प्रेमही से बच्चोमें मानसिक और शारीरिक शक्तियोका विकास उत्तमतासे होताहै इतना ही नहीं प्रेम बच्चे के शरीर को भी बढ़ाता है जिस प्रकार माता और गर्भका संबन्ध है इसी प्रकार प्रेम और गुणका संबन्ध है। अतएव जहाँ माता पिता प्रेमी होते हैं वहीं सर्व-गुण-संपन्न सन्तान उत्पन्न होती हैं। जहाँ स्त्री पतिसे प्रेम करती है और पति स्त्रीसे प्रेम नहीं करता या पति स्त्रीसे प्रेम करता है और स्त्री पतिसे प्रेम नहीं करती, वहाँका तो कहना ही क्या है। काली, कुबड़ी और कुरूप अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न होती है। जहाँ पुरुषकी ओरसे प्रेम होता है तो बच्चेके वेही अंग सुडौल होते हैं कि जो पिताके वीर्य्यसे बनते हैं। जहाँ स्त्रीकी ओरसे प्रेम होता है वहाँ वेही अंग सुडौल होंगे कि जो स्त्रीके रजसे बनेंगे। अतएव सारे अङ्गोको सुन्दर, सुडौल बनानेके लिये माता-पिता दोनोंके ओरसे प्रेम होना आवश्यक हैं। जितनी जातियाँ हैं, सबमें स्त्री और पुरुषके प्रेमको प्रधान माना है। हिन्दू जातिमें विवाह जन्मपत्री मिलाकर होता है, ग्रहमैत्री और गणमैत्री आदि देखे जाते हैं। इस कारण कि इनमें आगे

चलकर प्रेम कैसा होगा? बहुतेरे इस बातको नहीं मानते कि जन्मपत्रीसे इस बातका पता क्या लगेगा कि स्त्री पुरुषमें प्रेम होगा या नहीं। यह एक मिथ्या बात है। जिन स्त्री पुरुषोंकी ग्रह मैत्री और गण मैत्री ठीक है, चाहे उनमेंसे एक कुरूप ही क्यों न हो, वे दोनों अवश्य परस्पर प्रेमी होंगे। परन्तु वह स्त्री पुरुष कि जिनकी ग्रहमैत्री और गण मैत्री ठीक नहीं हैं, दोनों-के सुन्दर और लावण्यता पूर्ण होते हुए भी प्रेम नहीं रहता। पहले हिन्दुओंमें स्वयवरकी प्रथा थी। इसका भी यही मत-लब था कि कन्याका प्रेम जिसपर हो वही उसका पति हो। यूरोपमें कन्याएं स्वय अपना पति ढूँढ लेती हैं। इससे भी यही तात्पर्य है कि जिससे प्रेम हो वही पतित्वमें वरण किया जाय। गर्भाधान समयका मन्द प्यार बालकोंकी मांस रज्जु-को शिथिल बना देता है। उत्साहयुक्त प्यारसे अवयव दृढ़ और मनके तन्तु सतेज बनते हैं। जिस प्रकार संयोग समयमें प्रेम द्वारा माता पिताका हर्ष बढता है उसी प्रकार सन्तान सुन्दर, सुडौल और उत्तम होती है। यदि संयोग-समयमे मातापिताका हर्ष पूर्ण प्रकाश नहीं पाता तो मध्यम गुणोंवाली सन्तान होती है। यदि हर्षका प्रकाश बिलकुल न हुआ, तो अनेक प्रकारकी कुरूप और अंगहीन सन्तान उत्पन्न होती है।

प्रेम इस बातको नही चाहता कि स्त्री या पुरुष सुन्दर हों प्रेम तो बदलेमें केवल प्रेम ही चाहता है। प्रायः देखा गया है कि रूपवती स्त्री और कुरूप पुरुष या कुरूपा स्त्री और सर्वांग सुन्दर पतिमें प्रेमकी धारा वेगसे बहती है। स्त्री और पुरुषके प्रेमकी, कि जिसका प्रभाव सन्तानपर पड़ता है, अनेक बार परीक्षा की जा चुकी है और इनमे प्रेमकी सत्यताकी झलक-दिखलाई भी पड़ती है।

१. एक परिवारमें अच्छे खूबसूरत मोटे ताजे माता-पिता-से जितने बच्चे हुए सब कुरूप और बुद्धिहीन थे जाँच करनेपर मालूम हुआ कि माता-पितामें अनबन रहती थी।

२. एक सुन्दर माता-पितासे जो पूरे जवान थे, डील डौल अच्छा था, उन्हें ठिगने कदकी सन्तान उत्पन्न हुई। जाँच करनेसे पता चला और स्त्रीने स्वीकार किया कि जब उस बच्चेका गर्भाधान हुआ था उस दिन स्त्री पुरुषमें लड़ाई हुई थी।

इन बातोंसे सिद्ध है कि सन्तानके विषयमें प्रेमका बहुत बड़ा महत्व है। जितने अंशोंमे माता-पिता प्रेम द्वारा मनसे एक हो जाते हैं उतने ही अंशोंमे बालक श्रेष्ठ होता है। माता-पिता के प्रेममें जब मनकी स्थिति अच्छी हालतमें रहती है तब बालक सुन्दर उत्पन्न होता है। प्रेमसे गर्भाधान समयमें माता-पिता अपने चित्तको जिसमें लगावेंगे उसी बातकी प्रेमी सन्तान उत्पन्न होगी। इसलिये जैसी सन्तान उत्पन्न करना हो माता-पिताको प्रेमसे अपने अपने मनको गर्भाधानके समय उसीमें लगाना चाहिये। इस प्रकार केवल प्रेम द्वारा ही उत्तम सन्तान उत्पन्न हो सकती है।

(३३) बच्चोंपर माता-पिताके मनोबलका प्रभाव।

मानस शास्त्रके विद्वानोंका मत है कि सृष्टि मनसे उत्पन्न होती है। इसलिये मनचाही सन्तान पैदा करना मनकी ताकतके बाहर नहीं है। मनकी शक्तिको ही मानस-शक्ति मनःशक्ति,

इच्छाशक्ति और मनो-बल कहते हैं। यही सबका सर्वस्व है और यही सर्वप्रधान वस्तु है। मनकी शक्ति दो तरहकी होती है। एक प्रत्यक्ष, दूसरी छिपी हुई। सन्तान पैदा करनेमें कैसी मनकी शक्तिका प्रयोग होता है, इस विषयमें विद्वानोंका मत है कि 'इसमें छिपी हुई मनकी ताकत काममें आती है।' माता-पिताके मनकी ताकतके अनुसार शरीर और उसके सारे अवयव तथा मनकी वृत्ति बनती है। सन्तानके रूप रंगमें, शरीरके बननेमें और स्वास्थ्यमें, विचारोंकी बनावट और बिगाडका कारण केवल मनकी ताकत ही है। जिस तरह यदि आदमी गुस्सेमें आकर तसवीर खिंचवाता है, तो उसकी तसवीर क्रोधभरी जान पडती है, इसी प्रकार हँसते गाते, कूदते और उछलते हुए मनुष्यकी तसवीर उसी प्रकारकी होती है। इसी तरह मनकी शक्ति, जो गर्भाधानके समय होती है या जिसका संचार गर्भावस्थामें हुआ करता है, उसीके अनुसार बच्चेकी आकृति, प्रकृति और स्वभाव इत्यादि बनते हैं।

मनकी शक्तिमें सब शक्तियाँ आ जाती हैं, जिनका सबन्ध मनसे है। मनकी शक्तिका काम रजो-दर्शनसे ही प्रारम्भ हो जाता है और बच्चे के दूध पीनेके समय तक विशेष रीति से रहता है यही समय माता पिता द्वारा बच्चे के उत्तम वा मध्यम बननेका होता है। इसके अनेक प्रमाण हैं।

१. रजोदर्शनके समय मनोबलका प्रभाव।

१. मनकी शक्तिमें विकार न उत्पन्न होनेके लिये ही रजवती-को एकान्तवास कहा गया है। इस विषयमें वैद्यकका मत है कि स्नान करके चौथे दिन स्त्रीको पति अथवा

किसी सुन्दर पुरुषका दर्शन करना चाहिये । कारण यह है कि स्नान करके जैसे पुरुषका दर्शन स्त्री करती है उसीके रूप-रंगकी सन्तान उत्पन्न होती है। (श० क०)

इसमें एक प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि एक सज्जनकी स्त्री रजस्वला हुई। वह स्नान कर रही थी कि उसी समय में उसका भाई मिलनेके लिये आया। स्त्रीने स्नान करके तुरन्त ही अपने भाईसे भेंट की। संयोगवशात् उसी रजो-दर्शनसे गर्भ रह गया। सन्तान उत्पन्न हुई वह अपने मामाके रूप-रंग और आकृति की थी।

२. गर्भाधानके समय मनकी शक्तिका प्रभाव ।

१. इस विषयमें वैद्यकका मत है कि गर्भाधान समयमें जैसे रंग-रूपवाले स्त्री पुरुषका ध्यान या बच्चेकी भलाई बुराई या गुणोंपर माता-पिताका विचार चला जाता है, उसीके अनुसार सन्तान उत्पन्न होती। (श० क०)

आर्ष ग्रन्थोंका मत है कि गर्भाधानके समयमें जिस जीवमें स्त्रीका चित्त होगा अर्थात् जिस जीवका उसको ध्यान आ जावेगा उसीके अनुसार सन्तान उत्पन्न होगी। (च० शा० अ०२ श्लोक० २४) भोज वैद्यने भी ऐसा ही कहा है। इसमें प्रमाण यह है कि—

१. गुजरात देशमें एक सज्जनके घर बन्दरके आकृतिवाली सन्तान उत्पन्न हुई। पिता बुद्धिमान थे। इस बातको अनेक डाक्टरोंसे कहा गया। जाँचसे पता लगा कि एक बन्दर माताके पास रहता था और वह उसे अत्यन्त स्नेहसे पालती थी। पूछनेपर माताने इस बातको स्वीकार किया कि गर्भाधान समयमें उसकी दृष्टि बन्दर; पर पड़ी थी।

२ महाराष्ट्र देशमें माता-पिताने गर्भाधान समयमें अपने मनकी शक्तिको ज्योतिष-शास्त्रमें लगाकर बालक उत्पन्न किया । बालक बहुत बड़ा ज्योतिषी हुआ ।

३. गर्भाधानके बाद मनकी शक्तिका प्रभाव ।

१. गर्भाधान होनेतक तो मातापिता दोनोंके मनकी शक्तिका प्रभाव पड़ता है, परन्तु गर्भाधान होनेके बाद बच्चोंपर केवल माताकी ही मनःशक्तिका प्रभाव रहता है । तीन मास तक तो कम परन्तु चौथे महिनेसे विशेष प्रभाव पडने लगता है । इसका कारण यह है कि बालक का हृदय चौथे महीनेमें बन जाता है । अतएव माताके हृदयमें जो बात उत्पन्न होती है ऐसे समयमें उसका बहुत बडा प्रभाव सन्तानपर पडता है ।

(शा० क०)

इसके अनेक उदाहरण है ।

१ नेपोलियन बोनापार्ट यूरोपमें इतना युद्धवीर क्यों हुआ ? कारण यह था कि जब नेपोलियन गर्भमें था, तो उसकी माता अपने पतिके साथ लड़ाईमें काम करती थी । इस कारण वह संकट और साहससे काम करनेमें निर्भय हो गयी थी । वह घोड़ेपर सवार होती और उसके पतिके अधीन जितने मनुष्य थे सब पर हुकूमत रखती थी । इस वजहसे माताका यह गुण पुत्रमें विकास पाकर इतना बढा कि जिसकी बदौलत आजतक नेपोलियन युद्धवीर विख्यात है ।

२ एक गर्भवती स्त्रीने अपने पतिसे झगड़ा किया । घरमें स्त्री पुरुष दो ही थे । कई महीनेतक दोनों नहीं बोले ।

बच्चा पैदा हुआ, परन्तु वह सुस्त पड़ा रहता । बडे होने पर हर समय उसे गुस्सा रहता । उसे सबसे अलग बैठना पसन्द था । पिता ने इसकी जाँच की तो लडाई होना ही इसका कारण प्रतीत हुआ ।

३. अभिमन्युको गर्भमें ही चक्रव्यूहकी लड़ाई मालूम हो गई थी । कथा इस प्रकार है । कि जब अभिमन्यु पेटमें था, तो उसकी माताके पेटमे दर्द उत्पन्न हुआ । उस समय अभिमन्युके पिता अर्जुनने अपनी स्त्री सुभद्रा देवीका चित्त बँटाने और दुःख भुलवानेके लिये चक्रव्यूहकी लड़ाईका हाल सुनाया था । सुनते सुनते सुभद्रा देवी सो गई । केवल पाँच फाटककी लड़ाईका हाल बालकने गर्भमें सुना । उतना ही हाल अभिमन्युको याद रहा और वह महाभारतमें चक्रव्यूहके पाँच फाटकतक लड़ा और छठेपर मारा गया, क्योंकि उसको माताके सो जानेके कारण आगेकी लड़ाईका हाल मालूम न हो सका ।

४. महाराज युधिष्ठिर ऐसे न्यायमूर्ति क्यों हुए ? कारण यह था कि जब वे गर्भमें थे तो उनकी माता धर्मशास्त्र पढ़ती थीं ।

५. महात्मा बुद्ध ऐसे दयालु क्यों हुए ? कारण यह था कि जब बुद्धदेव गर्भमे थे, तो उनकी माताको प्रजाका कष्ट दूर करनेके विषयमें बहुत कुछ विचार करना पड़ा था ।

४. शरीरके रंगपर मनका प्रभाव ।

१. एक हबशी (अफ्रीकाका रहनेवाला काला आदमी) ने अपने जातिकी स्त्रीसे विवाह किया, परन्तु वह स्त्रीको प्यारसे नही रखता था । उसका चित्त एक दूसरी सुन्दर और गोरी स्त्रीपर था । एक दिन हबशीने उस

सुन्दर स्त्रीसे संयोगकी प्रार्थना की परन्तु उसने स्वीकार नहीं किया । अन्तमें हवशीको अपनी व्याही स्त्रीसे सन्तुष्ट होना पड़ा । उसी दिन गर्भ रह गया । मातापिता दोनोंके काले होनेपर गोरे रंगकी सन्तान उत्पन्न हुई । कारण यह था कि पिताका चित्त गोरे रंगकी स्त्रीपर था और गर्भाधान समयमें भी वह उसीका ध्यान करता रहा ।

१ एक यूरोपियन स्त्रीके कमरेमें ठीक पलगके सामने एक हवशीका चित्र लगा हुआ था । वह उसको नित्य देखा करती थी । गर्भ रह गया । गर्भावस्थामें भी स्त्री उस चित्रको देखती रही । सन्तान उत्पन्न हुई तो उसका रङ्ग काला था । माता पिता गोरे रङ्गके थे और सन्तान काली हुई । इन दोनोंको इस बातका बड़ा शोक रहा और अनेक डाकृरोंसे इस बातको उन्होंने कहा । एक डाकृरने जाँच की तो यह पता लगा कि जिस हवशीके काले चित्रको स्त्री रोज देखती थी, उसके मनपर उसका इतना प्रभाव पड़ा कि बच्चा काले रङ्गका उत्पन्न हुआ ।

३ रोम देशमें एक प्रतिष्ठित मनुष्य कुरूप और छोटे डील-का था । उसकी स्त्री सुन्दर और अच्छे कदकी थी । इनसे सन्तान हुई वह पिता सरीखी थी । मातापिताको यह चिन्ता हुई कि कहीं ऐसा न हो कि सारी सन्ताने इसी प्रकारकी हों । अनेक डाकृरोंसे सम्मति ली गई । एक डाक्टरने यह कहा कि स्त्रीका चित्त लम्बे और खूब-सूरत मनुष्योंपर होना चाहिये । इस विचारसे उसने तीन अत्यन्त सुन्दर पुतले बनवाकर अपने कमरेमें रखे । स्त्रीकी निगाह हर समय उन पुतलोंपर ही पडती थी ।

संयोग वश गर्भ रह गया। उन्हीं पुतलोंके समान रङ्ग रूपकी सन्तान उत्पन्न हुई। कारण यह था कि गर्भाधान समयमें स्त्रीको उन पुतलोंका ही ध्यान रहा करता था।

५. शरीरकी सुन्दरता और अंगोंपर मनका प्रभाव।

१. किसी प्रतिष्ठित घरमें एक कुबड़ी नित्य भिक्षा माँगने आया करती थी। उसको कहानी कहनेका बड़ा शौक था। जब वह आती तो घरकी सारी स्त्रियाँ उसे घेर लेतीं और कहानी सुन कर जाने देतीं। इनमेंसे एक स्त्री उसको बहुत चाहती थी और वही नित्य भिक्षा भी देती थी। दैव संयोगसे उस स्त्रीको गर्भ रह गया और उस भिक्षा माँगनेवाली स्त्रीके समान सन्तान हुई। कारण यह था कि माता उस स्त्रीको रोज देखती थी और उसका प्रेम उस पर था। अतएव उसका आकार माताके हृदयपर गर्भाधान समयमें भी जमा रहा, इसी कारण उसीके अनुसार सन्तान हुई।

२. एक घरमें दो स्त्री पुरुष थे। एक स्त्री और आ गई, वह कानी और कुरूपा थी। उसी बीचमें गर्भाधान हो गया। सन्तान उत्पन्न हुई तो बच्चेको भी एक आंख थी। कारण पूछनेसे मालूम हुआ कि जिस दिन गर्भाधान हुआ था उस रोज थोड़ी ही देर पहले दोनों स्त्रियाँ पास पास बैठी बातचीत कर रही थीं। गर्भाधान समयमें माताको उस कानी स्त्रीका ध्यान रहा था, इसीलिये ऐसी सन्तानका जन्म हुआ।

३. अमेरिकाके एक निवासीने दो सुन्दर चित्र खरीदे और अपने सोनेके कमरेमें रखवा दिये। दोनों स्त्रीपुरुषका-

इन चित्रोंसे बड़ा स्नेह था। स्त्रीको गर्भ रह गया। उन्हीं चित्रोंके समान सुन्दर सन्तान हुई। कारण यह था कि दोनों स्त्रीपुरुष चित्रोंसे स्नेह रखते थे और गर्भाधान समयमें दोनोंको उनका ध्यान था।

६. बच्चेके स्वास्थ्यपर मनका प्रभाव।

१. एक गृहस्थके घरमें बच्चा बीमार था और माताके पास ही सोता था। दैव संयोगसे उस दिन माताको गर्भ रह गया। उससे जो सन्तान हुई वह सदा रोगी रहती थी, कारण कि गर्भाधान समयमें मातापिताका चित्त बच्चेके रोगकी ओर था।

२. एक स्त्रीके शरीरमें दर्द था और उसी दिन उसका पति परदेशसे आया। दैव संयोग उस दिन गर्भ रह गया। पुत्र उत्पन्न हुआ वह सदा रोगी रहता था। कारण यह था कि मातापिता दोनोंके चित्तपर रोगका ख्याल जमा हुआ था।

७. सन्तान उत्पन्न हो जानेपर मनकी शक्तिका प्रभाव।

१. जिस समयतक बालक दूध पीता है तबतक बच्चेकी आत्मा माताकी आत्मापर अवलम्बित रहती है। माताकी आत्माका और दूधका बहुत बड़ा सम्बन्ध रहता है। इसी प्रकार विचार और आत्माका बहुत बड़ा सम्बन्ध है, इस कारण माताके विचारोंका असर दूधपर होता है और उसीके अनुसार सन्तान होती है। जो माताएँ क्रोधी होती हैं उनके बच्चे भी अवश्य क्रोधी होते हैं। जिन माताओंको मिरगी इत्यादिका रोग है उनके बच्चोंको भी अवश्य मिरगी आती है। बहुतेरे

इस बात को नहीं मानते, परन्तु इसमें प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि यदि शेरनी का दूध बच्चेको पिला दिया जाय, तो बच्चा अत्यन्त क्रोधी हो जायगा, परन्तु गाय का दूध पिलानेसे बच्चा क्रोधी नहीं होता, कारण यह है कि शेरनीकी प्रकृति ऐसी है कि वह हर समय क्रोधमें रहती है और क्रोधका असर दूध में रहता है। अतएव यह मानना पड़ेगा कि माताके अच्छे बुरे गुणोंका असर दूधमें अवश्य रहता है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि—

१. जो बच्चे धायोंके यहां पाले जाते हैं, जवानी और बुढ़ापे तक चाहे वे कैसेही क्यों न हो जायँ, परन्तु उनमें धायके गुण दोष अवश्य आ जाते हैं।

२. बंगालमें एक प्रतिष्ठितके घर सन् १८६५ ई० मे एक बालक उत्पन्न हुआ। माता चार दिन बाद मर गई। एक अहीरिनने उसे पाला। इसके यहाँ सब चोरी किया करते थे। तीन वर्षतक बालकने इसका दूध पिया। इसके बाद लड़का पिताके घर रहने लगा। पिताजी सीधे सादे थे, परन्तु बालक बड़ा होनेपर चोरोंके समुदाय का सरदार बना।

मानसशास्त्रके विद्वानोंका यह सिद्धान्त बहुत ठीक है कि संसारमें जो कुछ होता है वह मनःशक्तिके प्रभावसे। यही कारण है कि एक माता से उत्पन्न हुए बालकोंकी सूरत और प्रकृति दूसरेसे नहीं मिलती। एक भाई पापी है, तो दूसरा धर्मात्मा, एक कुरूप तो दूसरा रूपवान। इन सब का कारण मनःशक्ति हैं इसलिये सन्तानके सुधारनेके लिये माता पिताको अपने मनकी शक्ति ठीक रखनी चाहिये।

(३४) गर्भकी वायुका सन्तानपर प्रभाव।

गर्भाशय बच्चेके रहने का स्थान है। जब यहां पर किसी प्रकारसे वायुका उत्पात हो जाता है, तब अनेक प्रकारकी रोगी सन्तान उत्पन्न होती है। इसके अनेक भेद हैं।

१. गर्भाधान होनेपर गर्भमें वायुसे मिले हुए रज वीर्य्यके दो भाग हो जानेसे इसके एक भागमें वीर्य्य और दूसरे भागमें रज अधिक हो, तो एक कन्या और एक पुत्र उत्पन्न होता है। रज-वीर्य्य मिले पदार्थमें जब अधिक वीर्य्य हो तो उसके दो भाग हो जाने से दो पुत्र और जब रज अधिक हो तो दो भाग हो जानेसे दो कन्याएं उत्पन्न होती हैं। जब बढ़ी हुई वायुसे मिले हुए रजवीर्य्यके कई टुकड़े हो जावें, तो कर्मवश एक ही बार बहुत सी सन्तानें उत्पन्न होती हैं।

(च० शा० अ० २ श्लो० ११ से १३)

२. वायु द्वारा मिले हुए रज-वीर्य्यके दो भाग हो जानेपर बड़े भागसे जो बालक होगा वह पुष्ट और छोटे टुकड़ेसे निर्बल और क्षीण देहवाली सन्तान होगी।

(च० शा० अ० २ श्लो० १५)

३. यदि वायु गर्भके शुक्राशयको बिगाड़ दे, तो उससे जो पुत्र उत्पन्न होता है उसको पवनेन्द्री नपुंसक कहते हैं।

(च० शा० अ० २ श्लो० १७)

४ यदि वायु शुक्राशयके द्वारको रोक दे तो संस्कारवाही नपुंसक पैदा होता है। (च० शा० अ० २ श्लो० १८)

५ वायु और अग्निके दोषसे जिसके दोनों अण्डकोप नष्ट

हो गए हो तो उसको वातिक षण्ड (वातजनित नामर्द) कहते हैं। (च० शा० अ० २ श्लो० २०)

६. वायुके कोपसे गर्भका बालक कुबड़ा, पंगुल, लूला गूँगा और मिनमिना हो जाता है। (सु० शा० अ० २ श्लो० ३५)

इस प्रकार गर्भकी वायुके प्रकोपसे अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न होती है।

(३५) गर्भ समयके हर्ष, शोक, चिन्ता और इच्छाका सन्तानपर प्रभाव।

यह बात प्रसिद्ध है कि गर्भाधानके समयमे माता-पिताका मन जैसा होगा उसीके गुण-दोषके अनुसार सन्तान होगी; क्योंकि माता-पिताके हाथोंमें सन्तानके आत्माकी एक ऐसी कुंजी है कि जिससे वे बच्चेको अपनी इच्छाके अनुसार बना सकते हैं। गर्भाधान समयमें शोक और चिन्तासे अनेक प्रकारकी सन्तानें उत्पन्न होती हैं।

१. संयोग-समयके शोक चिन्ता और स्त्री पुरुषमें अनबन होनेके कारण बदसूरत, कुबडी, अंगहीन, सुस्त, बुरे स्वभावाली, द्वेषी, ठिगनी और दुर्बल सन्तान उत्पन्न होती है। (रतिशास्त्र)

२. प्रसन्नतारहित संयोग करनेपर माता-पिताके थोड़े रज-वीर्य्यसे यदि गर्भ रह जावे तो पुत्र होनेपर नरषण्ढ (हिजड़ा) और कन्या होनेपर नारीषण्ढ (हिजड़ी) उत्पन्न होती है। (च० शा० अ० २ श्लो० १८)

३. शोकयुक्त मातापिताके संयोगसे सदैव शोकमें रहने-

वाली सन्तान उत्पन्न होगी । यदि पिता शोकयुक्त हो तो वीर्य्यसे उत्पन्न होनेवाले, और यदि माता शोकयुक्ता हो तो, रजसे उत्पन्न होनेवाले अंग निस्तेज होंगे ।

(शा० क०)

४. गर्भवतीके हर्षयुक्त रहनेसे उत्तम शरीरवाली और लम्बी सन्तान उत्पन्न होती है । (शा० क०)

५. गर्भ समयमें हर्ष-विषाद दोनोंके होनेसे औसत दर्जेकी लम्बी और बली सन्तान होती है । (शा० क०)

६. यदि गर्भवती विषादयुक्ता हो तो छोटे कद और दुष्ट स्वभावकी सन्तान होती है । (शा० क०)

७ गर्भाधान समयमें मातापिताके हर्षित होनेसे उत्तम और बडे डीलडौलकी सन्तान होती है । (शा० क०)

८. माताकी मैथुनकी इच्छा न हो और विना इच्छाके मैथुनसे गर्भ रह जाय, तो टेढी सन्तान होती है ।

च० शा० अ० २ श्लो० १९)

९ मातापिता यदि ईर्षायुक्त और मन्द हर्ष अर्थात् अच्छी तरहसे प्रसन्न न होकर गर्भाधान करें, तो ईर्षा करनेवाली सन्तान उत्पन्न होती है ।

इस प्रकार गर्भाधान समय और गर्भ समयमें हर्ष, शोक और चिन्तासे अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न होती है। अतएव मातापिताको अत्यन्त सावधानीसे गर्भाधानके समय हर्षयुक्त और प्रसन्न रहना चाहिये ।

(३६) माता-पिताके दूषित व्यवहारोंका सन्तानपर प्रभाव ।

जैसा व्यवहार माता-पिताका गर्भाधान और गर्भस्थितिमें

होता है गर्भके बच्चेको वैसा ही बनना पड़ता है; क्योंकि बच्चेकी आत्मा मातापिताकी आत्मापर अवलंबित है । अतएव कुव्यवहारके कारण अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न होती है।

१. जो पुरुष मोहवश ऋतु समयमें स्त्रीके नीचे होकर संयोग करता है, यदि उस समय गर्भ रह जावे और पुत्र हो तो वह स्त्रीचेष्टावाला, जनानियाँ, जनखा उत्पन्न होता है । इसको षण्ढ कहते हैं ।

(सु० शा० अ० २ श्लो० ४६)

२. ऋतुसमयमें बलवती स्त्री पुरुषके ऊपर चढ़ कर संयोग करावे और गर्भ रह जावे और उससे यदि कन्या उत्पन्न हो तो वह कन्या दाढ़ी मूँछवाली तथा पुरुषके समान चेष्टावाली होती है। (सु० शा० अ० २ श्लो० ४७)

३. संयोगकी इच्छा रखनेवाली दो स्त्रियाँ यदि आपसमें पुरुषकी भाँति संयोग करें और एक स्त्रीका वीर्य्य गिर जावे और दूसरी स्त्रीके रजसे वह वीर्य्य मिल जाय, तो बिना हड्डियोंवाली पिंड सरीखी सन्तान उत्पन्न होती है

(सु० शा० अ० २ श्लो० ५१)

यहाँपर यह शंका होती है कि क्या स्त्रियोंको वीर्य्य होता है ? यह मानी हुई बात है कि स्त्रियोंमें वीर्य्य होता है। यदि ऐसा न हो तो उनमें ओज नहीं हो सकता । जब ओज न होगा तो लावण्यता और सुकुमारता इत्यादि नहीं हो सकती। अतएव उनमें वीर्य्य अवश्य होता है। उपर्युक्त गर्भ उस स्त्रीको रहता है जो संयोगके समय नीचे रहती है । (शा० क०)

४. दूसरे पुरुषके संयोगसे निर्लज्ज सन्तान उत्पन्न होती है।

(शा० क०)

५. यदि स्त्री लिंगके समान किसी वस्तु, गाजर मूली इत्यादिसे मैथुन करावे, तो पिंड सरीखी सन्तान उत्पन्न होती है। (शा० क०)

६. यदि स्त्री रजो-धर्मसे स्नान कर कामवश पुरुषसे स्वप्नमें मैथुन करावे तो वायुसे बिगड़ कर रज कुक्षिमें गर्भ सा बन जाता है और पिताके वीर्य्य गुणोंसे रहित बिना हड्डियोंका एक पिंड सरीखा उत्पन्न होता है।

(सु० शा० अ० २ श्लो० ५२ व ५३)

इस प्रकार मातापिताके दूषित व्यवहारोंसे अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न होती है। अतएव मातापिताको अत्यन्त सावधानीसे रहना चाहिये।

(३७) सन्तानपर दूषित रजका प्रभाव।

रज वह पदार्थ है कि जिससे शरीर बनता है। यह जितना उत्तम होता है उतनी ही अच्छी सतान होती है। जब किसी प्रकारसे रज दूषित हो जाता है, तो अनेक रोगयुक्त सन्तान उत्पन्न होता है। इसके अनेक भेद हैं।

१. जब रज और गर्भोत्पादक बीज दूषित हो जाते हैं, तब वन्ध्या-दोषयुक्त कन्या उत्पन्न होती है। (शा० क०)

२ जब रजमें गर्भोत्पादक भाग दूषित हो जाता है, तब सड़ी हुई सन्तान उत्पन्न होती है। (शा० क०)

३. जब रजमें गर्भकारक पुरुष-बीज-भाग दूषित हो जाता है तब स्त्रीकी आकृतिवाली किन्तु स्त्री चिन्होंसे रहित, वार्ता नामक सन्तान होती है। (शा० क०)

४. रजसे उत्पन्न होनेवाले जितने अवयव हैं जब उन अवयवोंका अंश, जिससे वे अवयव बनते हैं, दूषित हो

जाता है, तब वे अवयव विकृत अर्थात् टेढ़े पड़ जाते हैं। (श०क०)

५. वायुसे दूषित रजकी सन्तान लालीमें कुछ कालापन लिये होता है। (श०क०)

६. पित्तसे दूषित रजकी सन्तान कुछ पीलेपनमें कालापन लिये हुए और अल्पजीवी होती है। (श०क०)

७. कफ़से दूषित रजसे उत्पन्न सन्तान सफेदीमें पीलापन लिये होती है। (श०क०)

८. खूनसे दूषित रजकी सन्तानका वर्ण लाल होताहै और वह अल्पजीवी होती है। (श०क०)

९. कफ़ और वायुसे दूषित रजकी सन्तान अल्पजीवी और रोगयुक्त होती है। (श०क०)

१०. पित्त और वायुसे दूषित रजकी सन्तान रोगयुक्त और अल्पजीवी होती है। (श०क०)

११. पित्त और कफ़से दूषित रजकी सन्तान टेढ़े अंगवाली होती है। (श०क०)

१२. वात, पित्त और कफ़से दूषित रजसे प्रायः सन्तान उत्पन्न नहीं होती। गर्भापात हो जाता है। (श०क०)

१३. कुमारी कन्याओंमें बाल-प्रदर माताके रज-विकारसे होता है। (रतिशास्त्र)

१४. यदि माताका थोड़ा रज गर्भाधान समयमें गिरे, तो ऐसी दुबली मातासे नारीषढ सन्तान उत्पन्न होती है।

(च०शा०अ०२श्लो० १८)

१५. रजमें गर्भाशयकारक बीजका अंश दूषित होनेसे मरी हुई अथवा क्लिन्नाग सन्तान उत्पन्न होती है। (श०क०)

इस प्रकार दूषित रजसे अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न

होती है। अतएव वज्रमें जिस समय ज़रा भी बिगाड़ मालूम हो तो उसके दूर करनेका यत्न तुरन्त अत्यन्त सावधानी से करना चाहिये।

(३८) सन्तानपर दूषित वीर्य्यका प्रभाव।

वीर्य्य वह पदार्थ है कि जिससे शरीर बनता है। यह जितना उत्तम हो उतनी ही अच्छी सन्तान उत्पन्न होती है। वीर्य्य जब किसी प्रकारसे दूषित हो जाता है, तो अनेक रोग-युक्त सन्तान उत्पन्न होती है। इसके अनेक भेद हैं।

१. वीर्य्यके उत्तम होनेसे गर्भाधान होनेपर जो सन्तान होती है वह स्त्री और पुरुषके लक्षणोंसे रहित हिजड़ा अर्थात् नपुंसक होती है। च० शा० अ० २ श्लो० १७

२. पिताके दुर्बल वीर्य्यसे टेढ़ी सन्तान उत्पन्न होती है। (च० शा० अ० २ श्लो० १२)

३. वायु से दूषित वीर्य्य की सन्तान लालीमें कुछ कालापन लिये होती है। (ग० क०)

४. पित्तसे दूषित वीर्य्यकी सन्तान अल्पजीवी, पीलेपनमें कुछ कालापन लिये होती है। (ग० क०)

कफसे दूषित वीर्य्यकी सन्तान सफेद में पीलापन लिये होती है। (ग० क०)

६. खूनसे दूषित वीर्य्यकी सन्तान लाल रंगका और अल्प-जीवी होती है। (ग० क०)

७. कफ और वायुसे दूषित वीर्य्यकी अल्पजीवी और रोग-युक्त सन्तान होती है। (ग० क०)

८. पित्त और वायुसे दूषित वीर्य्यकी अल्पजीवी और रोगयुक्त सन्तान होती है। (ग० क०)

९. पित्त और कफ़से दूषित वीर्य्यकी उत्पन्न सन्तान अल्पायु, टेढे अंगवाली होती है। (शा० क०)

१०. वात, पित्त और कफ़ तीनोंसे दूषित वीर्य्य सन्तान उत्पन्न नहीं करता। गर्भपात हो जाता है। (शा० क०)

११. सिद्दियोंका कुरूप और काला रंग, यूरोपियनोंकी कंजी आखें, अमेरिकावालोंका ताम्रवर्ण, काबुलियोंका क्रोधी होना, वीर्य्यका दोष है।

१२. गर्भाधान समयमें यदि पिताका बहुत ही थोड़ा वीर्य्य हो तो आसेवय अर्थात् थोड़े वीर्य्यवाला पुरुष उत्पन्न होता है। (सु० शा० अ० २ श्लो० ४२)

१३. वीर्य्य-दोषके कारण गर्भमे कन्याका गर्भाशय नष्ट हो जाता है। ऐसी स्त्रीके स्तन नहीं निकलते और न उसे पुरुष समागमकी इच्छा होती है। ऐसी स्त्रीको षण्ढी कहते हैं। (च० चि० अ० ३० श्लो० २३)

१४. जब पुरुष के बीजभागमें दोष उत्पन्न होता है, तब पितृज अर्थात् पितासे उत्पन्न होनेवाले अवयवोंमें विकार होता है। (शा० क०)

१५. जब पुरुषके सन्तान-कारक अर्थात् सन्तान उत्पन्न करनेवाले बीजभागमें दोष उत्पन्न होता है तो पूति अर्थात् नामर्द सन्तान उत्पन्न होती है। (शा० क०)

१६. जब पुरुष-कारक बीजभाग दूषित हो जाता है, तब पुरुषाकृति, विशिष्ट पुरुष चिह्नोंसे रहित, तृणपूति सन्तान होती है। (शा० क०)

१७. वीर्य्यसे उत्पन्न होनेवाले जितने अवयव हैं, जब वीर्य्य-में उन अवयवोंका अंश, जिससे वे बनते हैं, दूषित हो

जाता है तब वे अवयव विकृत अर्थात् टेढ़े इत्यादि हो जाते हैं। (च० श० अ० ४ श्लो० ३०)

१८. वीर्य्यमें जब हड्डियोंको बनानेवाला अंश दूषित हो जाता है तब बौनी सन्तान उत्पन्न होती। (श० क०)

१९. यदि गर्भाधान समयमें पिताका थोड़ा वीर्य्य गिरे तो ऐसे पितासे नरपंढ सन्तान उत्पन्न होती है। (च० शा० अ० २ श्लो० १८)

२०. गर्भके जो अवयव वीर्य्यके जिस अंशसे उत्पन्न होते हैं उस वीर्य्यके उसी अंशके दूषित होने से गर्भके वही अवयव दूषित हो जाते हैं। (च० श० अ० ४ श्लो ३०)

२१. वीर्य्य रक्त और गर्भाशयकारक अंश दूषित होनेसे स्त्री वन्ध्या कन्याको उत्पन्न करती है।

(च० श० अ० ४ श्लो० ३६)

२२. वीर्य्यमें रज और गर्भाशय-कारक अंश दूषित होने तथा आनुषंगिक स्त्री-चिह्न प्रगटकर्ता बीजांश दूषित होनेसे गर्भिणी स्त्री—स्त्रीकी आकृतिवाली, योनि रहित वार्ता नामक सन्तान-उत्पन्नकरती है।(च०श०अ०४श्लो०३७)

२३. मिले हुए रजवीर्य्यमें जब वीर्य्य उत्पन्न करनेवाले वीर्य्यका अंश दूषित होने और आनुषंगिक पुरुष चिह्न कारक बीजांश दूषित होनेसे पुरुषकी सी आकृतिवाली नामर्द तृणपूतिक नामक सन्तान उत्पन्न होती है। इसको पुरुष व्यापत अथवा पुरुष नय कहते हैं।

(च० श० अ० ४ श्लो० ३८)

वीर्य्य और सन्तानका बहुत बड़ा सम्बन्ध है। जितने मनुष्योंके सन्तान होती है सबके लिये यह नहीं कहा जा सकता कि उनका वीर्य्य शुद्ध और नीरोग है। यहाँ एक बहुत

बड़ा प्रश्न यह होता है कि वात पित्त इत्यादिसे दूषित वीर्य्य-वाले पुरुष सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं या नहीं ?

इस विषयमें सुश्रुतने लिखा है कि वातपित्त इत्यादि दोष-सेदूषित वीर्य्यवाले सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकते; परन्तु इस विषयमें वैद्यकके दूसरे विद्वान् सन्तान उत्पन्न होना कहते हैं, जैसा कि ऊपर शरीरकल्पद्रुमसे लिखा गया है। भाव-प्रकाशमें पण्डित दत्तराम चौबेजीने सुश्रुतकी इस पंक्तिके विषयमें कि 'वातादि दोषसे युक्त वीर्य्यवाले सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकते।' आदि पंक्तिसे वे यह अर्थ निकालते हैं कि 'वात इत्यादि से दूषित वीर्य्यवाले शुद्ध सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकते, किन्तु रोग इत्यादिसे युक्त अशुद्ध सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं। क्योंकि जन्मांध, बहरे, पंगू आदि ऐसे ही दूषित वीर्य्यसे उत्पन्न होते हैं।'

जिन स्त्री-पुरुषोंके कुष्ठकी विशेषतासे रज-वीर्य्य दूषित होता है ऐसे रज-वीर्य्यसे कोढ़ी सन्तान उत्पन्न होती है। (भा० ग० प्र०) इससे स्पष्ट है कि वातादि दोषयुक्त वीर्य्यसे सन्तान होती तो अवश्य है, परन्तु रोगी और अल्पायु होती है।

इस प्रकार वीर्य्य-दोषसे रोगी और अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न होती है।

(३६) माताके आचरणका सन्तानपर प्रभाव।

आचरणसे शरीरमें अच्छाई और बुराई उत्पन्न होती है। जिस समय मनुष्य बुरोंकी संगतमें पड़ता है या स्वयं उसके हृदयमें बुरे आचरणोंका प्रवाह बहने लगता है, तो ऐसी दशा-में बुरे आचरणोंका आश्रय लेना पड़ता है। जब माता द्वारा बुरे आचरण हो जाते हैं, तो गर्भके बालकपर उनका बहुत ही

बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके अनेक भेद हैं, जो रजस्वला होने से गर्भ उत्पन्न होनेतक होते हैं।

१. दिनमें सोनेसे बहुत सोनेवाली, कज्जल लगानेसे अंधी, रोनेसे नेत्र विकारवाली, स्नान और अनुलेपन करनेसे दुःखशील, तेल लगानेसे कुष्ठी, नाखून कतरनेसे खराब नाखूनवाली, दौड़कर चलनेसे चंचल, हँसनेसे काले दांतों तथा काले होठ, तालू और जीभवाली, बहुत बोलनेसे बकवादी, जोरका शब्द सुननेसे बहिरी, बालोंमें कंघी करनेसे गंजी, हवा अधिक खानेसे तथा कष्ट करनेसे मतवाली सन्तान उत्पन्न होती है। जब ये आचरण रजस्वला समयमें किये जावें और उसी ऋतु धर्मसे गर्भ रह जावे, तो उसका बहुत बुरा प्रभाव सन्तान पर होता है। (सु० शा० अ० २ श्लो० २४)

२ यदि गर्भवती अंगोंको फैलाकर सोवे और रात्रिमें फिरा करे तो उन्मत्त सन्तान होती है।

(च० शा० अ० ८ श्लो० ४१)

३ यदि कलह और लड़ाई करना गर्भवतीको अच्छा मालूम हो या करे तो भृंगी रोगवाली सन्तान होती है।

(च० शा० अ० ८ श्लो० ४१)

४. यदि गर्भवती बहुत सोच विचार किया करे, तो डरनेवाली, क्षीण अथवा अल्पायु सन्तान होती है।

(च० शा० अ० ८ श्लो० ४६)

५ यदि गर्भवती चोरी किया करे, तो आलसी, झगड़ा करनेवाली और बुरे कामोंमें लगी रहनेवाली सन्तान होती है। (च० शा० अ० ८ श्लो० ४१)

६. गर्भवतीके क्रोधी रहनेसे छली और चुगलखोर सन्तान उत्पन्न होती है। (च० शा० अ० ८ श्लो० ४२)
७. बहुत सोनेवाली गर्भवतीसे तन्द्रावाली, मूर्ख या मन्दाग्नि रोगवाली सन्तान उत्पन्न होती है।

(च० शा० अ० ८ श्लो० ४१)

८. यदि गर्भवती बहुत चिल्लावे, तो उससे कानके रोगोंवाली सन्तान उत्पन्न होती है। (शा० क०)
९. गर्भकी दशामें यदि स्त्री पुरुषसे संयोग कर लेवे और यदि पुत्र पैदा हो, तो बदचलन और कन्या हो, तो पर पुरुषके साथ गमन करनेवाली होती है। (शा० क०)
१०. जैसा आचरण गर्भवतीका होता है उसीके अनुसार सन्तान उत्पन्न होती है। (शा० क०)

इस प्रकार बुरे आचरणोंसे अनेक प्रकारकी सन्तान उत्पन्न होती है। अतएव माता-पिताको अपने अपने आचरणों पर विशेष ध्यान रखना चाहिये।

(४०) सन्तानपर माताकी इच्छाका प्रभाव।

इच्छा वह चीज है कि जिससे मनुष्य के हृदयका भाव मालूम होता है। जब मनुष्य किसी बातकी इच्छा करता है, तो उसको अपनी इच्छाके वशमें हो जाना पड़ता है। जबतक वह वस्तु उसको नहीं मिलती, उसके पानेकी लालसा लगी रहती है। गर्भवतीमें इच्छा-शक्ति अच्छी तरहसे चौथे महीनेमें उत्पन्न होती है। उस समयतक गर्भस्थित बालकका हृदय बन जाता है और माताकी इच्छामें बच्चेकी इच्छा भी मिली रहती है। अतएव माताकी इच्छाका बुरा भला प्रभाव सन्तानपर अनेक प्रकारसे पड़ता है।

१. यदि गर्भवती मैथुन-प्रिय हो अर्थात् उसको मैथुनकी इच्छा हो तो निर्लज, विकलांग अथवा मेहरा, गांड़िया सन्तान उत्पन्न होती है।

(च० शा० ८ श्लो० ४१)

२. यदि गर्भवती पराये धनके हरनेकी इच्छा करे, तो कुढ़ने और ईर्षावाली अथवा राड़ियाँ या ज़नानिया सन्तान होती है।

(च० शा० अ० ८ श्लो० ४१)

३. यदि गर्भवतीको सूअरका मांस प्रिय हो अर्थात् उसके खानेकी इच्छा हो, तो लाल नेत्रवाली, हत्यारी, कसाई तथा कुछ कुछ कठोर रोमवाली सन्तान उत्पन्नहोती है।

(च० शा० अ० ८ श्लो० ४२)

४. अपनी इच्छाके अनुसार गर्भवतीको मनमाना पदार्थ न मिलनेसे गर्भका बालक, बौना, कुबड़ा, टूंटा, पागल, मूर्ख और नेत्रविकारवाला उत्पन्न होता है। इसलिये जिस वस्तुकी इच्छा हो वही स्त्रीको गर्भ समयमें देना चाहिये। यदि मनमाना पदार्थ मिल जाय तो पराक्रमी-चिरंजीवी और उत्तम बालक उत्पन्न होता है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० २१)

५ जिन जिन इन्द्रियोंके सुखको गर्भवती मांगनेकी इच्छा करे उनके न मिलनेसे गर्भको बाधा पहुँचती है। इसलिये मनचाहा पदार्थ जरूर देना चाहिये। मनमाना पदार्थ मिलनेसे गुणयुक्त सन्तान होती है और न मिलनेसे बालक और माता दोनोंको भय रहता है। गर्भवतीकी इच्छा जिन जिन इन्द्रियोंसे संबन्ध रखने वाले पदार्थकी हो यदि वे न मिलें तो उन्हीं २ अंगोंको हानि पहुँचती है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० २२ से २४)

६. यदि गर्भवतीको राजाके दर्शनकी इच्छा हो, तो धनवान् और भाग्यशाली सन्तान उत्पन्न होती है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० २५

७. उत्तम वस्त्र और आभूषणोंके पहनेकी इच्छा हो तो शौकीन सन्तान पैदा होती है। (सु० शा० अ० ३ श्लो २६)

८. यदि महात्मा और देवताओंके दर्शनकी इच्छा हो, तो धर्म्मशील और सत्पात्र सन्तान होती है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० २७)

९ सर्प इत्यादि देखनेकी इच्छा यदि गर्भवती करे, तो हिंसा करनेवाली सन्तान उत्पन्न होती है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० २८)

१० यदि गोहका मांस खानेकी इच्छा हो, तो बहुत सोनेवाला दीर्घसूत्री बालक उत्पन्न होता है। (२८)

११. यदि गोमांस खानेकी इच्छा करे तो बलवान् और सारे क्लेशों को सहने वाली सन्तान उत्पन्न होती है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० २९)

१२ भैंसे का मांस खानेकी इच्छा गर्भवतीको हो, तो शूरवीर लाल नेत्रोंवाली रोमयुक्त सन्तान उत्पन्न होती है। (२९)

१३. यदि सूअरके मांसकी इच्छा हो तो सोनेवाली और शूरवीर सन्तान उत्पन्न होती है। (सु० शा० अ० ३ श्लो० ३०)

१४. यदि गर्भवतीकी इच्छा रास्ता चलनेकी हो, तो बड़ी बड़ी जंघाओं और बन में विचरनेवाली सन्तान उत्पन्न होती है। (३०)

१५. हिरनका मांस खानेकी इच्छा यदि हो, तो बड़ी जंघाओं-वाली सदा बनचारी सन्तान होती है। (३०)

१६. यदि गर्भवतीका चित्त साबरके मांसपर हो, तो उद्विग्न-चित्तवाली सन्तान होती है। (३०)

१७. तीतरका मांस खानेकी इच्छा यदि गर्भवती करे, तो सदा डरनेवाली सन्तान उत्पन्न होती है। (३०)

१८. गर्भवती यदि शृंगारकी इच्छा करे, तो शौकीन सन्तान होती है। (शा० क०)

१६. यदि गर्भवती को बदचलनीके लिये किसी मित्रसे मिलनेकी इच्छा हो, तो बदचलन पुत्र और यदि कन्या हो, तो वह कुकर्म करनेवाली होती हैं। (शा० क०)

२०. किसी स्नेहीसे मिलनेकी इच्छा हो, तो मिलनसार सुहृद सन्तान होती है। (शा० क०)

२१. यदि श्रेष्ठ और पूज्य जनोंसे मिलनेकी इच्छा हो, तो सदाचारी सन्तान होती है। (शा० क०)

२२ यदि गर्भवतीको खेल करनेकी इच्छा हो, हँसमुख सन्तान होती है। (शा० क०)

२३. शिकार करनेकी इच्छा यदि हो, तो हिंसक सन्तान होती है। (शा० क०)

२४. यदि गर्भवतीकी लिखने पढनेकी इच्छा हो, तो गुणज्ञ सन्तान होती है। (शा० क०)

२५. यदि नाच-गानेकी इच्छा हो, तो शृंगाररससे भरी हुई सन्तान होती है। (शा० क०)

२६. यदि गर्भवतीको उत्तम फल खानेकी इच्छा हो, तो शुद्ध भोजन करनेवाली सन्तान होती है। (शा० क०)

२७ फुलवारी और उपवनोंमें सैर करनेकी इच्छा हो, तो प्रसन्नचित्तवाली सन्तान उत्पन्न होती है। (शा० क०)

२८. यदि हँसी दिल्लगीकी इच्छा हो, तो पुत्र होनेपर परस्त्री-प्रिय और यदि कन्या हो तो कुकर्म करनेवाली होती है ।
(शा० का०)

२९. यदि द्रव्य एकत्र करनेकी इच्छा गर्भवतीको हो, तो कंजूस सन्तान होती है । ("To क")

इच्छा बहुत बड़ी चीज़ है। गर्भ समयमें इससे सावधान रहना चाहिये । जहाँतक हो सके उत्तम इच्छाका होना ठीक है, क्योंकि इच्छाका बहुत बड़ा प्रभाव बालकोंपर पड़ता है । माताकी जैसी इच्छा होती है उसीके अनुसार सान्तान भी उत्पन्न होती है ।

(४१) माताके भोजनका सन्तानपर प्रभाव ।

आहार वह वस्तु है कि जिससे शरीरका पोषण होता है । गर्भका बालक भी आहारके रससे पलता और पुष्ट होता है । अतएव माताका जैसा आहार होगा उसीके गुण दोषके अनुसार बच्चा भी होगा । आहारके गुणदोष बच्चोंमें अनेक प्रकारसे होते हैं ।

१. यदि गर्भवती मदिरा पीया करे, तो तृषात् अथवा विकल चित्तवाली सन्तान उत्पन्न होती है ।
(च० शा० अ० ८ श्लो० ४२)

२. गोहका मांस खानेसे शर्करा, पथरी, अथवा शनैर्मेह रोगवाली सन्तान होती है । (४२)

यदि गर्भवती मछली खाया करे, तो बहुत देरमें पलक मारनेवाली या टेढ़ीदृष्टिवाली सन्तान उत्पन्न होती है ।
(४२)

४. मीठा भोजन खानेवाली गर्भवतीसे प्रमेह रोग वाली, गूँगी या अत्यन्त मोटी सन्तान होती है । (४२)

५. गर्भवतीके खटाई खानेपर रक्त पित्तसे रोगी, कुष्ठी या नेत्र-रोगवाली सन्तान उत्पन्न होती है । (२४)

६. नमक अधिक खानेवाली गर्भवती वली, पलित और खलित्य रोगग्रस्त सन्तान उत्पन्न होती है । (४२)

७. यदि गर्भवती चरपरे रसका अधिक सेवन करे, तो दुर्बल, थोडे वीर्य्य और उससे सन्तान न होनेवाला बालक उत्पन्न होता है । (४२)

८ कडुए रसके सेवन करनेवाली गर्भवतीसे शोषी, दुर्बल और सूखी हुई सन्तान उत्पन्न होती है । (४२)

९. यदि गर्भवती कसैले रसका सेवन किया करे, तो काले रंगवाली या अफरा या उदावर्त रोगवाली सन्तान उत्पन्न होती है । ([illegible])

१०. फीका भोज करनेसे निस्तेज आलसी सन्तान होती है ।

(रतिशास्त्र)

इस प्रकार विपरीत भोजनके होनेसे अनेक प्रकारके रोगोंसे युक्त सन्तान उत्पन्न होती है । अतएव माता को अपने भोजनपर विशेष ध्यान रखना चाहिये, क्योंकि सन्तानके गुण-दोषमें आहार एक बहुत बड़ी चीज़ है । खाये हुए पदार्थसे रस बन कर गर्भका पोषण होता है । अतएव भोजनके गुण-दोषानुसार सन्तानके उत्पन्न होनेमें आश्चर्य्य ही क्या है ?

(४२) गर्भवतीके लक्षण ।

जिन स्त्रियोंमें रजोधर्मकी खराबी है, जो दो दो तीन तीन मासतक रजस्वाला नहीं होतीं, उनको गर्भाधान होनेका पता

ही नहीं चलता । वे इसी विचारमें रहती हैं कि अभी रजस्राव-का समय नहीं आया है । यदि गर्भाधान हो गया तो अनेक कारणोंसे विश्वास ही नहीं होता । क्योंकि वे ऐसे ही लक्षणों-को ठीक मानती हैं कि जो रुग्णावस्थामें भी पाये जाते हैं । इसलिये उन लक्षणोंको भी जानना ज़रूरी है कि जो गर्भवतीमें होते हैं । इसके अनेक लक्षण हैं ।

१. वैद्यकका मत

१. स्तनोंके अगले भागका काला हो जाना, पेटपर बालोंकी सेली उठी सी दिखलाई देना, नेत्रोंकी पलकोंका विशेष रूपसे मिचना, विना किसी दूसरे कारणके कै होना, सुगन्ध बुरी लगना, थूक अधिक आना, थकावट मालूम होना । (सु० शा० अ० ३ श्लो० १२ वा १४)

२. रज बन्द हो जाना, बार बार मुखमें पानी भर आना, अन्नसे अरुचि, कै, खटाई खानेकी इच्छा होना, शरीर-का भारी पड़ जाना, दोनो आखें मिचीसी जान पड़ना, स्तनोंमें दूधका संचार होना, ओठ और स्तनोंका अगला भाग काला पड़ जाना, पैरों में थोड़ीसी सूजनका होना, कभी कभी रोमांच हो जाना । (च० शा० अ० ४ श्लो० २१)

३. मैथुनकी चाह न होना, मुखका पीला पड़ जाना, स्तनों-का बढ़ना, न खाने योग्य वस्तुओंके खानेको चित्त चाहना, बालकका उछलना, आलस्य, डकारोंका आना और अपच । (शा० क०)

२. विद्वानोंकी राय ।

१. गर्भमें बालकके हृदयकी धड़कन मालूम होती है । यह धड़कन घड़ीके समान हृदयपेशियोंके संकोचनसे होती

है। इस धड़कनके मालूम करनेसे बालकका गर्भाशयमें होना निश्चय होता है। यदि यह धड़कन न हो तो मूढ़ गर्भ (False pregnancy) समझना चाहिये। ऐसी धड़कन माताकी बाईं कोखके बीचमे सुनाई पड़ती है। इसकी चाल बालकके सबल और निर्बल होनेपर है।

ऊपर जितने लक्षण कहे गये हैं वे सब मूढगर्भमें होते हैं; परन्तु उसमें हृदयकी धड़कन नहीं होती। इसीसे गर्भका निश्चय ठीक तौरसे होता है।

(४२) गर्भमें क्या है ?

उन लोगोंके लिये कि जो शास्त्रके मर्मको जानते हैं, यह मालूम कर लेना कि गर्भमें क्या है, कुछ कठिन नहीं। परन्तु वे लोग जिन्होंने कभी ऐसे विषयपर विचार नहीं किया, जो सदैव इससे अलग रहे, जिन्होंने स्वप्नमें भी अपने गार्हस्थ्य-जीवनपर दृष्टि नहीं डाली, उनके लिये तो यह अत्यन्त कठिन विषय है। इसके लक्षण प्रारंभसे ही प्रकट होने हैं; परन्तु दो तीन महीने बाद वे अच्छी तरह मालूम होने लगते हैं। इसमें आचार्य्योंके अनेक मत हैं।

१. वैद्यकका मत।

१. गर्भाधान समयमें रज-वीर्य्य मिल कर जब गर्भ धारण होता है, यदि उस समय नाभिकी दहिनी ओर थोड़ासा हटकर कुछ दर्द हो, तो पुत्र; और यदि नाभिकी बाईं ओर कुछ हटकर दर्द हो, तो कन्या तथा नाभिके नीचे हो, तो नपुंसकका गर्भ समझना चाहिये। (रतिशास्त्र)

२. दूसरे महीनेमें गर्भ तीन प्रकारसे ज़ाहिर होता है। (च० शा० अ० ८ श्लो० ८)

१. घन अर्थात् गोल आकारका गर्भ मालूम हो, तो पुत्रका गर्भ समझना चाहिये।

२. पिंड अर्थात् लम्बे आकारकी मांसपेशी हो तो कन्या का गर्भ जानना चाहिये।

३. अर्वुद् अर्थात् गोल, कुछ चिपटा हुआ पिंड सरीखा हो, तो नपुंसकका गर्भ समझना चाहिये।

वाग्भट्ट और भावप्रकाशमें भी ऐसा ही कहा है।

३. स्त्रीकी सब चेष्टाएँ अर्थात् धारणादि सब क्रियाएँ बाएँ अंगसे अधिक हों, गर्भवतीको पुरुष संग अप्रिय मालूम हो, शयन, पान, भोजन, शील और चेष्टा सब अत्यन्त स्त्री जनोंको जो उचित हैं वैसी ही हों, बाईं पसलीकी तरफ गर्भका संचय अधिक हो, गर्भ वर्त्तीके आकार का न हो, बाएँ स्तनसे पहले दूध निकले, तो ऐसे गर्भसे कन्या उत्पन्न होती है।

४. प्रथम दहिने स्तनमें दूध आना, पहले दहिने अंगसे चलना और काम करना, जैसे चलनेमें दहिना पैर पहले उठाना और काम करनेमें पहले दहिना हाथ बढ़ाना, पुरुष नामावली वस्तुओंकी इच्छा करना और दहिनी कुक्षिका ऊँचा होना, इन लक्षणोंसे पुत्र होता है।

(वा० शा० अ० १ श्लो० ७०-७२)

५. नपुंसक सन्तानके लक्षण—

१. ऊपर कहे हुए कन्या और पुत्रके लक्षण मिले होनेसे नपुंसक सन्तान उत्पन्न होती है। (इस बातको चरक, सुश्रुत और वागभट्ट तीनोंने माना है)।

२. पेटके दोनों पँसवाड़े ऊँचे होने तथा पेट आगेको निकलनेसे। (सु० शा० अ० ३ श्लो० ४१)

३ पेट के बीचका भाग ऊँचा होनेसे । (वा० शा० अ० १)

६. जोडली—जोडुवाँ सन्तानके लक्षण ।

१. पेट दोनों तरफसे उभरा और बीचमें नीचा होनेसे दो सन्तान होती हैं । (सु० शा० अ० ३ श्लो० ५०)

२. एक ओर अर्थात् दहिनी ओर पेटका उभार और, बाईं ओर जरा नीचे होनेसे।एक कन्या एक पुत्र होता है । (शा० क०)

३. दोनों ओर बराबरके उभारसे यदि अधिक उभार हो, तो दोनों पुत्र, यदि उभार नीचा हो, तो दो कन्याएँ होती हैं । (शा० क०)

४ दोसे अधिक सन्तान होनेवालीके लक्षण ।

१ जो लक्षण दो बच्चे होनेवालीके होते हैं वेही कई बच्चे होनेवालीके भी होते हैं । (शा० क०)

इस प्रकार गर्भके बालककी परीक्षा हो सकती है ।

(४४) मूढ़गर्भ ।

गर्भकी उत्पत्तिका स्थान गर्भाशय है । यह एक ऐसी पवित्र भूमि है कि जहाँसे बच्चा नौ मास निवास करके बाहर होता है । गर्भ दो प्रकारका होता है। सच्चा और झूठा ।सच्चा गर्भ वह है कि जिससे बच्चा उत्पन्न होता है । झूठा गर्भ वह है कि जिसमें बच्चा नहीं रहता, केवल मांसपिड होता है। ऐसे गर्भको (False Pregnancy) कहते हैं ।

जब किसीको झूठा गर्भ होता है, तो स्त्रियाँ उसे सच्चा गर्भ समझ लेती हैं । ऐसा इस कारण होता है । कि जितने लक्षण सच्चे गर्भमें होते हैं वे ही झूठे गर्भमें भी होते हैं । जैसे रजो-धर्म-का बन्द हो जाना, जी मचलाना, कै होना, भोजनमें अरुचि,

आलस्य और पेटका बढ़ना इत्यादि । ऐसा गर्भ कैसे उत्पन्न होता है ? इस विषयमें वैद्यकका मत है कि—ऋतुस्नान करके स्त्री यदि स्वप्नमें पुरुषसे प्रसंग करे, तो वायु रजको लेकर गर्भाशयमें गर्भ सरीखा पिंड बना देती है । ऐसा गर्भ हर महीने बढ़ता है और सारे लक्षण सच्चे गर्भकेसे प्रतीत होते हैं और पिताके गुणोंसे रहित मांस पिंड सरीखा उत्पन्न होता है । किसी किसी स्त्रीके इस प्रकार होता है कि जब दो स्त्रियां आपसमें संयोगकी चाहसे मैथुन करें और इनका वीर्य्यपात हो, तो एकका वीर्य्य और दूसरीका रज मिलकर गर्भाशयमें यदि पहुँच जावे, तो बिना हड्डियोंका लोथड़ासा, पिताके गुणोंसे वर्जित, गर्भ बन जाता है ।

(सु० श० अ० २ श्लो० ५१ से ५३)

ऐसे गर्भमें माताके रजसे उत्पन्न होनेवाले गुण होते हैं, परन्तु पिताके गुण नहीं होते । कारण यह है कि ऐसा गर्भ केवल माताके रजसे ही उत्पन्न होता है । पिताके वीर्य्यके अंशसे बच्चेमें बाल, रोएँ, हड्डी, नाखून, दाँत, बारीक रगें, नसें, नाड़ी, और वीर्य्य इत्यादि स्थिर पदार्थ बनते हैं । अतएव पिताका वीर्य्य साम्मिलित न होनेसे ये बातें नहीं होतीं, केवल लोथड़ासा रहता है ।

ऐसा गर्भ विशेष रीतिसे युवा विधवाओं, कुमारियों तथा ऐसी स्त्रियोंको कि जिनका संबन्ध पतिसे नहीं हुआ है, या बहुत दिनोंसे छुट गया है या जो अत्यन्त कामातुर हैं, उन्हींको रहता है । इसलिये सब गर्भके चिह्न मालूम होने लगें, तो यह पहचान कर लेनी चाहिये कि गर्भ सच्चा है या नहीं । स्त्रीके शारीरिक लक्षणोंसे इसकी पहचान नहीं हो सकती, क्योंकि मूढ़गर्भमें सारे लक्षण सच्चे गर्भकेसे होती हैं । सबसे बड़ी

पहचान यह है कि बालकके हृदयकी धड़कन घड़ीके समान टिक-टिकका शब्द बालकके हृदयपेशियोंके संकोचनसे होता है। इसके सुनाई पड़नेसे बालकका गर्भाशयमें होना निश्चय होता है। यह शब्द माताकी बाईं कोखके बीचमें सुन पड़ता है इसकी चाल प्रायः एक मिनटमें १६० बारतक होती है। कन्याके गर्भमें अधिक और पुत्रमें कम होती है। जब ऐसा न हो, तो मूढगर्भ समझना चाहिये। इस प्रकार परीक्षा करके सच्चे और मूढगर्भका निश्चय करना कर्तव्य है। इसके अतिरिक्त और कई प्रकारसे परीक्षा हो सकती है।

(४५) गर्भ रह जानेपर कबतक संयोग करना चाहिये ?

यह एक बहुत बड़ा प्रश्न है। लोग इसपर बहुत कम ध्यान देते हैं। खास कारण इसका यह है कि गर्भाधान हो जानेपर लोगोंको मालूम ही नहीं होता कि गर्भ रह गया है या नहीं। इसके अलावा स्वार्थवश विषय-वासनामें फँसकर लोग कुछ भी विचार नहीं करते। इस विषयमें अनेक मत देखे जाते हैं।

१. धर्मशास्त्रका मत।

१ गर्भवतीके साथ दो मासतक भोग करना चाहिये।

(ब्रा० ध०)

२ गर्भवतीके साथ छ मासतक मनुष्य विषय कर सकता है। (अत्रिस्मृति० १६२

२. वैद्यकका मत।

१. गर्भवतीके साथ दो मासतक संयोग करनेमें कोई हर्ज नहीं होता, यदि स्त्रीको कुछ रोग न हो। (ग० क०)

इस विषयमें दो मत उपस्थित हैं। एक तो यह कि दो मास तक गर्भवतीसे संयोग करना चाहिये, दूसरा यह कि छ मासतक। इसमें सबसे बड़ी बात तो यह देखना है कि छ मासतक संयोग करनेमे कितनी हानि है। यह बात प्रसिद्ध है और वास्तवमे ठीक है कि संयोग करनेसे स्त्रीकी ताकत कम होती है। इसके अतिरिक्त गर्भावस्था में स्त्री मैथुनप्रिय होगी तो सन्तानपर माताके आचरणका दोष पड़ेगा। वैद्यकका मत है कि गर्भकी दशामे यदि स्त्री पुरुषसे संयोग करे और यदि पुत्र पैदा हो तो बदचलन और यदि कन्या हो, तो परपुरुषके साथ गमन करनेवाली होती है। (शा० क०)

प्रायः ऐसा भी होता है कि गर्भ रह गया है और बार बार संयोग हो रहा है। ऐसी दशामें गर्भाशयमें एक सप्ताह तकका मिला हुआ रज-वीर्य्य अनेक उपद्रवोंसे बाहर निकल आता है। गर्भस्राव हो जानेका भी भय रहता है और खासकर आजकलकी स्त्रियोंमें तो निर्बलताके कारण ऐसा होना और भी सम्भव है।

यहांपर हमारे पाठक यह प्रश्न कर सकते हैं कि धर्मशास्त्र-की आज्ञा छ मासतक संयोग करनेकी है, परन्तु यहां यह बात विचार करने योग्य है कि धर्मशास्त्र धर्मके विषयको प्रतिपादन करता है। धर्मशास्त्रमें शारीरक अर्थात् शरीरकी व्यवस्था नहीं कही गयी है। धर्मशास्त्रका मत है कि प्रातः काल सूर्य्य उदय होनेके पहले स्नान करना चाहिये, परन्तु एक ऐसा व्यक्ति कि जो हमेशा रोगी रहता हो कैसे कर सकता है। इस विषयमें वैद्यकका मत है कि रोगीको प्रातः काल स्नान न करना चाहिये। इन प्रमाणोंसे स्पष्ट है कि धर्म-शास्त्रने धर्म-प्रकरण लेकर और वैद्यकने शारीरक लेकर लिखा

है। इसलिये शरीरके ही अनुसार धर्म होना चाहिये। इस बातके माननेमें कि गर्भाधान होनेके छ मास बादतक संयोग किया जाय, अनेक बाधाएँ पड़ती हैं। स्त्री और बच्चेका निर्बल हो जाना, गर्भस्राव आदि कारणोंसे छ मास तक गर्भवतीसे संयोग करनेका नियम अनुचित है। इसलिये वैद्यक मतके अनुसार दो मासतक यदि इच्छा हो, तो गर्भवतीसे संयोग करना चाहिये।

जो लोग इससे अधिक दिनोंतक विषय-वासनामें फँसकर संयोग करते हैं उनसे स्त्री और गर्भके बालकको अनेक प्रकारकी हानि उठानी पडती है। यहांतक कि गर्भवती और बालक दोनोंकी जान जाने तककी नौबत आ पहुँचती है।

(४६) गर्भवतीके कर्तव्य।

आज कल स्त्रियोंकी दशा शोचनीय हो रही है। गर्भवती होनेपर इनका ध्यान अपने कर्तव्योंकी ओर ज़रा भी नहीं जाता। वे नहीं समझतीं कि गर्भ धारण करनेपर उनपर कितनी जिम्मेदारी आ जाती है। गर्भवतीको हमेशा अपना स्वास्थ्य उत्तम रखनेका यत्न करना चाहिये। प्रायः देखा जाता है कि गर्भवती अपने खानेपीनेपर बहुत कम ध्यान रखती हैं। ऐसी दशामें जहां तक हो भोजन मधुर और जल्दी पचनेवाला होना चाहिये। पहलेके दो महीनोंमें भूख कम लगती है, मिट्टी इत्यादि खानेकी रुचि तो अवश्य होती है। यदि इन दिनों थोडा भोजन किया जाय तो कोई हानि नहीं है। दो महीनेके पीछे भूख स्वय बढती है। इसलिये दिनरातमें कई बार थोडा थोड़ा भोजन करना चाहिये। चौथा महीना लगनेके साथ ही कुछ अधिक भोजनकी ज़रूरत पड़ती है। प्रकृति भी इन दिनोंमें

के और जी मचलाना बन्द करके भूख बढ़ाती है। ऐसे समयमें बच्चेका हृदय तैयार हो जाता है, इसलिये माताको अपने हृदय और बच्चे दोनोंके हृदयका पालन करना पड़ता है। यही समय बालकके शरीर बढ़नेका भी होता है। अतएव माता जितना अच्छा और अधिक भोजन करती है, उतना ही उत्तम और अधिक रस बनकर बच्चेकी बाढ़में सहायता पहुँचता है और उसका पोषण करता है।

गरिष्ठ, कड़ा, खट्टा, कसैला और फीका भोजन न होना चाहिये। चरबी बढ़ानेवाले पदार्थ जैसे घी और मिठाई इत्यादि अधिक न खाना चाहिये। चरबी बढ़नेसे शरीर मोटा पड़ जाता है। इसमें सबसे बड़ी हानि यह होती है कि पैदा होते समयमें बच्चा फँस जाता है। प्रायः इसी कारण अनेक बार बच्चोंकी मृत्यु भी देखी गई है।

गर्भवतीको यह सलाह कभी न देनी चाहिये कि वह मांस खावे या शराब पीवे। इससे दुष्ट प्रकृतिकी सन्तान उत्पन्न होती है। प्रत्येक मातापिताको अमूल्य रत्न उत्पन्न करनेकी लालसा रखनी चाहिये।

आज कलके पहनावेकी दशा भी विचार करने योग्य है। स्त्रियाँ सभ्य ललनाएँ बननेके लिये चुस्त और बदनसे जकड़ा हुआ वस्त्र पहनती हैं। यदि गर्भ-समयको छोड़कर और समयोंमें पहना जाय, तो इतना हर्ज नहीं है, परन्तु गर्भावस्थामें इससे बड़ी हानि होती है। पेट भिचने और कोखोंके दबनेसे बड़ा कष्ट होता है, बच्चेकी बाढ़ रुक जाती है तथा स्थानसे टल जानेका भय रहता है।

जिन स्त्रियोंका पेट बढ़ा होता है उनका गर्भ नीचेको लटक आता है और बच्चेको महान् कष्ट होता है। इसलिये एक

चौता चौड़ा उदर पट्टा, जो मुलायम कपड़ेका हो, बाँधना
चाहिये ।

स्त्रियाँ गर्भावस्थामें अपने विचारोंको ठीक नहीं रखतीं। अनेक
बुरे विचारोंसे पाला पड़ता है । याद रहे कि जैसे विचार गर्भा-
वस्थामें माताके होते हैं उसीके अनुसार सन्तान उत्पन्न होती है।

रहन-सहनके लिये तो पूछना ही क्या । ऐसे समयमें
निश्चय करके असावधानी की जाती है । नीचे ऊपर चढ़ना
उतरना, दौड़ना कूदना, परिश्रम और नाचना. यह सब वर्जित
है । इससे गर्भपात होनेका भय रहता है । शोक, चिन्ता, भय
और क्रोध इनसे बच्चेके मस्तक और स्नायुओंपर धक्का पहुँचता
है और दिमाग़ निर्बल पड़ जाता है । यह भी न होना चाहिये
कि गर्भवती दिन रात पड़ी ही रहे, इससे अनेक प्रकारके
अच्छे बुरे विचार उत्पन्न होते हैं. ग्लानि रहती है और पाचन-
शक्ति बिगड़ जाती है । इसलिये कुछ थोड़ा चलना फिरना आव-
श्यक है । गर्भवतीको रात्रिमें दस घंटेसे कम न सोना चाहिये ।
प्राय. स्त्रियाँ चित्त होकर कम सोती हैं । देरतक करवट लेकर
सोना हानि पहुँचाता है । इससे बच्चा एक ओर झुक जाता
है । थोड़ी देर करवटसे सोना हानि नहीं करता । बाकी समयमें
आरामके साथ चित्त होकर सोना चाहिये । सोनेका कमरा
साफ़ और ओढ़ने-बिछौने मुलायम होने चाहिये । गर्भवतीको
रोगीकी सेवामें न रहना चाहिये; क्योंकि रोगी निरोग मनुष्य
की प्राणशक्ति खींचता है और अपनी रोगशक्तिको दूसरेके
शरीरमें प्रवेश करता है । इसलिये गर्भवती और बच्चा दोनोंके
रोगी हो जानेका भय रहता है । शरीरमें मस्तक एक काम
करनेवाली चीज़ है, परन्तु स्त्रियां इसकी कुछ भी परवाह नहीं
करतीं । मस्तक और दूसरी इन्द्रियोंका बहुत बड़ा संबन्ध है।

यही बुद्धिका स्थान है। यही स्मरण-शक्तिका निवास है। यही प्रेमका गहवर और यही ज्ञानका भण्डार है। उन बच्चोंका दिमाग सुस्त और निकम्मा होता है कि जिनकी माताएँ गर्भावस्थामें अपने दिमागकी परवाह नहीं रखतीं। वैद्यकका मत है कि गर्भवतीके जिस अंगको दुःख पहुँचता है गर्भके बच्चेका वही अंग बिगड जाता है। (श०क०)

गर्भवती स्त्रियां बालोंकी रस्सिया बनाकर सरको शत्रुकी तरह बांधती हैं जिससे बालोंकी जडे खिच जाती हैं। इतना ही नहीं, सर साफ़ करने तककी परवाह भी नही करतीं। मैल जम कर बालोंके छिद्रोंको रोक लेता है जिससे वायुका आना जाना रुक जाता है। खासकर गर्भके समयमें चौथे दिन सर साफ़ करना चाहिये।

वैद्यकका मत है कि गर्भवतीको ऋतुस्नानके दिनसे अति प्रसन्न-चित्त रहना, शृंगार करना और सफेद वस्त्र पहनना चाहिये। शान्तिपाठ तथा देवता, ब्राह्मणऔर गुरुओंकी सेवामें तत्पर रहना, मैले, विकारवाले, हीनांग का दर्शन और स्पर्श न करना, बदबूदार पदार्थोंसे बचना तथा चित्तको बिगाड़नेवाली कथाओंपर ध्यान न देना, सूखा, बासी, बुसा और सड़ा हुआ पदार्थ न खाना, बाहर न फिरना, सूने घरों और स्मशानोंमें न जाना, वृक्षके नीचे न रहना क्रोध और भय से बचना, क्रिया संकर न करना, बोझ न उठाना, चिल्लाकर न बोलना, गर्भको हानि पहुँचानेवाले आहार-विहारोंसे बचते रहना, अधिक तेल और उबटन न लगाना, परिश्रम न करना, अधिक न सोना, बैठे रहना, बिना बिछौनेके पृथ्वीपर बैठना या सोना न चाहिये।

मीठा पतला हृदयको आनन्द देनेवाला चिकना और

थोड़ा सा भी बहुत होता है। अतएव ऐसे समयमें तुरन्त उपचार करना आवश्यक है। ऐसी अवस्थामें अनेक प्रकारके रोग होते हैं।

१. जी मचलाना। यह स्वभावसे होता है। यह कोई ऐसा विशेष रोग नहीं है। आप ही आप अच्छा भी हो जाता है। इस का एक कारण पित्त भी है। जब पित्तके विकारसे जी मचलाता है तो इसे एक रोग समझना चाहिये। इसके अनेक कारण हैं।

१. पित्त बढानेवाले पदार्थोंका खाना।
२. पित्तकी अधिकता होना। (जन्मसे ही)
३. जब कि गर्भ माता या पिताके ऐसे दूषित रज-वीर्य्यसे स्थापित हो कि जो पित्तसे दूषित हुआ हो।

ऐसी दशामें अधिक दिनोंतक जी मचलाता है और कभी कभी चक्करसा भी आ जाता है। यों तो कुछ दिनोंतक हर एक स्त्रीका जी मचलाता ही है।

२ वमन (कै) का होना। यों तो कै उस समय समयतक होती है जबतक कि बच्चा पेटमें डोलता नहीं है, परन्तु ऐसे समयमें कै नित्य नहीं होती, कभी कभी हो जाती है। उबकाई अवश्य प्रायः नित्य आ जाया करती है। इसके अनेक कारण हैं।

१. गर्भवतीकी इन्द्रियों और अवयवोंके गर्भावस्थामें अधिक काम करनेसे।
२. बालकके बोझका दबाव अवयवों, धमनी और स्नायु-तन्तुओंपर पड़नेसे।

ऐसी दशामें मामूली कै होती है, परन्तु जब कै इससे आगे बढ़ती है तब उसको रोग समझना चाहिये। दूसरे

महीनेसे बच्चेमें डोलनेकी शक्ति आनेतक कै होनेका समय विद्वानोंने माना है। यदि इससे अधिक दिनतक कै होती रहे, तो उसे कुपच और निर्बलता का कारण समझना चाहिये। ऐसी दशामें अनेक उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं।

(१) पेटमें ऐंठन। (२) हाथ-पाँवमें जलन और भड़कन।
(३) रीढ़में दर्द। (४) जाँघोंमें दर्द।
(५) मूर्च्छा आ जाना। (६) सिरमें दर्द।
(७) नींद न आना। (८) बेचैनी।
(९) कब्ज रहना। (१०) पक्वाशय (मेदे) में दर्द।
(११) आमाशयमें दर्द। (१२) हृदयका कड़कना।
(१३) ऊपरके श्वाँसका चलना। (१४) पैरोंमें झनझनाहट और सूजन।
(१५) प्यास लगना। (१६) गलेका सूख जाना।
(१७) गलेमें छोटे छोटे दाने पड़ जाना। (१८) जीभमें दाने पड जाना।
(१९) कैमें रुधिरका आना। (२०) ज्वरका होना।

ऐसी दशामें पित्त बढ जाता है। क़ैमें पित्तका लसदार खट्टा पानी ही विशेष आता है। थोड़े दिनोंतक कै होकर बन्द हो जाना अच्छा है। बढ जानेपर दशा बिगड जाती है। परिणाम यह होता है कि या तो गर्भ गिर जाता है या स्त्री ही मर जाती है। गर्भ गिर जानेपर ये उपद्रव शान्त हो जाते हैं। प्रायः देखा गया है कि किसी किसी स्त्रीके बच्चा पैदा होनेतक क़ै होती रहती है। कभी प्रातःकाल मचली प्रारम्भ होकर दोपहरको बन्द हो जाती है। कभी दोपहरसे प्रारम्भ होकर रात्रितक रहती है। इसी बीचमें एक दो बार या कई बार कै

हो जाती है। बढ़ती हुई दशा में कै बराबर हुआ करती है। कभी कभी बेहोशी भी आ जाया करती है। उस समय रोग कठिन पड़ जाता है जब कि क़ै बार बार होती है और खून आने लगता है। ऐसी दशा कुछ काल तक रहनेसे मृत्यु अवश्य हो जाती है।

३. फेफड़ेके रोगोंका होना। ऐसे समयमें यह रोग खास तौर से होता है। कारण इसका यह है कि ज्यों ज्यो गर्भ बढ़ता है त्यों त्यो फेफड़ेपर दबाव पहुँचता है। इससे अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

१. स्वाँसका कष्टसे निकलना। इस रोगमें श्वांस उखड़ जाती है और दम घुटने लगता है।

२. मामूली खाँसी। प्रायः सूखी खाँसी आती है।

३. कूकरखांसी। यह खांसी खास तरहकी होती। इसमें कुत्तोंकी तरह खांसी आती है, इसीलिये इसको कूकर खांसी कहते हैं। यह तुरन्त अच्छी नहीं होती, इसमें धीरे धीरे आराम होता है।

४. अतिसार। यह रोग कुपचसे होता है। जब अन्न नहीं पचता तब अग्नि मन्द पड़ जाती है। इस कारण दस्त आने लगते हैं। कभी यह रोग इतना बढ़ता है, कि गर्भ गिर जाता है।

५. हिचकी। यों तो दस पांच बार हिचकी आ जाना दूसरी बात है, परन्तु यह हिचकी एक खास तरहकी होती है। ऐसी हिचकी सोनेके समयको छोड़कर दिनरात आया करती है। इसको वैद्य लोग हिक्का कहते हैं। इसका कारण कुपच है। इससे गर्भको बहुत बड़ा धक्का पहुँ-

चता है। वार बार धक्का लगनेसे गर्भाशय ढीला पड़ जाता है और गर्भपात हो जानेका भय रहता है।

६. कब्ज। इसको लोग मामूली रोग समझते हैं, परन्तु यह एक बडा भयंकर रोग है। आंतोंपर दवाव पडनेसे यह हो जाता है। इससे गर्भको बहुत बडा हानि पहुँचती है क्योंकि शौच जाते समय कांखनेसे गर्भपर दवाव पड़ता, जिसका सहन करना पूरे दिनोंकी गर्भवतीको कठिन होता है। जब ऐसा हो, तो जल्दी पचनेवाला हलका भोजन करना चाहिये।

७ रक्तका कम बनना। यह रोग उन स्त्रियोंको विशेष होता है कि जो अत्यन्त दुबली और सूखी होती हैं जिनके शरीरमें रक्त पहले हीसे कम होता है और गर्भ स्थित होनेपर कम बनता भी है। कारण यह है कि भोजन किये हुए पदार्थोंसे रस बनता है और रससे रक्त। जबकि भोजन ही कम किया जाता है और बने हुए रससे बच्चेका भी पोषण होता है, तो यदि ऐसे समयमें कुपथ्य या अतिसार ऐसी बीमारी हो गई तो रक्त कम बनने लगता है और गर्भवती अत्यन्त निर्बल हो जाती है। अतएव बच्चा उत्पन्न होते समयमें कठिनाई पडती है।

८ मूत्ररोग। यह उन स्त्रियोंको होता है कि जिनका गर्भाशय टल जाता है। इसके कई कारण हैं।

१. बार बार मूत्रका आना—ऐसा दो तरहसे होता है। यदि यह रोग गर्भके प्रारम्भके दिनोंमे हो, तो मूत्राशयकी गरदनकी रगड़से और जब अन्तके दिनोंमें हो, तो मसानेपर गर्भाशयके दवाव पड़नेसे होता है। जब ऐसा होता है तो गर्भाशयमें मूत्र रहने ही नहीं पाता।

२. मूत्रका बन्द हो जाना—ऐसा भी गर्भके दबावके कारण होता है। यदि ऐसा कुछ दिनोंतक रहे, तो मूत्राशयमें सूजन आ जाती है।

९. बच्चेकी थैलीमें अधिक जल भर जाना। गर्भाशयमें एक थैली होती है जिसमें जल भरा रहता है। बच्चा उसी जलमें तैरा करता है। यह रोग थैलीमें सूजन हो जानेसे होता है इसमें खेड़ी बड़ी और सूजी हुई होती है। यह पांचवें या छठे महीनेमें होता है और गर्भ गिर जाता है।

१०. रक्तकी नाड़ियोंका फूल जाना। यह रोग गर्भाशयपर दबाव पड़नेसे होता है। पैरमें काले रूधिरकी नसें फूल जाती हैं। खड़े होनेमें पैरोंका काँपना, सनसनाहट और तलुवोंमें जलन होना इसका लक्षण है।

११. गर्भाशयके रोग। ये अनेक प्रकारसे होते हैं।

१. गर्भाशयका आगे-पीछे-दहिने और बाएँ टल जाना या आगे निकल आना।

२. गर्भाशयका फट जाना और उलट जाना।

इन रोगोंकी व्याख्या 'गर्भाशयके रोग' प्रकरणमे लिखी गई है, अतएव यहाँ आवश्यकता नही है।

१२. हृदयकी धड़कन। यह रोग उन स्त्रियोंको होता है कि जिनका हृदय निर्बल है। इसका खास कारण हृदयपर गर्भका बोझ पड़ना है। इससे हृदयमें धड़कन और दर्द होता है।

१३. दस्तोंका होना। यह रोग उन स्त्रियोंको होता है कि जिनका हृदय निर्बल है, जिनको रंजकी बात सुननेमें दिलकी धड़-कन और बेहोशी तुरन्त हो जाती है। प्रायः गर्भके पाँचवेंसे आठवें महीनेतक ऐसा होता है और इसका कारण मला-शयपर दबाव पहुँचना है। ऐसा रोग दो रीतिसे होता है।

एक तो वह कि दो चार दस्त बराबर चार छः दिन आजावें; और दूसरा वह कि एक ही दिनमें दस-बीस-पचास दस्त हो जावें। इसमें बहुत सोच समझकर चिकित्सा करनी चाहिये।

गर्भावस्थामें कोई भी रोग क्यों न हो अत्यन्त कष्ट होता है। पेटके रोगोंमें बहुत सावधानीसे औषधि करनी चाहियें; क्योंकि ज़रा भी प्रतिकूल होनेसे गर्भस्राव या गर्भपात हो जानेका भय रहता है।

(४८) गर्भस्राव और गर्भ-पात ।

१. गर्भस्रावके कारण ।

समय पूरा न होने के अन्दर ही बालकका पैदा होना गर्भपात कहलाता है। इसमें दो भेद हैं। जब चार मास तकका गर्भ गिर जावे, तो उसको गर्भस्राव कहते हैं और जब सात मास तकका गिरे तो उसको गर्भ-पात कहते हैं ।

जिस बालकका जन्म आठवें मासमें होता है तो उसे अपूर्ण जन्म होना कहते हैं। बच्चा पैदा होनेकी अपेक्षा गर्भस्राव और गर्भपातमें विशेष हानि और भय समझना चाहिये।

बालकका जन्म प्रकृति के अनुसार स्वाभाविक है, परन्तु बीच में ही गर्भ गिर पड़ना प्रकृति के नियमों के विरुद्ध है। इस कारण गर्भस्राव या गर्भपात होनेमें स्त्रीको बड़ा कष्ट होता है। बच्चा पैदा होने की अपेक्षा गर्भस्राव और गर्भपात होनेमें रक्त इतना अधिक निकलता है कि जिससे बाज़ी बाज़ी निर्बल स्त्रियाँ बेहोश हो जाती हैं। सबसे अधिक कष्ट होनेका कारण यह है कि पूरे दिनोंमें गर्भाशयसे गर्भका संबन्ध प्रकृति

के अनुसार सरलतापूर्वक कुछ थोड़े कष्टके साथ छूट जाता है, परन्तु समय पूरा न होनेके पहले बीचमें गर्भाशयसे गर्भका अधूरा संबन्ध अत्यन्त कठिनाईसे छूटता है। गर्भस्राव और गर्भपातके अनेक कारण होते।

१. गर्भस्रावके कारण।

१. अतिमैथुन और पेटपर चोट लगनेसे।
२. एकाएक किसी प्रकारका शोक और सदमा पहुँचनेसे।
३. शूल, दस्त और पेटमें ऐंठन होनेसे।
४. किसी प्रकार गर्भाशयका मुख खुल जानेसे।
५. गर्भके ठीक पोषण न हो सकनेसे।
६. अनेक प्रकारकी औषधियोंके खानेसे।

२. गर्भपातके कारण।

१. गर्भका ठीक पोषण न होना।
२. माताका क्षय इत्यादि कठिन रोगोंमे ग्रसित होना।
३. स्त्रीको गरमी सूजाक इत्यादि छूतदार रोगोंके होनेसे।
४. शूल दस्त और विशूचिका इत्यादिके होनेसे।
५. ऐसी गहरी चोटसे कि जिससे गर्भाशयको एकदम धक्का पहुँचे।
६. जिगरके अनेक रोगोंसे और कमरको कसकर बाँधनेसे।
७. गर्भाशयके टल जाने या फट जानेसे।
८. अतिमैथुन और अत्यन्त परिश्रमसे।
९. ऐसा व्यवहार कि जिससे पेटको हाल पहुँचे।
१०. बारंबार नीचे ऊपर चढने और उतरनेसे।

जहाँतक देखा गया है देहातकी रहनेवाली स्त्रियोंका गर्भ स्राव या गर्भपात कम होता है। शहरकी रहनेवाली नाजुक-

दिमाग, आलसी और दिन रात आराम करनेवाली स्त्रियोंको विशेष होता है। गर्भस्राव या गर्भपातमें सबसे पहले रक्त निकलता है। जब कि दो तीन मासका गर्भ होता है तो स्त्रियों को रजस्वला होनेका धोखा हो जाता है। ऐसी दशामें जब पीड़ा हो तो तुरन्त गर्भस्राव और गर्भपातका प्रकोप समझना चाहिये। रक्तस्राव होनेके साथ ही गर्भस्राव या गर्भपात नहीं होता। प्राय. दो दो तीन तीन दिन तक जारी रहकर हानि होती है। किसी किसी स्त्रीके रक्तस्राव होकर रह जाता है, गर्भस्राव या गर्भपात नही होता। जब अत्यन्त पीडा हो तो गर्भस्राव या गर्भपात का समय समझना चाहिये।

कभी कभी ऐसे समयमें दशा बडी भयंकर हो जाती है और स्त्रीको सदाके लिये संसार छोड़ देना पडता है।

(५०) मातापिताके किस किस अंशसे क्या क्या उत्पन्न होता है?

यह एक बडा सवाल है कि शरीरमें क्या क्या माता पिताके किस किस अंश से उत्पन्न होता है? यों तो शरीरकी उत्पत्ति मातापिताके अंशसे ही होती है, परन्तु वैद्योंने गर्भको मातृज, पितृज, आत्मज, स्यात्मज और रसज माना है। इनके ही अंश से सब कुछ बनकर शरीर तैयार होता है।

१. वैद्यकका मत।

१. माताके अंशसे क्या क्या बनता है?

१. गर्भ मातृज होता है, क्योंकि बिना माताके गर्भ रह ही नहीं सकता। शरीरमें मातासे उत्पन्नहोनेवाली वस्तुएँ ये हैं—चमडा, रक्त, मांस, मेदा, नाभि, हृदय मूत्राशय क्लोम (प्यास लगनेकी जगह) तिल्ली, पिलही,

वृक्क, बस्ती आमाशय, पुरीषाधान, पक्काशय, ऊपरका गुदस्थान, अधोगुद, छोटी अँतड़ी, मेद और मेदवाही।
(च० शा० अ० ३ श्लो० ९)

शुश्रुतने भी कहा है कि 'कोमल अवयव माताके अंशसे उत्पन्न होते हैं।' (सु० शा० अ० ३ श्लो० ४६)

२ पिताके अंशसे क्या क्या बनता है ?

१. गर्भ पितृज होता है, क्योंकि बिना पिताके जन्म नहीं हो सकता। शरीरमें पितासे उत्पन्न होने वाली वस्तुएँ ये हैं—बाल, दाढ़ी, मूँछ, नाखून, रोएँ, दांत, हड्डी, नस बड़ी नस, धमनी और वीर्य्य। (च० शा० अ० श्लो० १०)

सुश्रुतने भी ऐसा ही कहा है कि 'स्थिर पदार्थ पिताके अंशसे उत्पन्न होते हैं।' (सु० शा० अ० २ श्लो० ४५)

३ आत्माके अंशसे क्या क्या बनता है ?

१. गर्भ आत्मज होता है। शरीर बिना जीवके नहीं रह सकता और न जीव बिना शरीरके उत्पन्न होता है। आत्मासे आत्मा उत्पन्न होती है। इसलिये गर्भ को आत्मज माना गया है। शरीरमें आत्मासे उत्पन्न होने-वाली वस्तुएँ ये हैं—आयु, आत्मज्ञान मन, इन्द्रिय, उच्छ्वास, निःस्वास, प्रेरणा, धारणा, आकृति भेद, स्व-रवर्ण भेद, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, चेतना, धृति, बुद्धि, स्मृति, अहङ्कार और यत्न। (च० शा० अ० ३ श्लो० १५)

सुश्रुतका भी इसीसे मिलता हुआ कथन है।
(सु० शा० अ० ३ श्लो० ३७)

४. सात्म्यके अंशसे क्या क्या बनता है ?

१. गर्भ सात्म्यज होता है। यदि स्त्री पुरुष असात्म्यसेवी न होते तो उनको वन्ध्यत्व अथवा गर्भमें अनिष्ट भाव

उत्पन्न न होता। जबतक वात पित्त और कफ़ विग-
कर रजवीर्य्य और गर्भाशय को न बिगाड़ें, तब तक
ही असात्म्य सेवन भी गर्भ उत्पन्न कर सकता है।
सात्म्यसेवी स्त्री पुरुषका रजवीर्य्य और गर्भाशय शुद्ध
होनेपर ऋतु कालमें मिलाप होता है, परन्तु जब तक
जीवात्मा प्रवेश न करे तबतक गर्भ नहीं रह सकता।
यदि यह कहा जाय कि सात्म्य से ही गर्भ उत्पन्न
होता है, सो नहीं, परन्तु बात यह है कि गर्भ उत्पन्न
होनेमें सात्म्य भी एक कारण है। इससे ये वस्तुएं
शरीरमें उत्पन्न होती हैं-आरोग्य, अनालस्यता, निर्लो-
भता, इन्द्रियोंकी प्रसन्नता, स्वरसम्पत्, बीजसम्पत्
और हर्षकी अधिकता। ये सब सात्म्यसे उत्पन्न होती
हैं।

(च० शा० अ० ३ श्लो० १७)

२. वीर्य्य, आरोग्यता, बल, वर्ण और मेधा भी सात्म्य से
उत्पन्न होते हैं।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० ४७)

५ रसके अंशसे क्या क्या बनता है ?

१. गर्भ रसज होता है। गर्भ उत्पन्न करना तो दूर रहा
किन्तु आहार रसके बिना माताकी भी जीवन-यात्रा
नहीं चल सकती। अच्छी तरह रस सेवन करनेसे
गर्भ उत्पन्न हो सकता है। परंतु केवल रस-सेवनसे ही
गर्भ उत्पन्न नहीं होता। बात यह है कि गर्भ उत्पन्न
होनेमें रस भी एक कारण है। (च० शा० अ० ३ श्लो० १९)

२. शरीरका मोटापन, बल, वर्ण स्थिति और क्षीणता ये
रससे उत्पन्न होते हैं।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० ४७)

यहांपर एक यह शङ्का होती है कि सुश्रुत महाराजने
वीर्य्यको पितृज और सात्म्यज तथा बल और वर्णको सात्म्यज

और रसज क्यों कहा ? इसका तात्पर्य यह है कि सुश्रुतके मतानुसार वीर्य्य पिता और सात्म्य दोनोंसे तथा बल और वर्ण सात्म्य और रससे उत्पन्न होता है। इस प्रकार माता-पिताके अंशोंसे शरीरका सङ्गठन होता है।

(५) गर्भमें शरीर कैसे बनता है ?

इस बातको सब मानते हैं कि गर्भ रज और वीर्य्यसे ही होता है। इनके मिले हुए पदार्थमें शरीर बननेका पूरा सामान रहता है; परन्तु सूक्ष्म होनेके कारण नहीं दिखाई पड़ता। ऐसा मिला हुआ पदार्थ जब गर्भाशयमें पहुँचता है उसी समयसे गर्भका वृद्धि-क्रम प्रारंभ हो जाता है और उत्पन्न होनेतक उसमें अनेक परिवर्तन होते रहते हैं।

१. गर्भका पहिला दिन।

१. पहली रात्रिमें रज और वीर्य्य मिलकर एक हो जाता है और आकार १/३०० इञ्चसे कुछ अधिक होता है।
२. इस समय गर्भ एक एक दागके समान बीचमें कुछ उभरा सा होता। (श० क०)

२. गर्भका पाँचवा दिन।

१. इस समय गर्भ एक बुद्बुद या पानीके बबूलेकी भाँति हो जाता है। (श० क०)
२. ऐसे समयमें गर्भको खूनके एक बारीक दागके बराबर होना भी लोग मानते हैं। (जापानी मत)

३. गर्भका दूसरा सप्ताह।

१. इस समयमे गर्भका वजन एक ग्रेन और आकार १/६० इञ्च होता है और साफ दिखलाई पड़ता है। (जपानी मत)

२ सात दिनके बाद गर्भ कफकीसी गाँठके समान (कलल) हो जाता है।

(वा० शा० अ० १ श्लो० ३७)

३. दूसरे सप्ताहके अन्तमें आकर १/६ इञ्च और वजन १/४ रत्तीके बराबर लोग मानते हैं।

४. गर्भका तीसरा सप्ताह।

१ इस समयमें गर्भका वजन चार गेहूँके दानेके बराबर और आकार जूएँके सामान होता है।

१. इस समयमें सर तथा पैरका आकार बनने लगता है। लम्बाई १/४ इञ्चतक बढ जाती है। (To क०)

५. गर्भका चौथा सप्ताह।

२. ऐसे समयमें गर्भ एक बडी मक्खीके समान होता है और आकार एक कीडेके सदृस टेढ़ा, लम्बाई १/२ इञ्च, मस्तक कुछ उभरासा जान पडता है।

३. पहले महीनेमें गर्भ एक लोथड़ा सरीखा होता है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० १७)

६. गर्भका पाँचवाँ सप्ताह।

१ इस समयमें सर और पैरोंकी ओर कुछ उभार सा मालूम होने लगता है।

२. ऐसे समयमें गर्भ घन पिंड और अर्बुदके समान हो जाता है।

सुश्रुतने भी ऐसा ही कहा है। (च० शा० अ० ४ श्लो० ८)

७. गर्भका छठा सप्ताह।

१. इस समयमें शरीरसे सर बडा होता है। हाथ पैर ठूँठे-के समान होते है। आँख, कान, नाक और मुँहके स्थान

पर काले काले दाग मालूम होते हैं। लम्वाई एक इञ्च-तक हो जाती है।

८, गर्भका सातवाँ सप्ताह।

१. इस समयमें छातीकी हँसली, जबड़ा, पसली और हड्डी बनने लगती है। हृदय बढ़ जाता है। सर कुछ बड़ा हो जाता है। हाथ पैर कुछ कुछ निकलने लगते हैं। आंख, कान, मुँह और नाक दिखलाई पड़ते हैं। जिगर और प्लीहा बड़ा हो जाता है। लम्बाई प्रायः १$\frac{1}{8}$ इञ्च होती है।

९, गर्भका आठवाँ सप्ताह।

१. इस समयमे हाथ, पैर, पंजे, मुँह, नाक, कान इत्यादि दिखलाई देते हैं। आंखोंके डौल उभरे मालूम होते हैं। मुख कुछ बड़ासा जान पड़ता है। लम्वाई २ इञ्चतक और वजन दो तोले होता है। आकार मुर्गीके अण्डेके समान होता है और नाभिकमलको बनानेवाले अंकुर बडे होने लगते हैं।

१०, गर्भका नवाँ सप्ताह।

१. इस समय गर्भ जल्दीके साथ बढ़ता है। सर पुष्ट होने लगता है, आंखें बड़ी हो जाती है। पलकें दिखलाई पड़ती है। नाक, कान, गला साफ़ दिखलाई देते हैं और हृदय पूर्ण तैयार हो जाता है। लम्वाई २$\frac{1}{2}$ इञ्च और वजन तीन तोला होता है।

११, गर्भका दसवां सप्ताह।

१. इस समयमें भी गर्भ जल्दीके साथ बढ़ता है। सर गिल-गिला रहता है। गला और गुद्दी साफ दिखलाई पड़ती है। लम्वाई २$\frac{1}{2}$ इञ्च व वजन ४$\frac{1}{2}$ तोलेतक होता है।

१२. गर्भका ग्यारहवाँ सप्ताह।

१. इस समयमें आंखोंकी पलकें तैयार हो जाती हैं, परंतु चिपटी रहती हैं। नाकके छेद और होंठ बन जाते हैं, परंतु मुख बन्द रहता है। कलेजा तैयार हो जाता है। लम्बाई २ इञ्च, वजन ६ तोलेतक होता है।

१३. गर्भका बारहवाँ सप्ताह।

१. इस समयमें हृदयकी चाल सूक्ष्म रीतिसे होती है। हाथ पैर साफ़ साफ़ मालूम होते हैं। कन्या और पुत्रका निशान अच्छी तरह स्पष्ट हो जाता है। नलियोंमें रक्त बहना प्रारंभ हो जाता है। हाथ पैरकी अंगुलियां साफ़ दिखलाई पड़ती हैं। मस्तक कुछ ऊँचा और पिलपिला रहता है। पैरकी पिंडलियां तैयार होने लगनी हैं। कमर लचलची, सरके समान होती है। नाभिकमल पूरा बन जाता है। नाल ३½ इञ्चतक लम्बा होती है। (गर्भ का वजन) ६ तोले और लम्बाई ३ इञ्चतक होती है।

३. तीसरे महीनेमें दोनों हाथ, दोनों पांव और सर इन पांचोंकी पांच शाखासी निकलने लगती हैं और थोड़ा थोडा अंग प्रत्यंगका विभाग प्रगट होने लगता।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० १९)

३. सारी इन्द्रियां और सारे अवयव तीसरे मासमें एक ही साथ उत्पन्न हो जाते हैं। (च० शा० अ० ४ श्लो० ९)

वाग्भट्टने भी ऐसा ही कहा है।

१४. चौथा महीना।

१. इस समयमें मस्तक और कलेजेकी अपेक्षा अपेक्षा चीजें अधिक बढती हैं। नाभिकमल पूरा हो जाता है। रंग,

पट्ठे दिखलाई पडने लगते है । बच्चेका कुछ हिलना भी जान पड़ता है । मांस-रज्जु बराबर दिखलाई पड़ती हैं । चेहरा अधिक लम्बा हो जाता है। चमड़ेका रंग गुलाबी होता है। फेफड़ा बन जाता है, लम्बाई ८ इञ्च और वजन २० तोलातक होता है ।

२. सारे अंग प्रत्यंग जान पड़ते हैं । हृदय प्रगट हो जाता है । चैतन्य-धातु आ जाती है; क्योंकि हृदय चेतनाका स्थान है। इस कारण जीव इंद्रियोंके भोगकी रुचि करने लगता है । (सु० शा० अ० ३ श्लो० ११)

३. इस मासमें स्त्रीकी दौहृद संज्ञा होती है । इसी समय वांछित पदार्थ न मिलनेसे सन्तान अंगहीन हो जाती है। शा० क०)

४. इस मासमे गर्भ दृढ़ होता है और माताका शरीर भारी हो जाता है । (च० शा० अ० ४ श्लो० २४)

१५. पाँचवाँ महीना ।

१. इस मासमें शरीरकी अपेक्षा सर बड़ा होता है । बालककी फड़कन मालूम होती है । सर पर भूरे बाल उग आते हैं । चमड़ी चिकनी हो जाती है । रग और पट्ठे खूब अच्छे बन जाते हैं । बच्चा बार बार हिलता है । लम्बाई १० इञ्च और वजन ३० तोले तक होता है ।

२. पाँचवें मासमे मनमें अधिक चैतन्यता हो जाती है (सु० शा० अ० ३ श्लो० ३३)

३. इस मासमें गर्भका मांस और रुधिर पुष्ट होता है । इसलिये स्त्री दुबली हो जाती है ।(च० शा० अ० ४ श्लो० २५)

४. इस समयमें बुद्धिका विकाश होने लगता है । (वा० शा० अ० १ श्लो० ५७)

१६. छठा महीना।

१. ऊपरकी खाल वनकर तैयार हो जाती है। चमड़ेकी सुकडन चर्वी वननेके कारण कम हो जाती है। अंगुलियोंमें नाखून निकल आते हैं। चमडेका रंग लाल हो जाता है। लम्वाई १२ इञ्च और वजन १ सेरतक हो जाता है।

२. इस मासमें वालकका वल और वर्ण पुष्ट होता है। इसलिये स्त्रीके वल और वर्णकी हानि होती है।

(च० शा० अ० ४ श्लो० २६)

३. इस समयमें वुद्धिका विकाश होता है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० ३२)

४. इस कालमें स्नायु, शिरा, रोम, वर्ण, नख और त्वचा पुष्ट होती हैं। (वा० शा० अ० १ श्लो० ५७)

१७. सातवाँ महीना।

१. इस समय शरीरके सव भागवन चुकते हैं। वच्चा गर्भाशयमें उलट जाता है और निकलनेके रास्तेके सामने आ जाता है। पैर ऊपर और सर वोभके कारण नीचे हो जाता है। पैर माताकी छातीकी ओर रहते हैं। पलकें खुलने लगती हैं। शरीरमें चर्वीके वढ जाने सेआकार गोल हो जाता है। पुतली परदेसे वन्द मालूम होतीहैं। हर एक अवयव पूरा दिखलाई पड़ता है। लम्वाई १४ इञ्च और वजन डेढ सेरतक होता है।

२. सातवें महीनेमें सारे अंग प्रत्यंग स्फुट हो जाते हैं।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० ३३)

३. इस कालमें गर्भ पूर्ण भावोंसे युक्त होकर पुष्ट होता है।

वा० शा० अ० १ श्लो० ५८)

४. इस समयमें गर्भ खूब पुष्ट हो जाता है। इस कारण स्त्री सब आकारोंसे ग्लानियुक्ता होती है।

(च० श० अ० ४ श्लो० २८)

१८. आठवाँ महीना।

१. इस मासमें शरीरके सब अवयव पुष्ट होकर अपना काम करने लगते हैं। बालकको चैतन्यता आ जाती है। नाखून इत्यादि सब अच्छी तरह दिखलाई पड़ते हैं। बच्चा कुछ मोटा हो जाता है। आँखकी पुतलीका परदा कुछ हटा जान पड़ता है। चमडेका रङ्ग लाल रहता है और उसके ऊपर चरबीका कुछ अंश लगा रहता है। लम्बाई १८ इञ्च और वजन ढाई सेरतक होता है।

२. इन दिनोंमें बालकके हृदयमें रसका संचार होता है। कभी माताके हृदयसे बच्चेके हृदयमें और कभी बच्चेके हृदयसे माताके हृदयमें रस आता जाता है। इस कारण माता कभी हर्ष और कभी ग्लानियुक्ता होती है। बच्चेके हृदयमें जब माताके हृदयसे रस आता है तब माता ग्लानियुक्ता और जब बच्चेके हृदयसे माताके हृदयमें जाता है तब हर्षयुक्ता होती है। अतएव इस मासमें बालकका ओज स्थिर नहीं रहता है। इस कारण आठवें मासका जन्मा बालक प्रायः नहीं जीता।

(च० श० अ० ४ श्लो० २८)

१९. नवाँ महीना।

१. इस मासमें बच्चा सारे अवयवोंसे परिपूर्ण हो जाता है। किसी भी अंग प्रत्यंगके बननेकी कसर नहीं रहती। लम्बाई २० इञ्च और वजन ४ सेरतक होता है।

२. नवें महीनेका एक दिन भी वीत जाने से वच्चा पैदा होनेका समय कहा जाता है। (च० शा० अ० ४ श्लो० २९)

२०, दसवाँ महीना।

१. नौ महीनेके बाद पैदा होनेवाले वच्चेका अण्डकोष अत्यन्त पुष्ट होता है। (रतिशास्त्र)

इस प्रकार गर्भमें वच्चेकी शरीर-रचना होती है। विद्वानोंकी जांचसे पता चलता है कि २० इञ्च तक लम्बा और सात सेर वजन तकका वच्चा उत्पन्न हो सकता है। इतना तो नहीं, इससे कुछ कम वजनके वच्चे तो कई देखे गये हैं। यदि वच्चेका सवल और निर्वल होना माताके स्वास्थ्यपर निर्भर माना जाय, तो निर्वल मातासे सवल और सवल मातासे निर्वल सन्तान उत्पन्न होती हुई देखी जाती है। विद्वानोंकी राय है कि माताके भोजनके अनुसार सवल और निर्वल सन्तान उत्पन्न होती है। इसको वैद्यकने भी माना है, परन्तु आज हम यह भी देखते हैं कि माता-पिता दोनों खूब पुष्ट हैं, गर्भके दिनोंमें माताने खाया भी खूब, परन्तु सन्तान निर्वल उत्पन्न हुई। इस विषयमें वैद्यकके एक आचार्य्यका मत है कि गर्भकी नाभिमें ज्योतिस्थान है। उस जगह वायु हमेशा चलती रहती है। इसीसे गर्भकी देह वढ़ती है। गरमीके साथमें हवा जैसे जैसे ऊपर तिरछी और नीचेके छिद्रोंको विस्तार करती है उसी प्रकार वच्चेका शरीर वढ़ता है। (भा० प्र० ग० प्र० २१७ व २१८)

माताका भोजन गर्भकी देह वढ़नेमें अवश्य सहायक होता है, परन्तु गर्भ वढ़नेका हेतु ज्योतिस्थानकी वायु ही है।

अतएव उत्तम वायुके होनेपर अच्छी, सामान्य वायुके

होनेपर मामूली और मध्यम वायुसे छोटी और निर्बल सन्तान उत्पन्न होती है।

इस प्रकार बच्चा गर्भमें वृद्धि पाकर जन्म लेता है।

(५१) गर्भमें बच्चेका पालन कैसे होता है ?

माता और बच्चेका बड़ा सम्बन्ध है। जब तक बच्चा गर्भमे रहता है उसका जीवन मातापर ही निर्भर करता है; क्योंकि वह बच्चेकी धात्री और जीवनदात्री है।

जब तक गर्भमें बच्चेका एक एक अवयव नहीं बन जाता, वह गिलगिला एक पिंड सरीखा होता है। नाल भी नहीं होता। गर्भ-स्थिति होनेके समयसे ही गर्भवतीके सारे शरीरमें फैलानेवाली, रस बहानेवाली और तीर्यग्गमन करनेवाली धमनियोंका सारभूत द्रव पदार्थ गर्भका पोषण करता है।

(सु० शा० अ० ३ श्लो० ३७)

गर्भाधानके दो महीने पीछे नाल बनता है। यह बच्चेके पालनकी एक खास चीज़ है। दूसरी ओर या औल होती है, यह स्पञ्जके समान गोल अवयव है। ६ इञ्च लम्बी, बीचमें डेढ़ इञ्च मोटी और तीन पावके लगभग भारी होती है। इसका एक सिरा गर्भाशयसे मिला होता है। दूसरा बच्चेकी ओर रहता हैं। इसीसे नाल उत्पन्न होकर बच्चेके नाभिसे जा लगता है। वैद्यकका मत है कि माताके शरीरमें रसके बहानेवाली नाड़ियोंसे नालकी नाभी लगी रहती है। वह माताके किये हुए आहारके रस और वीर्य्यको लेकर उसके सारसे गर्भके बालककी वृद्धि करती है। (सु० शा० अ० ३ श्लो० ३६)

नाल, दो रक्तवाहिनी और एक साधारण नाड़ीका बना हुआ होता है। लम्बाई बच्चे लम्बाईके बराबर होती है। ज्यों

ज्यों बच्चा बढता जाता है त्यों त्यों नाल भी बढता जाता है। माताके शरीरसे बच्चेका पोषण करनेके लिये रक्त नालसे बच्चे के शरीरमें पहुँचता है और बच्चेके शरीरका दूषित रक्त रक्त-वाहिनी नाडियोंसे ओरमें चला आता है।

जिस प्रकार हम लोगोंमें भोजन किये हुए पदार्थसे रक्त बनाने और श्वांस द्वारा उसको शुद्ध करनेका काम फेफडेका है, उसी भांति बच्चेमें पोषणके लिये माताके शरीरसे पोषण-तत्व खींचने और दूषित रक्त निकालनेका काम ओर करता है। वैद्यकका मत है कि माता जो कुछ भोजन करती है उससे रस बनता है। यह रस तीन भागमें बँट जाता है। पहला भाग माताके शरीरको पुष्ट करता है, दूसरेसे स्तनोंमें दूध आता है, और तीसरे भागसे गर्भका पोषण होता है।

(च० शा० अ० ६ श्लो० २३)

जिस प्रकार वृक्षकी जडें भूमिमें लगी रहकर रस खींचती है और वृक्ष हरा रहता है, इसी प्रकार नाल और ओरका काम है। यही कारण है कि माताके अच्छे बुरे भोजनका असर बच्चे पर पडता है। जो माताएँ उत्तम आहार करती हैं उनके बच्चे उसीके अनुसार उत्तम होते हैं। जो भोजनपर ध्यान नहीं रखतीं जो इसकी परवाह नहीं करतीं उनके बच्चे निर्बल और नाना प्रकारके रोगी उत्पन्न होते हैं। अतएव गर्भवतीका खाने पीनेका विशेष विचार रखना चाहिये।

(५२) बच्चोंमें माता पिताके रोगोंका संचार।

जिस प्रकार घरके अच्छे और बुरे बननेका भार सामग्री और बनानेवालोंपर निर्भर है, इसी प्रकार सन्तानका उत्तम वा मध्यम होना रजवीर्य्य, गर्भाशय और माता पितापर है। इस

बातको माननेके लिये सब तैयार हैं कि सन्तान माता-पिताके गुण-दोषोंके अनुसार होती है। इसलिये यह बात निश्चय रूपसे मानी गयी है कि बच्चोंमें रज-वीर्य्यका असर अवश्य होता है।

यह प्रकृतिका नियम है कि वीर्य्य जैसा होगा उसीके अनुसार वृक्ष उत्पन्न होकर फल लगेंगे। जिस प्रकार फलमें बीजके अनुसार खट्टा मीठा स्वाद रहता है इसी प्रकार बच्चोंमें माता-पिताके गुण-दोष का असर आ जाता है। जिन माता-पितामें कोई ऐसा रोग है कि जिसका असर रज-वीर्य्यतक पहुँच चुका है, तो ऐसे रज-वीर्य्यसे जो सन्तान पैदा होगी, उसका असर अवश्य सन्तानपर होगा। शरीरका हर हिस्सा अपनेमें से बहुत छोटा हिस्सा पैदा करता है। ऐसे परमाणु सारे शरीर को संचालन करते और अपने ही समान दूसरे परमाणु उत्पन्न करते हैं। इन्हीं परमाणुओंमें से शरीर उत्पन्न करनेवाले कोषोंकी उत्पत्ति होती है। इन्हीं कोषोंसे माता-पिताके गुण-दोष बच्चोंमें आ जाते हैं। ऐसे दोष दो प्रकार के होते हैं। एक स्थाई, दूसरे नष्ट हो जानेवाले। स्थायी कोष कभी नष्ट नहीं होते। इन्हीं कोषोंसे वीर्य्य बनता है अर्थात् ऐसे कोष वीर्य्यमय होते हैं। नष्ट हो जानेवाले कोष दिन-रातमें सहस्रों बार नष्ट होते और भोजन इत्यादिसे फिर पैदा हो जाते हैं।

जब इन स्थायी कोषोंमें किसी प्रकारके रोगका असर पहुँचता है, तो वे दूषित हो जाते हैं। इसी प्रकार मातामें भी समझना चाहिये। यही कारण है कि जिस रोगमें माता पिता ग्रस्त होते हैं, दो दो चार चार वर्षकी अवस्थामें वही रोग बच्चोंमे देखे जाते हैं। तुरन्तके पैदा हुए बच्चेतक भी प्रायः इस बातकी साक्षी होते हैं। देखा गया है कि आठ दस दिन का बच्चा है, बदनमें ददौड़े हो गए हैं। शरीरकी रंगतमें अन्तर

पड गया है। फोड़े फुंसी हो गए हैं। इन सबका कारण क्या है? माता-पितासे प्राप्त हुआ रोग। यहाँपर यह शंका होती है कि पिताके बहुत दिनोंसे कोई रोग है और उनके चार लड़के हैं। इन चारों लड़कोंमें एक लडकेके वह रोग मालूम होता है, तो ऐसी दशामें क्या कहा जायगा कि उन तीन लड़कोंमें पिताको रोग है या नहीं? यदि यह कहा जाय कि जब इन तीन लड़कोंका गर्भाधान हुआ तब पिताको वह रोग नहीं था, तो ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि वोर्य्यके एक एक परमाणु उस रोगसे दूषित हो चुके हैं।

जहाँ ऐसा हो वहाँ यह मानना चाहिये कि जिस समय गर्भाधान हुआ, उस समय किसी कारणसे परमाणुओंमे उस रोगका असर कम था या जन्म लेनेपर या गर्भमें ही माताकी औषधि और भोजनसे पितासे प्राप्त रोगका असर कम हो गया। या जल वायुके परिवर्तनसे ऐसा हुआ॥ जहाँ ऐसा होता है वहां बच्चोंमें ऐसे रोग नहीं दिखलाई पड़ते, परन्तु उसका अंश शरीरमें रहता अवश्य है। ऐसा भी होता है कि बहुतसे रोग समय और सहायता पाकर खडे होते हैं। उनको भी ऐसे ही समझना चाहिये।

जब माता पितामें रोग खूब बढा हो और गर्भाधान हो जाय, तो ऐसे बालकोंमे वह रोग जन्मसे ही हो जाता है, जैसे रक्त-विकार, मिरगी, बवासीर, अतिसार, क्षयी संग्रहणी, गरमी, सूजाक, आतिशक, नेत्र-रोग और दंत-रोग इत्यादि।

माता पितासे पाए हुए रोग औषधि करनेसे हलके अवश्य पड जाते हैं, परंतु जडसे जाना असंभव है। अतएव बालकों-को निरोग पैदा होनेके लिये माता-पिताको अत्यन्त सावधानी

से रहना चाहिये, जिससे वे ऐसे रोगोंसे बचे रहें, जो वंश परम्परासे बच्चोंमें आते हैं।

(५३) शरीर का वर्ण (रंग)

इस बातमें प्रायः लोगोंको सन्देह होता है कि एक ही प्रान्तके रहने वालों और एकही माता-पिता से उत्पन्न सन्तानोंके रङ्गोंमे क्यों अन्तर पडता है ? इसके अनेक कारण हैं।

१, वैद्यकका मत।

१. तेज (अग्नि) धातुसे ही सब रंगके बालक उत्पन्न होते हैं। गर्भाधान समयमें यदि तेज धातु जल धातुके अधिकांशसे युक्त हो, तो गौर रंगकी सन्तान उत्पन्न होती हैं। यदि तेज धातु पृथ्वी धातुके अधिकांशसे युक्त हो तो काले रंगकी सन्तान होती है। यदि तेज धातु पृथ्वी और आकाशके अधिकांशसे युक्त हो, तो कालापन लिये सांवले रंगकी सन्तान होगी। यदि तेज धातु जल और आकाशके अधिकांशसे युक्त हो, तो गोरापन लिये साँवले रंगकी सन्तान होगी।

(सु० शा० अ० २ श्लो० ३७)

२. गर्भवती जैसे वर्णका आहार करे वैसे ही रंगकी सन्तान होती है। (सु० शा० अ० २ श्लो० ३८)

३ गर्भाधान समयमें माताका चित्त जैसे रंग रूपवाले स्त्री-पुरुषपर पहुँचता है, उसीके अनुसार सन्तान होतीहै।

(रतिशास्त्र)

४. गर्भाधान समयमें जैसा रूप स्त्रीके सामने आ जाता है, वैसी ही सन्तान होती है। (शा० क०)

इस समय इस विषयमें चार विचार उपस्थित हैं। पहला विचार यह है कि तेज धातु और दूसरी धातुओंसे मिलकर अनेक रंगोंकी सन्तान उत्पन्न करती है। यहां पर यह बात मुख्य है कि शरीरमें जो धातु अधिक होगी वही तेज धातुसे मिलेगी। इसी कारण एक ही गर्भसे कोई काली और कोई गोरी सन्तान पैदा होती है। इसलिये जैसे रंगकी सन्तान पैदा करना हो, उसी धातुको औषधियोंसे माता-पिताके शरीर बढ़ा देना चाहिये, तो मनमाने रंगकी सन्तान पैदा हो सकती है।

दूसरा विचार यह है कि गर्भवती जैसे वस्तुका आहार सेवन करे वैसी ही सन्तान उत्पन्न होती है। यह ठीक है, परन्तु लोग यह समझते हैं कि गर्भके समयमें भी जैसे चाहे का आहार करे वैसी ही सन्तान होती है। नहीं, इस जगह यह माननीय है कि गर्भवतीने जैसा आहार खाया हो अर्थात् गर्भ धारण होनेके पहले समयोंमें जैसे आहारका सेवन किया हो वैसी सन्तान होती है। इसका कारण यह है कि जैसा आहार खाया जाता है उसीके अनुसार शरीरमें स्थित धातुओंकी वृद्धि होती है। इसलिये जैसा अन्न या आहार खानेसे जैसी धातुकी वृद्धि होगी वही धातु तेज धातुसे मिल कर अपने रंगके अनुसार सन्तान उत्पन्न करेगी। इसलिये जैसे रंगकी सन्तान उत्पन्न करनेकी इच्छा हो उसीके अनुसार गर्भाधानके पहलेहीसे आहार करना चाहिये।

तीसरा विचार यह है कि जैसे रूप रंगवाले स्त्रीपुरुष पर माताका ध्यान होगा उसीके अनुसार सन्तान होगी। ठीक है परन्तु इसमें बहुत गहरा विचार है। वैद्यकका मत है कि जिस तरह आंखें दुखनेके देखनेसे और दुखती आंखें देखनेसे भी कमजोर हो जाता है, उसी तरह गर्भाधान समयमें

दूसरे स्त्री वा पुरुषके रूप रंगका खयाल आ जानेसे अपने शरीरमें उसी रंगकी सन्तान उत्पन्न करनेवाली धातु उत्कट होकर तेज धातुसे मिलकर वैसे ही रंगकी सन्तान उत्पन्न करती है। (गतिशास्त्र)

चौथा विचार यह है कि 'जैसा रूप रंग गर्भाधान समयमें स्त्रीके सामने आ जाता है उसीके अनुसार सन्तान उत्पन्न होती है। ठीक है, यह भी एक गौरवका सिद्धान्त है। इस विषयमें बहुत बड़ा एक प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि प्रायः सौदागर ऐसा करते हैं कि घोड़ीसे जिस रंगका बच्चा उनको लेना होता है तो घोड़ीके गर्भाधानके समय उसी रंगका घोड़ा घोड़ीके सामने खड़ा करते हैं और घोडीकी आंखोंमें पट्टी बांध देते हैं, जब गर्भाधान हो चुकता है तब उस घोड़ेको, कि जिससे गर्भाधान हुआ था, अलग कर देते हैं और आंखोंकी पट्टी खोल देते हैं। पट्टी खोलते ही घोड़ीकी नजर सामनेवाले घोड़ेपर पड़ती है और उसी रंगका घोड़ा पैदा होता है। इसी प्रकार स्त्रियोंमें भी दृष्टिका बहुत बड़ा असर होता है। गर्भाधान समयमें जैसा रूप रंग स्त्रीके सामने आ जाता है, तो उसका एक ऐसा प्रभाव स्त्री पर पड़ता है कि जिससे स्त्रीके शरीरमें वैसा ही रंग उत्पन्न करनेवाली धातु उत्कट होती है और वह तेज धातुसे मिलकर गर्भाधान समयमें देखे हुए रंगके समान रंगवाली सन्तान उत्पन्न करती है। इस विषयमें यूरोपकी एक बहुत बड़ी यह आख्यायिका प्रसिद्ध है। एक यूरोपियन व्यक्तिके यहां काले रंगकी सन्तान उत्पन्न हुई थी। कारण यह साबित हुआ कि गर्भाधानके समयमें स्त्रीकी निगाह एक काले रंगके हबशीके चित्र पर पड़ी थी, जो पलंगके सामने था। इन प्रमाणों से सारे विचारोंका एक ही सिद्धान्त निकलता है कि शरीरमें

स्थित धातु भोजन, चिन्तवन और दृष्टिसे उसीके अनुसार उत्तेजित हो तेज धातुसे मिलकर सन्तान उत्पन्न करती है।

यहां पर एक बहुत बड़ी शंका यह होती है कि यूरोपमें सब गोरे ही रंगके क्यों पैदा होते हैं? इस विषयमें जहांतक निश्चय किया गया यह बात पायी गयी है कि सर्दीके कारण यूरोपके लोगोंमें तेज धातु अधिकांश जलयुक्त होती है। इस कारण लोग गोरे रंगके उत्पन्न होते हैं। हमारे देशमें ही जहां सर्दी अधिक पड़ती है वहांके लोग इसी कारण कुछ गोरे होते हैं। इसी प्रकार जहां गर्मी अधिक पड़ती है, वहांके लोगोंमें तेज धातुके साथ पृथ्वी और आकाश धातु अधिक होती है। इस कारण वहांपर काले रंगके लोग होते हैं। खानेके पदार्थोंमें भी बड़ा हेरफेर हो जाता है। सर्द देशमें खानेकी चीजें सर्दीसे अधिक जलयुक्त होती हैं। गर्म देशोंमें खानेके पदार्थ अधिक पृथ्वी धातुके अंशोंसे युक्त रहते हैं। शूद्र लोगोंमें कि जिनको सुखसे खाने पीनेको मिलता है, उनके बच्चोंकी रंगत कुछ और ही होती है। इन सब विचारोंसे यह बात निश्चय है कि हर देशके खाने पीनेकी चीजोंमें पंचतत्वोंकी कमी-बेशी जरूर होती है। यह भी प्रत्येक प्रान्तके निवासियोंके रंगमें अन्तर होनेका एक विशेष कारण है।

देश और प्रान्तका यदि विचार करके एक एक घरमें देखा जाय तो मालूम होगा कि संयमके साथ भोजन करनेवालों और लापरवाहीसे बिना विचारके भोजन करनेवालोंकी सन्तानोंमें कितना अन्तर होता है। इन सब विचारोंसे यह बात सिद्ध हुई कि तेज धातुके साथ जल इत्यादि दूसरी धातु अधिकांशसे मिलकर अनेक रूप रंगकी सन्तान उत्पन्न करती है। यह बात मुख्य करके मानी गई है कि भोजनका प्रभाव

रूप रंगके विषयमें दृष्टि और चिन्तवनसे प्रभावशाली होता है। क्योंकि अँगरेजोंके यहाँ गोरी ही सन्तान होती है, चाहेवे किसी देशमें रहें। इसी प्रकार काबुली, चीनी, जापानी और रंगूनी कहीं रहते हुए अपने ही रूप रंगके अनुसार सन्तान उत्पन्न करते हैं। इसका कारण यह है कि प्रायः इनका भोजन दूसरे देशमें जाकर नही बदलता, परन्तु भारतमें यह बात नही है। बंगाली और मदरासी भारतके ही दूसरे प्रान्तोंमे जाकर भोजन बदल देते हैं। इनको पञ्जाब ऐसे देशमें जाकर चावल-के साथ गेहूं खानेकी बान पड जाती है इत्यादि। इस प्रकार भोजन बदल जाने या उसमें हेर फेर हो जानेसे शरीरकी धातुओंमें कमी बेशी हो जाती है। इस कारण भारतीय भारत के दूसरे प्रान्तोंमें जाकर वहींके अनुसार सन्तान उत्पन्न करते हैं। इतना ही नहीं, एक ही स्थान और एक ही माता-पितासे दो रंगकी सन्तान उत्पन्न होती है। पहला लड़का गोरा दूसरा काला, इसका कारण भी भोजनका हेर फेर है, जैसे जाड़ेके दिनोंमें गरम पदार्थों और गरमियोंमें ठंढी वस्तुओंका अत्यन्त सेवन इत्यादि। इस प्रकार अनेक रङ्गकी सन्तानें उत्पन्न होती हैं कि जिनका मुख्य कारण जलादि धातु हैं और वे भोजन किये हुए पदार्थोंसे बनती हैं। अतएव भोजनके पदार्थोंका संशोधन करके मनुष्य मन-चाहे रङ्गकी सन्तान उत्पन्न कर सकता है; क्योंकि जिस धातुकी इच्छा हो वह मुख्य रीतिसे भोजनके पदार्थों द्वारा विशेष रूपसे उत्पन्न हो सकती है।

(५४) मनुष्याकृति भिन्न भिन्न क्यों होती है ?

संसारमे जितने मनुष्य हैं सबके चेहरेकी बनावट अलग अलग होती है। एकका चेहरा दूसरेसे नहीं मिलता। बहुत

सी सूरतोंमें जब कि यह कहा जाता है कि इनमें कुछ भी भेद नहीं है तथापि कुछ न कुछ अन्तर अवश्य होता है। इसके अनेक कारण हैं।

१. वैद्यकका मत।

१. रजोदर्शनके समयमें माताके हृदयपर जिस सूरत शकलके स्त्री पुरुषका ध्यान आ जाता है या स्नानके समयमें जैसे पुरुषका दर्शन हो और उसका ध्यान बना रहे उसी रूपकी सन्तान होती है। (रतिशास्त्र)

इसी कारण रजोदर्शन समयमें एकान्तवासका विधान कहा गया है।

२ गर्भाधान समयमें जिस जीवमें स्त्रीका चित्त होगा अर्थात् जिस जीवका ध्यान आ जावेगा उसीके अनुसार सन्तान होगी। (च० शा० अ० २ श्लो० २८)

इसी प्रकार भोज वैद्य और अन्य विद्वानोंने भी कहा है। इसके अनेक उदाहरण इसी पुस्तकमें 'मनोबल' के विषयमें लिखे गये हैं।

३. माता-पिताके मिले हुए रज-वीर्य्यमें शरीरके जिस अंग प्रत्यंगके बनानेवाला अंश निर्बल होता है तो शरीरका वह अंग उत्तम नहीं होता अथवा जब अंग प्रत्यंग बनानेका अंश नहीं होता तो अंग ही नहीं बनता।

(शा० का०)

४. गर्भावस्थामें माताका भोजन ठीक न होनेसे भी सन्तान की भिन्न भिन्न आकृति होती है। इसके कई भेद हैं।

१. जिस अंगके जिस प्रकारका भोजन उपयोगी होता है उसके कम होने अथवा न होनेपर अधूरा अंग रह जाता है। (शा० का०)

२. जिस पदार्थके खानेसे शरीरके जिस अंगको हानि पहुँचती है गर्भमे बच्चेका वही अंग विकृत हो जाता है। (श० क०)

३. जिस पदार्थके खानेसे जिस अंगकी पुष्टि होती है गर्भमें बालकका वह अंग उत्तम रीतिसे विकसित होता है। (श० क०)

यही कारण है कि बच्चे माता पिता, मामा और नौकरों इत्यादिकी आकृतिके होते हैं। इसमें माताका विचार रजस्वला समयका दर्शन तथा गर्भाधान समयका चिन्तवन कारण है। स्त्री के हृदयमें एक ऐसी दैवीशक्ति है कि जिससे चिन्तवन किये हुए मनुष्यकी आकृतिकी सन्तान उत्पन्न होती है। जिस प्रकार तसवीर खिंचते समयमें हँसने रोनेवालेकी उसी विकारके अनुसार तसवीर खिंच जाती है, इसी प्रकार माताके हृदयपर पड़े हुए स्त्री पुरुषके आकारके अनुसार सन्तान होती है। इस विषयमें माता-पिताका मिला हुआ रज-वीर्य्य भी कम असर नहीं रखता। जिस अंगके बननेका सामान रजवीर्य्यमें कम होता है, वह अग बेढंगा और निस्तेज होता है। जिस अंगके बननेका अंश प्रवल होता है वह अंग पूरी रीतिसे प्रफुल्लित रहता है। इसी प्रकार गर्भावस्थामें माताके खाए हुए भोजनका कुछ कम प्रभाव नहीं पड़ता। जिस पदार्थके खानेसे जिस अंगकी पुष्टि होती है उसके खानेसे वह अंग गर्भमें उत्तम बन जाता है और जिसके खानेसे जिस अंगको हानि होती है वह टेढ़ा और बदसूरत हो जाता है।

अतएव इस विषयमें रजोधर्म और गर्भाधान समयका चिन्तवन और ध्यान तथा गर्भावस्थामें माताका भोजन मुख्य

कारण है कि जो एक सा सारी स्त्रियोंका नहीं हो सकता। अतएव प्रत्येक मनुष्यकी आकृति भिन्न भिन्न होती है।

(५५) नेत्रोंका उत्तम और मध्यम होना।

जिस प्रकार मनुष्यका रूप रंग एकसा नहीं होता इसी प्रकार नेत्र भी एक प्रकारके नहीं होते। गर्भ जब चार महीनेका हो जाता है तब आँखोंमें कुछ ज्योति आने लगती है। इसलिये चौथे महीनेमें जैसा तेज दृष्टि- भाग मे आता है वैसी हीं आँखें होती हैं।

वैद्यकका मत। (सु० श० अ० २ श्लो० १३)

१ यदि गर्भके बालककी आँखोंमें तेज धातु न पहुँचे तो बालक जन्मसे ही अन्धा होता है।

२ यदि तेज धातु रक्तके साथ होकर दृष्टि-भागमें जावे तो बालक लाल नेत्रोंवाला होता है।

३ यदि तेज धातु पित्तके साथ होकर आँखोंमें पहुँचे तो बालक पीले नेत्रोंवाला होता है।

४. यदि तेज धातु कफ़के साथ होकर दृष्टि-भागमें पहुँचे तो सफेद नेत्रोंवाला बालक होता है।

५ यदि तेज धातु वायुके साथ होकर दृष्टि भागमें पहुँचे तो भैंडी आँखोंवाला या नेत्र रोग वाला या चंचलाक्ष बालक होता है।

तेज धातुके साथ दूसरी धातुओंके मेलसे इस प्रकार बच्चोंकीआँखें बनती हैं। यहाँपर एक बहुत बड़ा प्रश्न यह होता है कि तेज धातुके साथ वात पित्त इत्यादि किस प्रकार पहुँचते हैं। शरीरमें वात पित्त इत्यादिमें से जिसकी अधिकता

होगी वही प्रवल होगा और वही तेज धातुके साथ नेत्रोंमें पहुँचेगा। माता जैसा भोजन करती है उसीके अनुसार शरीर में वात पित्त इत्यादि चढ़ते हैं। वहुतसे लोग ऐसे देखे जाते हैं कि जिनकी आंखें बिल्ली की सी पीली होती हैं। उनकी आंखों-में तेज धातुके साथ पित्त ऐसा विकार उत्पन्न करता है। यह रोग वंश परंपरासे भी देखा जाता है। माता पिता दोनाकी आंखें पीली होनेपर बच्चोंकी भी आंखें पीली होती हैं; परंतु माता या पिता एककी आंखोंमें ऐसा विकार होने पर नहीं होती। यहां पर यह सवाल हो सकता है कि यूरोपमें सबकी आंखें सफेद क्यों होती है? इसका कारण यह है कि यूरोप सर्द देश है और कफ सर्दीसे उत्पन्न होता है, इसलिये वहांके निवासियोंमें कफकी अधिकता रहती है। जब शरीरमें कफकी अधिकता होती है तो तेज धातुके साथ कफ दृष्टि-भागमें पहुँचता है, इस कारण यूरोप निवासियोंकी आंखें कंजी होती हैं। इस प्रकार तेजके साथ पित्तादि धातुओंके बिगाड़से अनेक प्रकारकी आंखें होती हैं।

(५६) अल्पजीवी और दीर्घजीवी सन्तान कैसे होती है?

यह एक वडा गंभीर विषय है। वहुतोंका तो कहना यह है कि यह वात ईश्वरके हाथमें है। वहुतसे लोग पूर्व जन्मके पाप और पुण्य पर मानते हैं, परंतु हम किसीके मन्तव्य पर आक्षेप नहीं करते। हमने भी कई जगह ऐसा पढ़ा है कि आयु कर्मोंके अनुसार होती है, परंतु आजकालकी नवीन रीतिके अनुसार यह वात सिद्ध हुई है कि गर्भ रज-वीर्य्यके कीडोंसे

ही रहता है। वीर्य्य जब मज्जा धातुसे बनकर २८ से लेकर ३६ घंटे पर्य्यन्त वीर्य्याशयमें रह चुकता है, तब उस वीर्य्यके कीडे पुष्ट होते हैं। जो लोग इससे कम समयमें या दिन रातमें कई बार प्रसंग करते हैं तो कच्चे रहते हैं उनके वीर्य्यमें वीर्य्य-जन्तु होते ही नहीं, यदि होते भी हैं तो कच्चे रहते हैं और उनमें कूदने और गर्भ बनानेकी शक्ति ही नहीं होती।

इसमें एक बहुत बडी बारीकी यह है कि पुरुषकी कम अवस्थामें ऐसे जन्तु कभी नहीं पकते। एक विद्वानकी राय है कि जन्तुओंका पकना बीस वर्षकी अवस्थासे प्रारंभ होता है, और पच्चीस वर्षकी अवस्थामें खूब अच्छी तरह पक जाते हैं इनके बाद हमेशा पकते रहते हैं। यह बात उन लोगोंमें पाई जाती है कि जिन्होंने पच्चीस वर्षतक ब्रह्मचर्य्य पालन किया है. परन्तु जिसका ब्रह्मचर्य्य इस नियत समयतक नहीं रहा, उनके वीर्य्य-जन्तु हमेशा बुरी दशामें रहते हैं। इस विषयमें ऐसा नहीं होता कि जिन्होंने पच्चीस वर्षतक ब्रह्मचर्य्य नहीं पालन किया है, सोलह अथवा बीस वर्षकी अवस्थासे ही स्त्री संयोग प्रारंभ हो गया है, तो उनका वीर्य्य जन्तु पच्चीस वर्षकी अवस्थामें जाकर पक जावेगा। यह एक बडी भूल है, ऐसे लोगोंके वीर्य्य जन्तु आगे चलकर नहीं पकते, किन्तु अधकच्चरे रह जाते हैं। इसी प्रकार स्त्रियोंमें रजवती होनेके समयसे लेकर १६ वर्ष तक रज-जन्तु पक कर ठीक हो जाते हैं और भीतरी अवयवोंमें पुष्टता आ जाती है। वैद्यकने भी ऐसा ही माना हैं कि पच्चीस वर्षकी अवस्थामें पुरुष और सोलह वर्षकी अवस्थामें स्त्री दोनों बराबरकी शक्तिवाले होते हैं। गा० क०

इस विषयमें स्त्री और पुरुषोंको कुएँके समान समझना चाहिये। जिस प्रकार दो चार हाथ भूमिमें गले हुए कुएँ थोडा

सा पानी निकालने पर सूख जाते हैं और जो कुएँ अच्छी तरह से गले हैं वे चाहे जितना पानी निकालने पर भी, नहीं सूखते, इसी प्रकार जिन माता पिताओंने थोड़े दिन ब्रह्मचर्य्य पालन करके संयोग किया है, वे छिछले कुएँके समान हैं, परंतु जिनका ब्रह्मचर्य्य पूरा पालन हुआ है उनको गहरे और गंभीर कुएँके समान समझना चाहिये।

एक खेतको देखना चाहिये, उसमें बहुतसे पेड़ होनेपर कुछ छोटे ही रह जाते हैं। कुछ बड़े होते हैं, कुछ सबमें अच्छे रहते हैं। इनका कारण यह है कि जैसा पका हुआ अच्छा वीर्य्य होता है उसीके अनुसार अच्छे लम्बे चौड़े पेड़ होते हैं। यह बात भी देखनेमें आवेगी कि पके हुए वीर्य्यके पेड़की जड़ गहरीमें होगी और वह कुछ देरमें सूखेगा परंतु जो पेड अधपके वीर्य्यसे उगेगा उसकी जड़ तो अधिक नीचे न जायगी और वह जल्द सूख जायगा। इसी प्रकार मनुष्योंमें भी जानना चाहिये। जिन बच्चोंका गर्भ उत्तम और पके रजवीर्य्यके जन्तुओं से हुआ है, वे दीर्घजीवी अर्थात् ज्यादा दिन जीनेवाले; और जिनका गर्भ खराब कुछ कच्चे वीर्य्यसे हुआ है वे अल्पजीवी अर्थात् कम दिनों जीनेवाले होते हैं।

अच्छा और पका हुआ वीर्य्य होनेपर भी अल्पजीवी अर्थात् कम दिनों जीनेवाली सन्तान भी होती है। इसका कारण यह है कि जब अच्छा खूब पका हुआ वीर्य्य घुन जाता है, तो उससे पेड होता ही नहीं। यदि होता भी है तो छोटा और जल्द सूख जानेवाला। इसी प्रकार स्त्री और पुरुषोंके बीजोंमें भी समझना चाहिये। जब स्त्री पुरुषके रजवीर्य्यके जीव किसी रोगसे दूषित हो जाते हैं तो वह घुने हुए बीजके समान गर्भ ही नहीं उत्पन्न करते। यदि करते भी हैं, तो कच्चे

बीजके समान सन्तान पूरी उमरतक न जीनेवाली होती है। अतएव स्त्री पुरुषोंको पूरे दिनोंतक ब्रह्मचर्य्य करके संयोग करना चाहिये तभी उत्तम और दीर्घजीवी सन्तान उत्पन्न हो सकती है।

(५७) बच्चा कितने दिनोंमें उत्पन्न होता है?

जिन माता पिताओंको गर्भाधानका दिन याद रहता है, उनको यह मालूम करनेमें कठिनाई नहीं पड़ती कि बच्चा कब पैदा होगा? परंतु जहाँ इसपर कुछ विचार ही नहीं है, वहाँ कैसे पता चल सकता है? इस विषयमें अनेक मत हैं।

१. डाक्टरोंका मत।

१. गर्भाधनसे २७८ या २८० दिन पर सन्तान उत्पन्न होती है।

२ कोई कोई गर्भाधानसे ३०० दिनतक उत्पन्न होनेका समय मानते हैं।

२. वैद्यकका मत।

१ नवें, दसवें और कभी ग्यारहवें महीनेमें बालकका जन्म होता है। यदि इससे अधिक समय बीते तो एक प्रकारका विकार समझना चाहिये। (सु० शा० अ० ३ श्लो० ३५)

२. आहार न पहुँचने से गर्भ पेटमें सूख जाता है या गिर जाता है। गर्भ जब इस प्रकार सूख जाता है, तो कई वर्षोंमें पुष्ट होता है और फिर जन्म लेता है।

(च०) शा० अ० २ श्लो० १४)

जहांतक देखा गया है दस मासके अन्दर ही बच्चा पैदा हो जाता है। ऐसा कम होता है कि साल भरमें हो और ऐसा

तो देखा ही नहीं गया कि वर्षोंमे हो। परंतु आचार्य्योंके लिखने का प्रयोजन यह है कि ऐसा हो सकता है।

(५८) तत्काल बच्चा जननेवाली स्त्रीके लक्षण

बच्चा पैदा होनेका समय कितना कठिन होता है? ऐसे समयमें स्त्रियाँ ही रक्षा करनेवाली होती हैं। इसलिये यह मालूम करना कितना जरूरी है कि बच्चा कब पैदा होगा? इस विषयमें अनेक मत हैं।

१० वैद्यकका मत।

१. स्त्रीका कुम्हला जाना, शरीरमें भारीपन, मुखऔर नेत्रों, में शिथिलता, वक्षस्थलका बंधन खुला जान पड़ना, कूप का मुँह नीचेकी ओर हो जाना, नीचेके आधे देहमें अधिक भारीपन, वंक्षण, वस्ती, कमर, पसली और पीठमें चवकियोंका चलना अन्नसे अरूचि हो जाती है और गर्भका जल गिरने लगता है। तुरंत ही ऐसे लक्षणोंसे जान लेना चाहिये कि बच्चा शीघ्र ही होनेवाला है। (च० श० अ० ८ श्लो० ८०) सुश्रुत० श० अ० १० श्लो० १३ व १४ और वा० श० अ० १ श्लो० ७४ व ७५ मे भी ऐसा ही कहा है।

२. योनिसे गर्भका जल गिरनेके पीछे ही प्रसवका दर्द उत्पन्न हो जाता है। (रतिशास्त्र)

ये लक्षण विशेष रीतिसे उन्हीं स्त्रियोंमे पाए जावेंगे कि जिनके पहले पहल बच्चा होगा। कई बार बच्चा हो जानेवाली स्त्रियोमें प्रायः सब लक्षण नहीं होते हैं। परतु कुछ होते अवश्य हैं।

(५६) बच्चेकी पैदाइशके समयका कर्तव्य ।

ईश्वर की माया बड़ी बलवान् है। बच्चा नौ महीने गर्भ में रहकर पके फलके समान प्रकट होता है। माताको क्लेश होना यह तो प्रकृतिका नियम है। निर्बल और छोटी स्त्रियाँ तो प्रायः कुछ अधिक कष्ट पाती हैं, परन्तु जो लम्बी और बलवती हैं उन्हें कम कष्ट होता है। मोटी स्त्रियोंमें बच्चेका कष्ट अधिक होता है यह एक नाजुक समय है। इसमें बहुत बड़ी सावधानी चाहिये। बच्चा पैदा होने के आठ दस दिन पहलेसे ही स्त्रीको ऐसे उत्तम और हवादार मकानमें रखना चाहिये कि जिसका दरवाजा पूर्व और दक्षिणकी ओर हो, जिसकी लम्बाई १८ चौडाई १२ और ऊँचाई ८ फुट से कम न हो। ऐसे घरमें खिड़कियाँ अवश्य होनी चाहियें। जहां बच्चा पैदा हो वहाँ धूआँ करना बहुत बुरा है, इससे प्रसूताके स्वास्थ्यपर बहुत बडा धक्का पहुँचता है। ऐसे मकानके आस-पास कूड़ा-कचरा न होना चहिये और ऐसी चीजें भी न हों कि जिनमें जीव पाए जावें। पासमें पाखाना और नाबदान होना बुरा है। घरकी पोताई चूनेसे होनी चाहिये। जहांतक हो सके ऐसा प्रबन्ध हो कि जिसमें सील इत्यादिके कीडे वहा न जा सकें। मिट्टीका तेल जलाना बहुत नुकसान करता है। आचार्य्योंके वाक्योंपर ध्यान न देकर लोग नर्कमें बच्चा जनाना लाभदायक समझते हैं। यदि इसपर भी बच्चों और माताओंकी मृत्यु-संख्या न बढे तो क्या हो क्या हो? जहा कूड़ा-करकट भरा हुआ है, मच्छर भिनभिना रहे हैं, मक्खिया उड रही हैं, सीलके कीड़े दौड रहे हैं, वायु जाती ही नहीं, अँधेरा छा रहा है, जहां चार छ

आदमियोंके खड़े होनेपर श्वाँस रुकने लगती है, ऐसा मकान स्त्रियाँ खास तौरसे बच्चा जनानेके लिये रखती हैं।

कैसे शोककी बात है कि आज भारतकी वे देवियां कि जो लक्ष्मीस्वरूपा हैं, जिनको अमूल्य रत्न उत्पन्न करना है, जिनको अपने प्रसवसे संसारको कायम रखना है, उन्हें ऐसी घृणित जगह बच्चा जननेके लिये दी जाती है!

यही नहीं, खास इसी समयके लिये हमारे भारतीय गृहस्थोंके यहाँ एक टूटी और छोटी चारपाई अवश्य होती है कि जिसमे खटमलोंका तो ठिकाना ही नही, असंख्य जीव भरे रहते हैं। यह कितनी बुरी बात है। ऐसी चारपाईसे तुरन्त छूतका असर दौड पडता है। ध्यान रहे कि चारपाई नई और नए बाधसे बुनी होनी चाहिये कि जिसमें जरा भी झोल न हो। इससे प्रसूताके पेट और गर्भाशयपर दबाव पड़ता है।

ओढ़ने और बिछानेके कपडोका भी निराला ही हाल होता है। इस विचारसे कि प्रसूताके कपड़े फिर काममें नहीं आते, अतएव ऐसे रद्दी बदबूदार और पुराने कपडे ओढ़नेको दिए जाते हैं कि जिनके ओढ़ने बिछानेसे अवश्य निरोग मनुष्य रोगी हो सकता है। गरमीके दिनोंमें एक दरी ओढनेकी जरूरत ही क्या है? जाडेमें एक दरी और ओढ़नेको एक कम्मल बहुत है। हा! भारतमें कैसी बुद्धिमानी फैल रही है, कैसे मौकेपर धन बचाया जाता है? विचार करनेकी बात है, कि जिस स्त्रीके शरीर से वर्षोंका जोड़ा हुआ रक्त गिरा है, जिसने बच्चा पैदा करके दूसरा जन्म पाया है, उसके लिये ऐसे ओढने और बिछौने! याद रहे कि जितना बिछौना जाड़ोंमें आम तौरसे होता है उतना गरमियोंमें और इससे दूना जाडेमें

प्रसूताको चाहिये । परन्तु कपड़े सब नए हों, यदि नए न हों ओ इतने धोए हों कि उनमें बदबू न रहे । कपड़े चाहे नए हों या पुराने, कमसे कम चार दिन धूपमें सुखलाना ज़रूर चाहिये, इसलिये कि ज़हरीले और सामान्य जीव न रहें । ऐसे जीव अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न करते हैं ।

इस विषयमें सबसे पहले यह बात स्त्रियोंको निश्चय कर लेनी चाहिये कि बच्चा पैदा होनेमें कितनी देर है ? यह बात प्रायः एक सप्ताह पहले ही स्त्रीके लक्षणोंसे मालूम हो सकती है । वैद्यकका मत है कि एक सप्ताह पहलेसे पेट हलका हो जाता है । बच्चा कुछ नीचे उतर आता है, आमाशयपर दबाव नहीं रहता, पेशाब जल्दी जल्दी उतरता है । पाखाना जानेमें कुछ कष्ट होता है । ऐसा होनेके एक दो दिन बाद एक प्रकारका पानी योनिसे निकलने लगता है और कभी कभी मीठा मीठा दर्द भी होता है । ऐसी दशा आठ दस दिनतक प्रायः रहती है । इन्हीं दिनोंमें पैदा होनेका दर्द उठता है । ऐसा दर्द दो प्रकारका होता है—सच्चा और और झूठा । झूठा दर्द प्रारम्भ होते ही स्त्रिया समझ लेती हैं कि अब बच्चा होनेवाला है । इसमें पीडा और योनिका सकोचन नियमके अनुसार नहीं होता और न बढता है । ऐसा दर्द पेटके अगले हिस्सेमें होता है । सच्चा दर्द यह एक खास दर्द है । यह गर्भाशयके पिछले हिस्सेसे प्रारम्भ होकर आगे आता है । इसमें जरायुका मुख चौडा हो जाता है । झूठा दर्द होनेका कारण पाखाना और पेशाबका रुकना है । जब पाखाना पेशाब हो जाता है तब झूठा दर्द शान्त हो जाता है । सच्चे दर्दमें पहले जरायु और इसके बाद उदरके पेशी तन्तुओंमें सकोचनके दबावसे बालक नीचे उतरता है । योनिका मुख फैलता और दर्द बढता चला जाता

है। जब बालक योनि-द्वारसे नीचे उतरता है तब जो पीड़ा होती है वह सहन करने योग्य नहीं होती। ऐसी पीड़ा उन स्त्रियोंमें कि जिनको पहले पहल बच्चा होता है, कठिन होती है, परन्तु जिनके दो चार बार बच्चा हो चुका है, उनके कुछ कम होती है।

सबसे पहला काम प्रसवमे जरायुका मुख चौड़ा होना है। इसमें प्रायः दस बारह घंटे लगते हैं। परन्तु जब पहले पहल बच्चा होता है तो और भी देर लगतो है। गर्भाशयका मुख चौड़ा होनेके बाद बच्चा पैदा होनेमें दो तीन घंटे उन स्त्रियोंको लगते हैं कि जिनके बच्चा कई बार हो चुका है, नयी स्त्रियों-को कुछ और देर लगती है।

जैसे जैसे गर्भाशयका मुख फैलता जाता है तैसे तैसे झिल्लीकी थैली जिसमे कि बच्चा रहता है आगेको निकलती चली आती है। जब गर्भाशयका मुख अच्छी तरह फैल जाता है तब जरायु और योनिका रास्ता एक हो जाता है। ऐसी दशामें तेज़ पीड़ा होती है। इसका कारण वह है कि बच्चा नीचे उतरता है। इस समय स्त्रियां बहुत बड़ी असावधानियां करतीं हैं। प्रायः देखा गया है कि स्त्रियां खड़ी होती हैं, उठती बैठती और बार बार चलती फिरती हैं। उकरूँ बैठकर कांख-ती, खांसती और ज़ोर लगाती हैं। कभी दूसरी स्त्रियां पेट मसलती और दबाती, हैं इससे बड़ी हानियां होती है। ऐसे ही कर्म बच्चेको कभी कभी टेढ़ा कर देते हैं। अंगरेजोंके यहां पलंगपर लिटा कर बच्चा जनाया जाता है। इस विषयमें वैद्य-कका मत है कि लेटकर बच्चा जनानेसे किसी अवयवमें आ-घात नही पहुचता (श० क०) और यही धन्वन्तरिमहाजका भी मत है। बच्चा पैदा होनेमें स्त्रीको दर्द क्यो होता है ? इसका

कारण यह है कि बच्चा झिल्लीको फाड़कर निकलता है । दूसरा कारण यह कि गर्भाशयमें चिपटी हुई खेडी बच्चेके साथ बाहरको खिंचती है। पहले पहल बच्चा होनेवाली स्त्रियोंको विशेप पीडा इस कारण होती है कि उनके अवयवोंका फैलाव कभी नहीं हुआ है । स्त्रीके पास जिस समय दाई पहुँचे उसे पहले हाथके नाखून काट डालना चाहिये । सफेद कपड़े कि जिनमें कुछ भी गन्दगी न हो पहनना चाहिये, हाथमें किसी प्रकारका जेवर जैसे अँगूठी इत्यादि जिससे प्रसूताको चोट लगनेका भय हो, निकाल देना चाहिये । दाईके अतिरिक्त दो चतुर स्त्रियां और भी हों। इनको भी दाईके अनुसार सफाईसे अन्दर जाना चाहिये । प्राय: ऐसी नासमझ और वेहूदी दाइयां या अन्य स्त्रिया प्रसूताको डराती और धमकाती हैं। यह बहुत बुरी बात है ।ऐसा करनेसे बच्चा रुक जाता है । जिस समय दाई प्रसूताके पास पहुँचे उसको सबसे पहले यह देखना चाहिये कि गर्भाशयका मुख खुला है या नहीं । यदि मुख नहीं खुला है तो कोई बात नहीं । अगर मुख खुला है तो बच्चा अवश्य होगा । ऐसी दशामें अंगरेजी रीतिके अनुसार पलंगपर लेटा देना चाहिये । जब स्त्री चित्त लेट जावे तो दोनों कोखोंको टटोलकर यह देखना चाहिये कि बच्चा किस ओर और किस तरह है । यह ईश्वरका नियम है कि हमेशा बच्चेका सर नीचे और पैर ऊपरको होते हैं, परन्तु कभी कभी इसका उलटा भी हो जाता है । कभी बच्चा टेढा होकर आडा हो जाता है । ये कठिन दशाएँ ह ।

जब गर्भाशयमें बच्चेका सर ऊपर होता है, तब पहले पैर निकलते हैं । जब बच्चा टेढा हो जाता है, तो वह पैरके बल न सिर के बल पैदा होता है । ऐसी दसामें चतुर दाइयोंसे काम

लेना चाहिये। पेटमें हाथ डाल कर बच्चेको सीधा कर देना परम कर्तव्य है। दाईको यह ज़रूर जान लेना चाहिये कि बच्चा किस तरह पैदा होगा। जब बच्चा दाहनी बगलमें कुलबुलावे और बाईं कोख भारी हो तो जान लेना चाहिये कि पहले बच्चेका सर निकलेगा। जब बाईं कोख फड़के और उसी ओर बालक कुलबुलाता जान पड़े और दहिनी कोख भारी हो, तो बालकका पैर पहले निकलना समझना चाहिये; परन्तु यह बात याद रहे कि दहिनी कोखकी कुलबुलाहट तो साफ जान पड़ती है; परन्तु बाईं ओरकी बहुत कम। इसलिये जब बाईं ओरकी कुलबुलाहट न जान पड़े तो स्त्रीसे पूछना चाहिये, क्योंकि स्त्रीको ऐसी कुलबुलाहट अच्छी तरह मालूम होती है। इस प्रकार दाईको स्वयं देखकर दहिने बाएँ दोनों ओरकी बाबत स्त्रीसे पूछकर निश्चय कर लेना कर्तव्य है। यदि बालक आड़ा या तिरछा आ गया है तो ऐसी दशामें पहले बच्चेका हाथ निकलेगा। इस मौकेपर यह बतलाना बहुत जरूरी है कि पेटमें पैदा होते समय बच्चा क्यों तिरछा हो जाता है? इस विषयमें वैद्यकका मत है कि अत्यन्त करवट सोने, उलटे लेटने, दौड़ने, तेज चलने, नीचे ऊँचे चढ़ने, गर्भके बन्धनोंके ढीले पड़ने, और भारी चीजके उठानेसे पैदा होते समय बच्चा पेटमें टेढ़ा होता है। (श० श०)

पहले पहल गर्भसे पैर, निकलना भी नियमके विरुद्ध है। जब बालक पेटमें ही मर गया हो, या उसका सर बहुत भारी हो गया हो, या स्त्रीको ऐसा रोग हो गया हो कि जिससे बच्चेकी आकृतिमें अन्तर पड़ गया हो, या बच्चेको अपने स्थानसे हट जाना पड़ा हो, या स्त्रीको सख्त चोट लग जावे कि जिससे उससे उसके कमर ऐसे स्थानमें परिवर्तन हो गया हो, या

पेटमें एकबारगी चोट लगी हो, ऐसी दशाओंमें गर्भगत बालक टेढा हो जाता है। परन्तु बालक टेढा होता कब है? इस विषयमें अनेक मत हैं। कोई यह कहते हैं कि पैदा होते समयमें, कोई यह कहते हैं कि पैदा होने समयके दो तीन मास पहले। प्राय: यह देखा गया है कि जब छ मास तकका गर्भ गिरता है, तब या तो पहले हाथ निकलता है या पैर। कारण इसका यह है कि सातवें महीनेमें बच्चेका सर बोझके कारण नीचे और पैर ऊपरको हो जाते हैं। इससे यह मालूम होता है कि छ महीनेतक गर्भमें बच्चेके रहनेका कोई ढंग ठीक तौरसे नहीं रहता। इसलिये जो समय बच्चेके ऊपर पैर और नीचे सर होनेका है यदि उस समय माताको ऊपर कहे हुए कारणोंमेंसे कुछ हो जाय तो बच्चा पेटमें तिरछा या टेढ़ा हो जाता है। प्रायः ऐसा भी देखा गया है कि जब पैर निकलता है तो यातो दोनों पैर निकलते हैं, या एक ही निकलता है। यह दशा भी एक हाथ निकलनेके समान समझनी चाहिये। किसी किसी के सर और हाथ या सर एक पाँव या चारों हाथ पांव एक साथ निकलते हैं। यह भयङ्कर दसा है। इसका भी वही कारण है जो पहले लिखा गया है।

जब ऐसा हो कि बालक तिरछा पड़ जाय तो उसका सर सीधे रास्ते पर लाना चाहिये। सबसे पहले बालक गर्भागारके दहिने व्यासमें आता है, इससे कुछ दूर हट कर पिछला भाग सामने और मूलाधारकी बाई ओर रहता है। बालककी पीठ माताके पेटके सामने और बाई ओर रहती है। बालकका मुँह और पेट माँकी पीठकी ओर दहिने तरफ़ होता है। इसके बाद बालकका सर गर्भागारके बाएँ व्याससे रहता है। सरका पिछला भाग सामने मूला धारके दहिने तरफ़ रहता है।

बालककी पीठ माताके पेटके सामने और दाहिनी ओर होती है । मुँह और पेट माताकी पीठकी ओर बाएँ तरफ रहता है ।

इसके बाद बच्चेका सर माताके कोखमें आ जाता है और फिर धीरे धीरे बालकका सर ठीक सीधे रास्तेपर आता है और सरका पिछला भाग माताकी बाईं जांघ और मुख दहिनी जांघकी ओर रहता है । ऐसी दशामें सर निकलता है और शरीर कन्धेसे अटक जाता है । दहिना कन्धा सामने मूलाधार-की हड्डीपर जा लगता है और बायाँ कन्धा धीरे धीरे बाहर निकलता है । इसके निकलते ही दहिना कन्धा बाहर निकल आता है और बच्चा पैदा हो जाता है । गर्भाशयके भीतर एक झिल्लीदार बारीक चमड़ेकी थैलीसी होती है जिसमें जल भरा रहता है । इसीमें बालक रहता है । ज्यों ज्यों गर्भाशयका मुख फैलता चला आता है, त्यों त्यों वह थैली कि जिसमें बालक रहता है निकलती आती है । कभी कभी बिना थैली फटे ही थैली सहित बालक उत्पन्न होता है, परन्तु ऐसा कम होता है । प्रकृतिका नियम यही है कि बालकके निकलनेके साथ ही झिल्ली फट जाती है । जब झिल्ली मज़बूत होती है तो उसे फाड़ना पड़ता है, परन्तु जब तक गर्भाशयका मुख अच्छी तरह न फैले, उस समय तक झिल्ली न फाड़ना चाहिये । प्रायः अनजान दाइयाँ गर्भाशयका मुख अच्छी तरह फैलनेके पहले ही झिल्ली फाड़ देती हैं । ऐसी दशा बड़ी भयङ्कर होती है ।

बच्चा जिस समय गर्भसे बाहर होने लगता है उस समय दाईको बहुत बड़ी सावधानी करनी चाहिये । जब बच्चेका सर निकले तो उस समय यह भी देखना चाहिये कि सरके साथ और तो कुछ नहीं निकलता है, क्योंकि प्रायः सरके साथ नाल भी कभी कभी लिपट कर निकलने लगता है । यदि ऐसा

हो तो बच्चेके गलेमेंसे नालको निकाल देना चाहिये। पैदा होते समयमें सरको दहिने हाथसे सँभालना और बाएँ हाथसे गर्भाशयको पेटके ऊपरसे दबाते रहना चाहिये। ऐसा करनेसे बच्चा पैदा होनेमें सहारा लगता है और गर्भाशय सिकुड़ता जाता है। इस प्रकार करनेसे बच्चा सुख पूर्वक स्वयं निकलता चला आवेगा। जब पैदा होनेमें देर लगे तो समझना चाहिये कि बच्चेका सर बड़ा है या कोई विकार उत्पन्न हो गया है।

वैद्यकका मत है कि जब बच्चा पैदा होनेमें देर लगे या न पैदा होता हो, तो ऐसे समयमें काले सर्पकी केंचुलकी धूनी देनी चाहिये। (आ० क०)

एक आचार्य्यका मत है कि गऊका मस्तक जिसमें मांस और चमड़ा न हो केवल हड्डी ही हड्डी हों उसको बच्चा पैदा होनेवाले मकानकी छत्तके ऊपर रखनेसे सुखपूर्वक बच्चा उत्पन्न होता है। (रतिशास्त्र)

नई रोशनीके लोग ऐसे प्रयोगोंको व्यर्थ समझते हैं, परन्तु जहां यह प्रयोग किया गया है सफलता हुई है। प्रायः नासमझ दाइयाँ बच्चेको खींचकर निकालनेकी कोशिश करती हैं। ऐसा करना भयङ्कर है। इससे हाथ पैर उखड़ जानेका भय रहता है।

जब बच्चा पैदा हो जावे तो उस समय बहुत बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिये। सबसे पहले बच्चेके मुँह, आँख कान, नाक और नथुनोंको साफ़ कपड़ेसे खूब स्वच्छ करना और मुखमें अंगुली डालकर झाग कि जो भीतर तक भरा रहता है साफ करके नाल काटना चाहिये। नाल वह चीज़ है कि जिससे गर्भमें बच्चेका पोषण होता है। यह बच्चेकी नाभी में लगा रहता है और पैदा होने पर बच्चेके साथ बाहर निकल

आता है। आजकल नाल काटनेमें हमारे यहां कैसी लापरवाही
की जाती है। बच्चा जनाने और नाल काटनेके लिये ऐसी
बेहूदी दाइयाँ आती हैं कि जिनके कपड़े बदबूदार और सड़े
होते हैं। ऐसी चमारिनें, या दाइयाँ स्यावरमें आनेके लिये
एक ही कपड़ा रखती हैं, जिसे पहन कर ऐसे समयमें वह
हर जगह जाया करती हैं। लौट कर उनको धोती भी नहीं।
हर जगहका खून, आमर इत्यादिकी गन्दगी और झिल्लीका
पानी उसमें लगा करता है। आनेके साथ ही चमारिनें या
दाई स्यावरमें सीधी चली जाती हैं। यह न तो हाथ धोती न
कपड़े उतार कर दूसरे कपडे पहनती हैं। इनके पास एक
औजार नाल काटनेके लिये होता है। इसको सबके यहां ले
जाती हैं। यह कभी और कहीं धोया नहीं जाता। इस औजार-
में हर जाति और अनेक रोगके माता-पितासे उत्पन्न बच्चोंके
काटे हुए नालका खून लगा रहता है। यही कारण है कि आज-
कल बच्चोंके अनेक प्रकारके रोग ऐसे गन्दे औजारसे नाल
काटने पर हो जाते हैं। ऐसी दशामें एक खास तरहका रोग
कि जिसको 'टिटनेस' कहते हैं बच्चोंको हो जाता है। इसको
'धनुस्तम्भ' और 'जमोगा' कहते हैं। इस रोगका असर बच्चेमें
कटे हुए नालपर औजारकी गन्दगी लगनेसे पहुँचता है। इस
रोगमें बच्चा रोता, शरीर एंठता और चल बसता है। याद
रहे कि ऐसे गन्दे औज़ारसे मामूली गन्दगी नहीं पहुंचती।
इसका प्रमाण यह है कि नाल काट कर यदि उस हिस्से पर
कि जो बच्चेके शरीरसे लगा रहता है कोई जहरीली चीज
लगा दी जाय तो बच्चा तुरन्त मर जायगा। कारण इसका
यह है कि नाल और बच्चेके शरीरसे बराबर रक्तका प्रवाह
रहता है। इसी प्रकार कटे हुए नाल पर औज़ारकी गन्दगी

लगनेसे तुरन्त बच्चेमे उस गन्दगीका विष पहुंच जाता है। अतएव नालको एक बहुत अच्छे साफ़ गरम पानीसे खूब धोये हुए तेज चाकूसे काटना चाहिये। बिचारी प्रसूता भी ऐसी गन्दगीकी बदौलत मरनेसे बचती है। इसको अनेक रोग प्रसूत ज्वर सरीखे हो जाते हैं। याद रहे कि ऐसी चमारिनें गन्दी रह कर कभी अन्दर न घुसने पावें। इनके हाथ पांव और शरीर खूब साफ़ करा देना चाहिये। हाथोंकी सबसे ज़्यादा सफाई होनी जरूरी है। नाखून कटवा कर उनके अन्दरका मैल कूचीसे साफ़ करा देना चाहिये। यह भी ध्यान रहे कि चमारिन रजोधर्मसे न हो। नाल कैसे काटना चाहिये यह एक मामूली बात है। नालको नाभीसे चार अंगुल छोड़कर एक रेशमी तागेसे गांठ लगाकर बाधे और दूसरी गांठ पहिली गांठसे दो इञ्च ऊपर लगावे और उन दोनोंके बीचसे नालको तेज चाकू या कैंचीसे काट देना चाहिए।

इस विषयमें भी हमारे देशमें तरह तरहके रिवाज़ हैं। कहीं ठेकरेसे रगड कर, कहीं पतली लकडीसे, कहीं हँसिया, (घास काटनेका औजार) से काटते हैं। इस तरहसे नाल काटना बहुत बुरा है। इससे बच्चेको बहुत बडा दुःख होता है। जहां तक हो नाल काटनेमें जल्दी करनी चाहिये क्योंकि जब-तक नाल नहीं कटता बच्चेको श्वांस लेनेमें बड़ा दुःख होता है। नाल कटते ही बच्चा फुस फुस करके श्वांस लेने लगता है। इसके बाद बच्चेको गरम पानीसे साफ करके नाल पर स्वच्छ और नरम कपड़ा लगा देना चाहिये। बच्चेको गरम पानीसे साफ करनेका मतलब यह है कि जो कुछ उसके बदनमें लगा है वह सब साफ हो जाय। कई जगह तो यह रवाज़ है कि बच्चेको साफ करनेके लिये उसके शरीरमें गरम राख लपेटने

हैं । इससे बड़ी हानि होती है । कभी कभी राख श्वाँस द्वारा पेट, नाक और मस्तकमें पहुँच जाती है । इसलिये गरम पानी-से नहलाना उत्तम है । जब बच्चा साफ हो जाय और यदि जाड़ेके दिन हो तो फलालैनमे और गरमीके दिनोंमें साफ कपडेमें लपेट कर पलंगपर सुला देना चाहिये ।

बच्चा उत्पन्न होनेके बाद स्त्रीको कठिन पीड़ा होती है । प्रायः देखा गया है कि अनजान दाई प्रसूता को खड़ी भी करती है, इस कारण कि खून गिर जावे । ऐसा न करना चाहिये । दाइयाँ गर्भाशयके अन्दर भी हाथ डाल देती हैं । इससे मर्म-स्थान बिगड़ जाता है । बच्चा पैदा होनेके साथ या उससे थोड़ी देर बाद आमर गिरती है । यदि न गिरे तो गिरानेकी कोशिश करनी चाहिये; परन्तु पकड़ कर न खींचा जावे, इससे रक्त ज्यादा गिरता है । पैदा होनेके समयसे लेकर जब तक आमर न गिरे पेट दबाये रहना चाहिये । इससे गर्भाशय सिकुड़ जाता है और आमर जल्दी निकल आती है । ऐसे समयमें बच्चेका रोना जरूरी है । जब बच्चा कष्ट के साथ होता है तब वह घबड़ा जाता है । प्रायः थाली बजानेका रिवाज है इसका कारण यही है कि बाजेसे बच्चा रोवे । बच्चे-का रोना इस बातको बतलाता है कि वह निरोग है । यदि बच्चा न रोवे तो उसे थपथपाना चाहिये । बच्चा पैदा हो जाने-पर प्रसूताको कुछ बेहोशी सी आ जाती है और चेत होनेपर कठिन दर्द होता है । ऐसे दर्द से आमर निकल आती है । यदि न निकले तो पेड़ू धीरे धीरे मसलना उत्तम है । यह बात ध्यान देने योग्य है कि आमर का ज़रा सा भी टुकड़ा गर्भाशयमें न रहने पावे । वही स्त्रियां प्रसव के रोगोंमें अधिक फँसती हैं कि जिनके पेटमे आमरका टुकडा रह जाता है । ऐसी दशामें जब

कि आमर निकल जाती है, गर्भाशयको बहुत काम करना पड़ता है। बच्चा पैदा होनेके बाद गर्भाशय सिकुड़ता है, परन्तु अन्दर खेडी रह जानेसे नहीं सिकुड़ने पाता और बहुतसा रक्त निकल जाता है। जब आमर का टुकड़ा अन्दर रह जाता है तो वह सड़ता है और प्रसूत ज्वर सरीखे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। आमर को तुरन्त गाड़ देना चाहिये, रखे रहनेसे दुर्गंधि फैल जाती है। इसके बाद प्रसूताको तुरन्त साफ कर देना चाहिये और एक पट्टी जो दो गज लम्बी और १२ इञ्च चौड़ी हो, पेटके ऊपर कसकर बांध देना हितकार है। उसकी गांठ दूसरे कपड़ेके लपेटनेसे बगलमें लगा देनी चाहिये और प्रसूता के योनि-मुख पर एक कपड़े की गद्दी बना कर लगा देना जरूरी है। जो पट्टी पेटके ऊपर बँधी है उसमेंसे एक लँगोटी ऐसी बाँध देना चाहिये कि जिससे वह गद्दी न गिरे। ऐसा करनेसे पेट और गर्भाशय दोनों ठीक रहते हैं। यदि लेटे लेटे बच्चा हुआ हो तो उठाने की आवश्यकता नहीं है। यदि बैठा कर हुआ हो तो बांध कर तुरन्त चित्त लेटा देना चाहिये। जितनी देर आरामसे प्रसूता लेटी रहेगी, उतना ही अच्छा है। उठने बैठनेसे रक्त अधिक निकल जाता है। जब गर्भाशयमें आमरका टुकड़ा रह जाता है तब फिरसे दर्द प्रारम्भ होता है। कभी कभी रक्त गर्भाशयमें जम जाता है। ऐसी दशामें हाथ पांवके नख पीले पड़ जाते हैं। इनकी परीक्षा करते रहना जरूरी है। कमसे कम दस दिन प्रसूताको उठने न देना चाहिये। पाखाना पेशाब यदि चारपाईपर ही हो तो हरज नहीं, परन्तु इस बातको हमारे देशमें स्त्रियां कभी स्वीकार न करेंगी। वे पाखाना पेशाबके लिये अवश्य उठेंगी।

छठीके दिन तो उठना और नहाना आवश्यक माना जाता

है, परन्तु अंगरेजोंमे इस बातकी कड़ी मनाही है कि प्रसूता न उठे। कारण इसका यह है कि उठने बैठनेसे गर्भाशय टल जाता है। उसकी बनावटमें कुछ टेढ़ापन आ जाता है। रक्त-स्रावका डर रहता है। इसलिये चार दिनतक तो उठ कर बैठना भी न चाहिये, करवट बदल कर लेटना या तकियेका बदला करना हानिकारक नहीं है।

बच्चा पैदा होते ही गर्भाशय सिकुड़ने लगता है और दस दिनमें आधा रह जाता है। धीरे धीरे घटकर दो महीनेमे ठीक पहले कासा हो जाता है।

जिस दिन बच्चा उत्पन्न हो उस दिन मूत्र आना अच्छा है। यदि दस्त न हो तो कोई हरज नहीं। यहाँ पर यह एक बड़ा भारी प्रश्न है कि प्रसूता को कब और क्या खाना चाहिये? इस बातको प्रायः सबही मानते है कि बच्चा उत्पन्न होनेके दिन तो अन्न कुछ भी न देना चाहिये, क्योंकि दबाव पड़ने और बेचैनी होनेसे इन्द्रियाँ इस योग्य नहीं रहतीं कि वे पचा सकें। इसलिये गरम गरम गायका दूध देना हितकर है। पांच दिन और कोई चीज न देते हुए केवल गायका दूध ही देना हितकर प्रतीत हुआ है। इसके पीछे साबूदाना देते हुए दस दिनके बाद दालका पानी इत्यादि देना उत्तम है, परन्तु हमारे देशमें प्रायः प्रसूता बहुत जल्दी गुण सोंठ खाना प्रारम्भ कर देती है। चाहे वह पचे या न पचे, परन्तु उन्हें खानेसे मत-लब। इसी कारण दस्त आने लगते हैं और अनेक रोग खड़े हो जाते हैं। जब भोजन पचने लगे तो पौष्टिक पदार्थ खानेमे कोई हरज नहीं है। कहीं कहीं प्रसूताको तीन तीन दिन कुछ नहीं देते। यह बहुत बुरी बात है, पानी तो किसी दशामें न देना चाहिये। इसके स्थान पर गरम दूध देना हितकर है।

नहाना अत्यंत बुरा है, परन्तु जाति और समाज में प्राय: छठे दिन नहाने का रिवाज है। सरदीके दिनोंमें इसी नहानेकी बदौलत कितनी ही स्त्रियां कालके मुखमें पहुँचती हैं। अतएव दस दिनतक नहाने, चलने, उठने, बैठने इत्यादिसे बहुत बड़ी हानि पहुँचती हैं। अतएव ऐसी दशाओंमें स्त्रियोंको सावधानी से काम लेना चाहिये।

(६०) जन्म लेनेपर बच्चेको दूध कब पिलाना चाहिये ?

इस विषयमें अनेक रवाज और विचार हैं। सब अपने रवाज और विचारोंको उत्तम समझते हैं। कोई तुरन्त कोई कुछ देर में दूध पिलाना पसन्द करती हैं। कोई आठ आठ घण्टेतक खबर ही नहीं लेतीं। अनेक अनुभवशील विद्वानोंकी राय है कि प्रसूताके साफ़ होने और चारपाई पर लेटनेके पीछे तुरन्त बच्चेको स्तनोंमें लगा देना चाहिये। परन्तु यह याद रहे कि तीन घण्टेसे अधिक इस काममें न लगे जब बच्चा स्तनोंसे लगेगा तो उसे दूध खींचने की बान पड़ेगी। स्तनोंमें जल्दी लगानेका कारण यह है कि बच्चेको यह बतलानेकी जरूरत है कि उसका आहार स्तनोंमें है। बच्चेके पेटमें जो गन्दगी भरी रहती है वह दूध पीनेपर साफ़ हो जाती है। पहले पहलका दूध बच्चेके लिये जुल्लाबका काम करता है।

वैद्यकका मत है कि स्त्रियोंमें दूध पुत्रके छूने, देखने और स्पर्श करने तथा बालकके स्तन पकड़नेसे वीर्य्यकी तरह उतरता है। इसमें मुख्य हेतु माताका स्नेह है। (भा० बा० प्र० १)

जिन स्त्रियोंके पहले पहल बच्चा होता है उनको तीसरे दिन अच्छी तरह दूध उतरने लगता है, परन्तु जो कई बच्चोंकी

माताएँ हो चुकी हैं, उनके प्रायः उसी दिनसे उतर आता है। जब दूध न उतरे तो गाय या बकरीका दूध पिलाना चाहिये। परन्तु दूध न उतरनेपर भी बच्चेको बार बार स्तनोंमें लगाना जरूरी है। इसलिये कि बच्चा अपने दूधका स्थान न भूले और दूधके प्रवाहकी उत्तेजना होती रहे। प्रायः देखा गया है कि स्तनोंमें भरपूर दूध भरा रहनेपर भी बच्चा दूध नहीं पिता। घरके लोग माताकी असावधानी और भूत प्रेतका अनुमान करते हैं, परन्तु कारण कुछ और ही होता है। प्रायः मुँहके अंदर झाग इत्यादिकी सफाई न होनेसे बच्चा छाती नहीं दबा सकता। किसी किसीके जीभके नीचे एक प्रकारकी झिल्ली लगी होती है, उससे बच्चा दूध नही खींच सकता। ऐसी दशामें इन बातों को देख लेना जरूरी है। ऐसी झिल्ली काट देनेसे बच्चा दूध पीने लगता है। जिन स्त्रियोंमे छोटी भिटनी होती है उनसे बच्चे ठीक तौरसे दूध नहीं खींच सकते। भिटनी छोटी पड़ जानेका कारण यह है कि जो स्त्रियां स्तनोंको खूब कस कर रखती हैं तो दबाव के कारण भिटनी छोटी पड़ जाती है। ऐसी दशाओंमें बच्चेको दूध पीना कठिन पड़ जाता है। बहुत सी माताएँ बच्चेको लगातार देरतक दूध पिलाती हैं। ऐसा न होना चाहिये। इससे बच्चा अधिक दूध पी जाता है। ज्यादासे ज्यादा एक बारमे दस मिनटसे अधिक दूध न पिलाना चाहिये।

प्रायः विलासप्रिय माताएँ अपना दूध नही पिलातीं, उनके स्तनोंमें दूध सूख जाता है, नसें कड़ी पड़ जाती हैं। यदि दूसरा बच्चा होनेपर वे पिलाना चाहें तो दूध उतरनेमें बडी कठिनाई पड़ती है। जिन माताओंके बच्चे बार बार मर जाते हैं, उनके दूधमें एक प्रकारका विष होता है। ऐसी माताओंके

बच्चे धायके यहां पाले जाने उचित है। परन्तु पैदा होनेके साथ ही धायका दूध पिलाना ठीक नहीं। कमसे कम एक मास गाय या बकरीका दूध पिलाकर जब कि बच्चेकी पाचन-शक्ति ठीक हो जाय, तब धायका दूध पिलवाना चाहिये। सब से उत्तम तो यह है कि धायका दूध न पिलाया जाय। गाय और बकरी के दूधपर बच्चा अच्छी तरह पाला जा सकाता है।

(६१) बच्चोंकी तौल।

हमारे देशमें इस बातको अशुभ मानते हैं कि पैदा होते ही बच्चेको तौला जावे। परन्तु इसके अतिरिक्त और कोई रीति तौल जाननेकी नहीं है। तौलनेसे बच्चेके स्वास्थ्यका पता ठीक लग सकता है। जो बालक जितना हलका होगा उसको उतना ही रोगी समझना चाहिये। पैदा हुए बच्चेकी तौल ३ सेरसे ५सेर तक जरूर होना चाहिये। कहीं कहीं इससे कुछ अधिक तौलके भी उत्पन्न होते हैं। बच्चा जब पैदा होता है उसमें जितनी तौल उस समय होती है वह दो तीन दिन पीछे नहीं रह जाती। प्रायः ½ सेरकी कमी अवश्य हो जाती है। इसके दो कारण हैं—एक तो यह कि पैदा होनेके बाद बच्चा पाखाना पेशाब करता है, दूसरा यह कि दो तीन दिन ठीक ठीक दूध नहीं मिलता। यहांपर यह शंका होती है कि गर्भमें दूध कहीं मिलता था कि जिससे उसका पालने होता? इस विषय में आचार्य्योंका मत है कि गर्भमे बच्चेका पालन माताके भोजन किये हुए रससे होता है और पैदा होनेके बाद दूधसे पलता है। इसलिये तीसरे दिन बच्चेको तौलना चाहिये। जब बच्चेको दूध मिलने लगता है तो उसकी तौलब ढ़ने लगती है। हमारे देश की अपेक्षा यूरोपमें बच्चोंकी तौल अधिक होती है।

कारण यह है कि गर्भावस्थामे यहाँ माताएँ भोजनपर किञ्चित् विचार नही रखतीं, परन्तु यूरोपकी माताएँ गर्भावस्थामे अच्छे से अच्छा, पुष्ट, बलकारी भोजन करती हैं। उत्पन्न होनेके दिन से बारह वर्षतक बच्चोंकी तौलपर ध्यान रखना चाहिये, क्योंकि प्रारम्भसे ही शरीरकी उन्नति होना आवश्यक है। इस विषयमें विद्वानोंकी रायके अनुसार एक सूची नीचे दी जाती है।

उत्पन्न होनेपर बच्चेकी तौल कमसे कम आयुके अनुसार निम्नलिखित कोकके अनुसार होनी चाहिये।

बच्चेकी आयु	तौल	बच्चेकी आयु	तौल
पैदा होते ही	३ सेर	९ मास	१० सेर
१५ दिन	३½ ,,	१० ,,	१०¼ ,,
१ मास	४ ,,	११ ,,	१०¾ ,,
१½ ,,	४½ ,,	१२ ,,	११ ,,
२ ,,	५ ,,	१¼ वर्ष	१२ ,,
२½ ,,	५¼ ,,	१½ ,,	१२½ ,,
३ ,,	५½ ,,	२ ,,	१३ ,,
३½ ,,	६ ,,	३ ,,	१४¼ ,,
४ ,,	६¼ ,,	४ ,,	१६ ,,
४½ ,,	७ ,,	५ ,,	१७½ ,,
५ ,,	७½ ,,	६ ,,	१८¼ ,,
५½ ,,	८ ,,	७ ,,	२० ,,
६ ,,	८½ ,,	८ ,,	२२ ,,
६½ ,,	८¾ ,,	९ ,,	२५ ,,
७ ,,	९ ,,	१० ,,	२८ ,,
७½ ,,	९¼ ,,	११ ,,	३२ ,,
८ ,,	९½ ,,	१२ ,,	३६ ,,
८½ ,,	९¾ ,,		

कमसे कम इतना वजन बच्चोंमें होना आवश्यक है । यदि इससे कम हो तो वे निरोग नहीं कहे जा सकते ।

इन दिनोंमें माताओंको अनेक पुष्ट पदार्थ खाने चाहियें; क्योंकि जो माताएँ खाने पीनेपर ध्यान नहीं रखतीं उनके बच्चे दुबले पतले और कम वजनके बने रहते हैं । बच्चा जब तक दूधके ही आसरे रहता है उस समयतक माताके आहारपर ही उसका जीवन होता है । इसलिये माता जैसा भोजन करेंगी उसीके अनुसार बच्चेका वजन बढ़ेगा । जब बचपनमें वजनकी कमी रह जाती है तो वह पूरी नहीं होती । यदि होती भी है तो वर्षों लगते हैं । इसलिये बच्चोंको प्रारम्भसे ही बलवान बनाना हमारा कर्तव्य है ।

(६२) धाय कैसी होनी चाहिये ?

बच्चोंकी जीवन-यात्राके लिये यह एक बड़ा प्रश्न है कि धाय कैसी हो ? प्राय. माताएँ स्तनोंमें दूध न होने या बच्चा पैदा होकर बारम्बार मर जाने या अपने स्तनोंको सुन्दर सुडौल बनाए रखनेके कारण दूध नहीं पिलातीं । ऐसी दशामें बच्चे गाय, भैंस और बकरियों या धायोंके दूधपर पाले जाते हैं । धाय कैसी होनी चाहिये ? यह एक बडे महत्वका प्रश्न है ।

वैद्यकशास्त्रके एक विद्वान्ने कहा है कि धायको माताके समान होना चाहिये । (ग० क०)

इसका तात्पर्य्य यह है कि जो कार्य्य माताका बालकके प्रति है वही धायका भी है । अतएव धायका सर्व-गुण-संपन्न होना आवश्यक है । विद्वानोंने इस विषयका अनेक प्रकारसे प्रतिपादन किया है ।

वैद्यकका मत ।

१. धाय अपने जातिकी जवान हो, उदंड रोगी न हो, सब अंगोंसे युक्त हो, कुरूप न हो, किसी प्रकारका व्यसन न रखती हुई खोटी न हो, अपने देशकी हो, तुच्छ स्वभाववाली न हो, नीच कर्मोंके करनेवाली नीच जातिकी न हो, जिसके सन्तान हो और निरोग रहती हो, गोदमें पुत्र हो, बहुत दूधवाली बिना समयके न सोनेवाली, जो जातिके बाहर न हो, अच्छे कामोंकी करनेवाली, पवित्र हो अपवित्रतासे घृणा करनेवाली, जिसके स्तन अच्छे और उत्तम हो, स्तन न बहुत ऊँचे न बहुत लम्बे, न बहुत छोटे हों न पीपलके पत्तेके समान, स्तनोंका अगला हिस्सा पतला हो और बिना परिश्रमके पीनेमें दूध आ जावे। ऐसे स्तनोंकी गुणयुक्त धाय होनी चाहिये । (च० श० अ० ८ श्लो० १०५ व १०६)

२. धाय अपने वर्णके अनुसार जैसे ब्राह्मणको ब्राह्मणी क्षत्रियको क्षत्रिया, वैश्यको वैश्या और शूद्रको शूद्री होनी चाहिये। वर्ण शब्दसे यह बात भी कही जा सकती है कि धाय माताके रंगके अनुसार हो, औसत दर्जेके डील-डौल की, न बहुत लम्बी न ठिगनी, मध्यम अवस्थावाली अर्थात् सोलह वर्षसे२५ वर्षतककी निरोग, शीलस्वभाववाली चपल और लोलुप अर्थात् जिसका चित्त रूक न सके, अत्यन्त दुबली या अत्यन्त मोटी न हो, जिसका शुद्ध दूध हो, जिसके होंठ,लम्बे न हों, स्तन ऊँचे और लम्बे न हो, जिसका शरीर कम बेशी न हो, जैसे छ अंगुली होना या एक ही आँख इत्यादि, जिसमें कोई दुर्व्यसन (ऐब) न हो, बालकपर प्रेम रखनेवाली,

जिसके बालक जीते रहते हों, दूधवाली, नीच कर्म न करनेवाली, अच्छे कुलकी, बहुतेरे गुणोंसे युक्त श्यामा अथवा सुन्दर रूपवती होनी चाहिये। ऐसी धाय बालकको निरोग रखती हुई बलको बढाती है।

(सु० शा० अ० १० श्लो० ३८ व ३९)

३ जवान, सुन्दर, सुशील, मधुरभाषिणी, नीरोग जिसमें सुहृदयताका प्राकृतिक गुण हो, चतुर, शृङ्गारप्रिय, सुडौल शरीरवाली और उत्तम विचारकी पढी लिखी धाय होनी चाहिये। (शा० क०)

ऐसे गुणोंसे युक्त धाय के होनेका तात्पर्य्य यह है कि जिस प्रकार माताके दूधका असर बालकोंपर होता है इसी प्रकार धायके दूधका भी होता है। क्रोध करने, बुरे कामोंमें फँसेरहने और निन्दनीय बातोंके विचार करनेसे दूध भ्रष्ट हो जाता है। अतएव खूब परीक्षा करके धाय रखनी चाहिये।

(६३) बच्चा उत्पन्न होनेके कितने दिन बाद संयोग करना चाहिये ?

यह बड़े महत्वका प्रश्न है। लोग इसपर बहुत कम ध्यान देते हैं। जिनको स्त्री और बच्चेके जीवनका विचार है वे तो कुछ ध्यान भी देते हैं। परन्तु जो विषय-वासनाके प्रेमी हैं, उन्हें कुछ विचार नहीं। इसमें कई मत हैं।

१. वैद्यकका मत।

१ बच्चा होनेके ऐसे समयतक जब तक कि वह दूध पीता रहे, संयोग न करना चाहिये। (शा० क०)

२ जब तक बच्चा अच्छी तरह अन्न न खाने लगे संयोग न करना चाहिये। (रतिशास्त्र)

२. धर्मशास्त्रका मत।

१. दांत निकलनेके बद संयोग करना चाहिये।

(अत्रिस्मृति १६२)

२. बच्चेके दूध पीनेके समयतक संयोगा न होना चाहिये।

(प्रा० व०)

इस विषयमें प्रायः सबका मत एक ही सा है। बच्चा प्रायः दो साल दूध पीता है। इसके बाद अन्न खाने लगता है। यदि बच्चेके दूध पीनेके समय संयोग किया जाय तो दूध बिगड़ जानेका भय रहता है। एक विद्वान की राय है कि बच्चा पैदा होनेके एक सालतक भीतरी अवयव पुष्ट होते हैं (श० क०)

इसलिये दो वर्ष बच्चेको दूध पिलाकर जब वह अन्न खाने लगे इसके बाद संयोग होना चाहिये, नहीं तो बच्चे और माता दोनोंको बहुत बड़ी हानि होती है।

(६४) बच्चोंका मल मूत्र और नींद।

बच्चोंकी स्वास्थ्य-परीक्षा करनेके लिये तीन बातें देखनी आवश्यक हैं। मल, मूत्र और नींद। जब ये बातें ठीक हों, तो बच्चोंको निरोग समझना चाहिये। इन बातोंपर पैदा होते समयसे ही ध्यान रखना आवश्यक है। सबसे पहले बच्चेके पेशाबको देखना जरूरी है। प्रायः दूध पीनेके बाद पेशाब होता है। जब पेशाबके मुकामपर मैल लगा हो, तो बड़ा कष्ट होता है। उस समय उसको पेशाबका वेग सहना पड़ता है। इस-

लिये यदि मूत्र न हो तो सबसे पहले मैल देखना चाहिये। यदि मैल न लगा हो और पेशाब न हो, तो पेशाबके स्थानको गरम पानीसे धोना चाहिये, इसलिये, कि थोड़ी गरमी पहुँचे। यदि चौबीस घंटेतक पेशाब न हो, तो रोग समझना चाहिये। पेशाब होते ही यह देखना चाहिये कि वह कैसा होता है। पहला पेशाब कुछ रंगतदार होगा, दूध पीनेपर कुछ सफेदी आ जावेगी। इसके साथ ही साथ इसपर भी ध्यान देना जरूरी है कि पेशाब करते समयमें बच्चा काँपता तो नहीं और कष्टके साथ तो पेशाब नहीं होता। यदि ऐसा है तो अवश्य रोग है और वह रोग बच्चेको उसके माता-पितासे मिला है।

पेशाबकी भांति पाखानेको भी देखना आवश्यक है। पैदा होनेके दिन ही बच्चेको पाखाना होना चाहिये। पहले और दूसरे दिन पाखना काले रंगका होता है। दूध पीने पर रंगत बदल जाती है। यदि पाखना न हो तो धीरे धीरे पेट मसलना उत्तम है। यदि पाखानेमें फुटकी सी हों, तो अवश्य दूधका विकार है कि जो ठीक ठीक नहीं पचता। प्रायः बच्चोंको पैदा होते ही कब्ज भी होता है और यह रोग माता पितासे मिलता है ऐसी दशामें गायका दूध देना हितकारी है। बच्चोंको समयपर पाखाना जानेकी बान डालनी चाहिये। माताओंको यह विचार रहता है कि जितनी बार बच्चा पाखाना जायगा उतना ही पेट साफ़ रहेगा। इस कारण वह बारबार पाखाना बैठाया करती हैं, यह ठीक नहीं। दिन रातमें तीन बार प्रातःकाल, दोपहर और शामको पाखाना जानेकी बान डालनी चाहिये। यदि इन समयोंपर बच्चा पाखाने न भी जाय तो बैठा देना चाहिये। ऐसा करनेसे बान पड जायगी। जब बच्चा

साल भरका हो जाय तो दोपहरको पाखाना जानेकी बान छुडा देनी चाहिये। बहुत सी अज्ञान माताएँ दूध पिला कर पाखाना कराती हैं, पर यह अनुचित है। इससे कुछ खा कर पाखाना जानेकी बान पड़ जाती है कि जिससे मेदा खराब हो जाता है। इसलिये पाखाना होनेके पीछे दूध देना चाहिये।

पैदा होनेके बाद बच्चोको एक, खास तरहकी नींद आती है। पहलेके चार दिनोंमें वह खूब सोता है। इसमें दो भेद हैं। जो बच्चा बहुत कष्टके साथ उत्पन्न होता है वह अचेत होकर सोता है। और वे बच्चे कि जो साधारण रीतिसे उत्पन्न होते हैं अचेत होकर नहीं सोते। इसका कारण यह है कि जो बच्चा कष्टके साथ पैदा होता है उसको बड़ी थकावट आजाती है। जब कि बच्चा अचेत होकर सोता है, माताएँ तरह तरहके विचार उत्पन्न करती हैं। सबसे पहले इनको भूत प्रेतका खयाल आता है।

जो बच्चा दस मासतक कोठरीमें बन्द रह कर पैदा हुआ है, वह तुरन्त ही कैसे खेल सकता है। पैदा होते समयमें जिसके शरीरको अनेक प्रकारकी असावधानियोंसे कष्ट सहना पडा है, वह तुरन्त ही माताके गोदका खिलौना कैसे बन सकता है? उसका तो भूख प्यासके समय ही जागना बहुत है। जो बच्चे स्वाथ्य हैं वे कम रोते और बहुत सोते हैं, परन्तु रोगी बच्चे बहुत रोते और कम सोते हैं। नीचेकी सूचीसे ज्ञान होगा कि बच्चेको कितना सोना चाहिये।

अवस्था	चौवीस घंटे में	दिन में कितना	रात में कितना
पहला दिन	२० से २२ घंटेतक	०	०
एक सप्ताहतक	२० से २१ ,,	०	०
एक मासतक	१८ से २० ,,	८ से १० घंटे तक	१० घंटे
चार मासतक	१६ से १८ ,,	६ से ८ घंटे तक	१० घंटे
छ मासतक	१५ से १७ ,,	५ से ७ ,,	१० ,,
नौ मासतक	१४ से १६ ,,	४ से ६ ,,	१० ,,
एक वर्षतक	१३ से १५ ,,	४ से ६ ,,	९ ,,
सवा वर्षतक	१२ से १४ ,,	३ से ५ ,,	९ ,,
डेढ़ वर्षतक	११ से १३ ,,	२ से ४ ,,	९ ,,
दो वर्षतक	१० से १२ ,,	१ से ३ ,,	९ ,,
तीन वर्षतक	१० से ११ ,,	१ से २ ,,	९ ,,
चारसे पांच वर्षतक	१० घंटे	०	१० ,,
छसे आठ वर्षतक	९½ ,,	०	९½ ,,
आठसे दस वर्षतक	८½ ,,	०	८½ ,,
ग्यारहसे पन्द्रह वर्षतक	८ ,,	०	८ ,,

रोगकी दशामें बच्चे बहुत कम सोते हैं। परन्तु अपने आरामके वास्ते माताएँ अफीम इत्यादि खिला देती हैं। यह बड़ा अनुचित व्यवहार है। इससे कब्ज सरीखे अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतएव बच्चोंको कोई भी। मादक पदार्थ कभी न देना चाहिये।

(६५) बच्चोंको किस तरह और कितना दूध पिलाना चाहिये ?

बच्चोंको दूध पिलाना कोई सरल काम नहीं है। वें माताएँ कि जिनको पहले पहल बच्चा होता है, उनको दूध पिलानेका ढंग ही नहीं होता। इनकी तो बात ही क्या ? वे स्त्रियाँ कि जो कई बच्चों की माता हो चुकी हैं, उन्हे भी प्रायः यह ज्ञान नहीं होता। ऐसी माताएँ बड़ी असावधानी करती हैं। जब ये दूध पिलाती हैं तो बच्चे के मुखमें स्तनका अगला भाग ठीकरीतिसे नहीं जाता। प्रायः नाकपर जा लगता है। इससे श्वांस घुटने लगती हे और बच्चा स्तन छोड़ देता है। ऐसी दशामें स्तनोंमें दूध होनेसे माताको कष्ट होता है। प्रायः माताएँ अपने बदन-को सुडौल रखनेके लिये बच्चोंको थोड़ा दूध पिलाती हैं और यह बहाना करती हैं जि दूध उतरता ही नहीं। ऐसे बच्चोंको गाय और बकरीका दूध पिलाया जाता है। परन्तु ऐसा बहाना बड़ी हानी चहुँचाता है। इसमें सन्देह नहीं कि माताओंको अपने स्तनोंकी रक्षा जरूर करनी चाहिये, परन्तु ऐसी रक्षा किस काम की कि जिसमें हानि हो ? प्रायः ऐसा भी होता है कि सर मार मार कर गाय भैंसोंके बच्चोंकी तरहसे बालक दूध पीते हैं। ऐसी दशामें छातीकी नसोंमें बड़ा धक्का पहुँचता है। अतएव ऐसी बान छुड़ा देनी चाहिये। मारने और चिल्लानेसे बान नहीं छूटती। जब ऐसा हो ता बच्चेको स्तनोंसे अलगकरके थोड़ी देर दूध नहीं पिलाना चाहिये। इस प्रकार बान छूट जायगी। दूध पिलानेमें ढीली छतियोंवाली माताको कुछ दुःख होता है पानीमें फिटकरी घोलकर दिनमे चार पाँच बार धो डालनेसे छाती कड़ी बनी रहती है।

प्राय. देखा गया है कि बच्चा दूध पी चुका है। छातियोंमें दूध लगा है। मक्खियाँ भिन्न भिन्न करके छातियोंसे चिपटी आती हैं। बच्चा आया और फिर पीने लगा। इस कारण बच्चोंमें अनेक रोग हो जाते हैं। अतएव प्रत्येक माताको चाहिये कि दूध पिलानेके पहले और पीछे वह जरूर स्तनोंको धोडाले।

प्रायः माताओंको एक ही छाती पिलानेकी बान पड़ जाती है। ऐसा न होना चाहिये बराबर दोनों छातियाँ पिलाना चाहिये। ऐसा करनेसे एक छाती बड़ी और एक छोटी हो जाती है एकसे अधिक दूध आता है और दूसरेसे कम। कभी कभी ऐसा भी होता है कि एक छाती से दूधका आना बिलकुल बन्द हो जाता है। ऐसा भी देखा गया है कि जो स्तन बच्चा अधिक पीता है खिंचावके कारण उसमें सूजन आ जाती है और पक भी जाता है अतएव दोनों स्तन बराबर पिलाना चाहिये।

जिस प्रकार अन्न खानेवालोंको बार बारका भोजन हानि पहुँचाता है इसी प्रकार बच्चोंको बार बारका पीया हुआ दूध नुकसान करता है। अतएव बचपनसे ही नियम के अनुसार दूध पीनेकी बान डालनी चाहिये। प्रायः माताएँ बिना भूख भी बच्चोंको दूध पिला देती हैं, जब जरा बच्चा रोया फौरन दूध पिला दिया। यह इस बातपर पूरा विश्वास रखती हैं कि बच्चा उसी समय रोता है जब कि वह भूखा होता है। इस अंधपरम्पराको माननेवाली सौमें अट्ठानबे स्त्रियाँ हमारे देशमें मौजूद हैं। कैसे दूध पिलाना चाहिये ? हमारे देशमें इसका कोई नियम नहीं है। खड़े होकर, लेट कर, करवट लेकर, चित्त लेट कर, चलते फिरते जैसा मौका लगा पिला दिया। इनको तो बच्चेके पेटमें दूध पहुँचानेसे काम है !

एक विद्वान्‌की राय है कि बच्चेको करवट सुला कर दूध पिलानेसे बच्चेके कानमें दूध आ जाता है। इसी कारण प्रायः बच्चे बहरे हो जाते हैं। कान बहा करता है। अतएव माताओंको चाहिये कि दूध पिलाती समय पैर पसार कर या कुरसी मोढ़ेपर बैठकर बच्चेका सर हाथमें ले और मुँह ठीक स्तनके सामने लावें और दूसरे हाथसे स्तनका अगला हिस्सा मुँहमें लगा देवें। बच्चा आरामसे दूध पी लेगा और उसको किसी प्रकारकी बाधा न होगी। माताओंको यह अन्दाज नहीं आता कि हमने कितना दूध पिलाया। जबतक बच्चा छाती नहीं छोड़ता पिलाए चली जाती हैं। बच्चेको भी इतना ज्ञान नही कि मैंने कितना दूध पीया। न माताको अन्दाज न बच्चेको ज्ञान, यही रोगका कारण है। सबल और निर्बल बच्चे होते ही हैं। इनके साथ एकसा व्यहार नही होना चाहिये। जितना दूध सबल बच्चा पी सकता है उतना निर्बल नहीं पी सकता। इसलियेसबल बच्चेको दस मिनट और निर्बलको आठ मिनट हर बार दूध पिलाना चाहिये। सबल और निर्बल बच्चोंको दिन रातमें के बार दूध पिलाना चाहिये यह एक बड़ा गंभीर प्रश्न है। इस विषयमें विद्वानोंके मातानुसार एक सूची नीचे दी जाती है। (यह माताके दूध की सूची है)

अवस्था	दिन रातमें कितने वार पिलाना चाहिये		दिन रातमें सबलको के वार पिलाना चा०		दिन रातमें निर्बलको कै वार पिलाना चा०	
	सबल	निर्बल	सबल	निर्बल	सबल	निर्बल
पहला दिन	४ वार	३ वार	३ वार	१ वार	२ वार	१ वार
दूसरा दिन	६ ,,	५ ,,	५ ,,	१ ,,	३ ,,	२ ,,
३ दिनसे २० दिन तक	१० ,,	८ ,,	७ ,,	३ ,,	६ ,,	२ ,,
तीसरे सप्ताहसे १२ सप्ताहतक	८ ,,	७ ,,	६ ,,	२ ,,	५ ,,	२ ,,
३ माससे ५ मासतक	७ ,,	६ ,,	५ ,,	२ ,,	४ ,,	२ ,,
६ माससे १२ मासतक	६ ,,	५ ,,	४ ,,	२ ,,	३ ,,	२ ,,
१३ माससे १८ मासतक	५ ,,	५ ,,	३ ,,	२ ,,	३ ,,	२ ,,

डेढ़ वर्षके पीछे बच्चेको माताका दूध पिलाना ही नहीं चाहिये। प्रायः वे बच्चे कि जिनको जन्मसे ही माताका दूध नहीं मिलता उनका पोषण गाय अथवा बकरीके दूध से होता है। इसमें भी स्त्रियाँ अनेक असावधानी करती हैं। इनका यह खयाल होता है कि जितना अधिक बच्चा दूध पीयेगा उतनाही पुष्ट होगा। यह एक भ्रम है। ऐसा करनेसे अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। गाय अथवा बकरीका दूध कितना और कै बार पिलाना चाहिये, विद्वानोंके मतानुसार इसकी भी एक सूची नीचे दी जाती है। यहाँ सूर्य्य निकलने से अस्तहोने तक दिन और शामसे आगे रातका समय जानना चाहिये।

अवस्था	सबल बच्चेको २४ घंटेमें कै बार और कितना दूध पिलाना चाहिये		
	दिनमें कै बार	रातमेंकै बार	कितना दूध दिन रातमें
पहला दिन	३ बार	१ बार	४ छटांक
दूसरा दिन	३ "	१ "	४ "
३ दिनसे १० दिनतक	४ "	२ "	६ "
११ दिनसे २० दिनतक	५ "	३ "	८ "
२१ दिनसे ३० दिनतक	६ "	३ "	६ "
१ माससे १॥ मासतक	६ "	३ "	१२ "
१॥ माससे २ मासतक	८ "	२ "	१४ "
तीसरे महीनेसे पाँचवेंतक	८ "	२ "	१॥ "
छठे और सातवें मासमें	८ "	२ "	१॥। "
आठवें और नवें मासमें	८ "	२ "	२ "
दसवेंऔर ग्यारहवेंमासमें	८ "	२ "	२॥ "
बारहवें महीनेमें	८ "	२ "	२॥। "
तेरहवेंसे १८ मासतक	८ "	२ "	३ "

अवस्था	निर्बल बच्चेको २४ घंटेमें कै बार और कितना दूध पिलाना चाहिये		
	दिनमें कै बार	रातमें कै बार	कितना दूध दिन रातमें
पहला दिन	२ बार	१ बार	३ छटांक
दूसरा दिन	२ ”	१ ”	३ ”
३ दिनसे १० दिनतक	३ ”	२ ”	५ ”
११ दिनसे २० दिनतक	५ ”	२ ”	७ ”
२१ दिनसे ३० दिनतक	५ ”	३ ”	८ ”
१ माससे १॥ मासतक	६ ”	३ ”	१० ”
१॥ माससे २ मासतक	६ ”	३ ”	१२ ”
तीसरे महीनेसे पांचवेंतक	७ ”	३ ”	१। सेर
छठे और सातवें मासमें	७ ”	३ ”	१॥ ”
आठवें और सातवेंमासमें	७ ”	३ ”	१॥। ”
दसवेंऔरग्यारहवेंमासमें	७ ”	३ ”	२। ”
बारहवें महीनेमें	७ ”	३ ”	२॥ ”
बारहवेंसे १८ मासतक	७ ”	३ ”	२॥। ”

सबल और निर्बलसे यह मतलब नहीं है कि अत्यन्त सबल और अत्यन्त निर्बल, इससे यह अर्थ लेना चाहिये कि अच्छे शरीरवाला और निर्बल वह कि जो अच्छेसे कुछ निर्बल हो। जो बच्चे अत्यन्त दुर्बल हों उनकी योग्यता के अनुसार व्यवहार करना चाहिये। छ मासके बाद बच्चोंको कुछ थोड़ा थोडा अन्न देना चाहिये। इस प्रकार बच्चेका पोषण करना भविष्यके लिये अच्छा है।

(६६) बच्चोंकी ज्ञानेन्द्रिय।

जिस प्रकार हमारी ज्ञानेन्द्रिय प्रबल होती है, इस प्रकार तुरन्तके पैदा हुए बच्चेकी नहीं होती। पैदा होनेसे चौबीस घंटेतक बच्चोंको कुछ नहीं सुनाई देता। इसके बाद थोड़ाथोड़ा सुनने लगते हैं। कारण यह कि बच्चेका मस्तक अत्यन्त कोमल होता है, इसलिये वह धीरे २ अपना काम करता है। इसीसे भारी शब्द होनेपर बच्चे चौंक उठते हैं। चार महीनेके बालकमे मामूली आवाज सुननेकी ताकत आ जाती है। इसी तरह बोलनेके भी अनेक भेद हैं। कोई देरमे और कोई जल्द बोलने लगता है। लड़कोंसे लड़कियाँ जल्द बोलती हैं। प्रायः दो वर्षकी अवस्थातक अच्छी तरह पता नहीं लग सकता कि बच्चा कैसा बोलेगा? यदि दो वर्षके बाद बच्चा बोलनेमें उन्नति न करे तो समझना चाहिये कि इसके मस्तकमें कुछ दोष है। होशियार बच्चोंका मस्तक कुछ बड़ा होता है। पैदा होनेपर सर १३ और १४ इञ्च गोल होना चाहिये, यदि छोटा हो तो बच्चेको बुद्धि-हीन समझना चाहिये; क्योंकि बुद्धि मस्तकपर ही निर्भर है। इसलिये मस्तकका वह भाग जहाँ बुद्धिका स्थान है ऐसे बच्चोंमें बहुत छोटा होता है। इसी प्रकार रस उत्पन्न होते ही बच्चेको रसका ज्ञान होता है और स्वादको पहचानने लगता है। सूँघने-का ज्ञान भी उसी समय होता है जबकि घ्राणेन्द्रिय कुछ प्रबल पड़ती है। यह प्रायः डेढ़ सालके बाद होता है। इसी प्रकार और इन्द्रियाँ अपने समयपर विकास पाती हैं।

(६७) स्त्री और पशुओंके दूधका अन्तर।

जबतक बच्चा अन्न न खाने लगे उस समयतक उसका जीवन दूधपर ही निर्भर रहता है। इसलिये ईश्वरने स्त्री, गाय,

भैंस और बकरीके दूधको आहारके सारे अंशोंसे युक्त बनाया है, इस कारण माताका दूध न मिलनेपर गाय भैंस और बकरीका दूध बनाकर पिलानेमें बच्चोंको कुछ हानि नहीं होती ।

दूधके पृथक पृथक अंशोंकी सूची ।

अंश	१००भाग दूध स्त्रीका दूध		१००भाग दूध गायका दूध		१००भाग दूध भैंसका दूध		१००भाग दूध बकरीका दूध	
घीका अंश	४	भाग	४	भाग	७	भाग	४	भाग
खांड या निशास्तेका अंश	७	”	४½	”	४	”	४¾	”
मांसका अंश	१½	”	३½	”	४	”	३¾	”
नमकका अंश	¼	”	¼	”	¾	”	¼	”
पानीका अंश	८७	”	८७	”	८४	”	८७	”

यह मामूली तौरसे रहनेवाली स्त्रियों और गाय भैंसो की सूची है। उत्तम और मध्यम आहार होनेपर अंशोंके प्रमाणमें कम व वेश समझना चाहिये।

(१) घीका अंश। इससे चरवी वनती है--गरमी उत्पन्न होती है। वदन मोटा होता है वजन और दिमागकी ताकत वढ़ती है। हड्डियां पुष्ट होती हैं। शरीर मुलायम और चिकना होता है।

(२) मेदा (निशास्ते) का अंश। इससे गरमी उत्पन्न होती है। शरीर मोटा होता है। वल उत्पन्न होता है। मांस और चरवीके काममें सहायता पहुँचती है।

(३) मांसका अंश। इससे मांस वनता है—वदन मोटा पड़ता है और तौल वढ़ती है।

(४) नमकका अंश। इससे खून और हड्डियां वनती हैं। जो अंश नमकका खूनमे मिलनेसे रह जाता है वह पेशावमे मिलकर निकल जाता है। इसी कारण पेशाव खारी होता है।

(५) पानीका अंश। इसका काम यह है कि यह सवको पचाकर अपना अपना काम करनेमे सहायता दे और हरएकको उसके स्थानमे पहुंचावे। वहुतेरे यह मानते हैं कि माता और गायोंका दूध दूषित होता ही नहीं, यह एक खासी भूल है। अनेक कारणोंसे दूध दूषित होकर हाँनि पहुंचती है। अतएव भोजन इत्यादिमें माताओंको अत्यन्त सावधानी रखनी चाहिये, क्योंकि दूध दूषित होनेका मूल कारण आहार-विहारकी असावधानी ही है।

(६८) दूध कैसे बिगड़ता है ?

दूध वह पदार्थ है कि जिसपर बच्चेका जीवन निर्भर है यह

अनेक प्रकारकी असावधानियोंसे दूषित हो जाता है और माताओंको ज़रा भी पता नहीं चलता। बच्चोंके रोगी होनेपर चिकित्सकोंकी ज़रा भी दृष्टि दूधपर नहीं जाती। अनेक विद्वानोंकी राय है कि दूधके बिगड़नेसे ही बच्चोंमें अधिकांश रोग उत्पन्न होते हैं, जिसके अनेक कारण हैं।

१. वैद्यकका मत ।

१. माता अथवा धायके भारी आहार और दूषित व्यवहार से शरीरमें दोष उत्पन्न होकर दूध बिगाड़ देते हैं। (श० क०)

२. अतिमैथुन, शोक, चिन्ता, भय और क्रोधसे। (श० क०)

३. माताके अनेक प्रकारके रोगोंसे। (श० क०)

४. दूधमें, घी, खांड़, मांस और नमकका अंश कम हो जानेसे। ऐसा उस समयमें होता है जब कि स्त्री घी दूध इत्यादि पौष्टिक पदार्थ न खावे। (रतिशास्त्र)

५. पैंतीस वर्षकी अवस्थाके ऊपरवाली माताका दूध हलका पड़ जाता है।

गर्भवती स्त्रीका दूध तीन मासके बाद बिगड़ जाता है। (श० क०)

७. अधिक मेहनत करनेसे दूधमें मांसका अंश कम हो जाता है। (रतिशास्त्र)

८. बुरी औषधियोंके खानेसे दूधके सारे अंश दूषित हो जाते हैं।

९. आहार और विहारसे वात, पित्त और कफ अलग अलग या एक साथ बिगड़ कर दोष उत्पन्न कर देते हैं। (श० क०)

इस प्रकारसे बिगड़े हुए दूधमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. यदि दूधका रंग काला अथवा लाल रंगका कसैला जिसमें कुछ वास आती हो, अत्यंत रूखा, तरल, झाग-दार हलका जिसमे बच्चेको तृप्त करनेकी शक्ति न हो, दुबला करनेवाला, जिसके पीनेसे वायु उत्पन्न हो इस प्रकारका दूध वात-दोषसे दूपित होता है।

(च० श० अ० ८ श्लो० १०८)

२. यदि दूधका रंग काला, नीला, पीला और तांबेके रंगका कडुआ खट्टा या चरपरा हो और गंध मुरदे या रुधिर-किसी हो, अत्यन्त गरम पित्त-रोग उत्पन्न करनेवाला, ऐसा दूध पित्त-दोषसे दूषित होता है।

(च० श० अ० ८ श्लो० १०९)

३. यदि दूधका रंग अत्यन्त सफेद अत्यन्त मीठा और नमकीन हो जिसमें घी, तेल, वसा और मज्जाके समान गंध तंतु युक्त अथवा पानीमें डालनेसे डूब जावे जिससे कफ़ पैदा हो, ऐसा दूध कफ़से दूषित होता है।

(च० श० अ० ८ श्लो० ११०

४. यदि वात, पित्त और कफ़ तीनों दोषके लक्षण मिले तो सन्निपातसे दूषित और यदि दो प्रकारके दूषित लक्षण मिले तो द्विदोषसे दूषित जानना चाहिये। (भा० वा०)

इस प्रकारके दूषित दूध पीनेसे बच्चोंमें अनेक लक्षण प्रगट होते हैं।

१. शरीरकी तौलका कम होना नींद कम आना, उलटी होना, शरीरका दुबलापन, बलगम पैदा होना, झागदार हरे दस्त आना, आंतोंमें बिगाड़, अतिसार, दस्तमे फटा दूध निकलना, पाचन-शक्तिका बिगाड़, बराबर के दस्त और हिचकीका होना इत्यादि।

ऐसे लक्षणोंसे बच्चेको रोगी समझना चाहिये। बच्चेका वजन कम होनेकी जांच तौलसे हो सकती है। जब बिगड़े हुए दूधका असर वजन पर पड़ता है तब कुछ थोड़ा सा ज्वर जरूर रहता है। मोटी ताजी स्त्रियोंमें प्रायः गाढ़ा दूध होता है। इनके स्तन अत्यन्त बड़े और दूधसे भरे रहते हैं। दूध गाढ़ा क्यों हो जाता है? इसका कारण तरकारी, चर्बी बढ़ानेवाले पुष्ट पदार्थोंका सेवन है। इसी प्रकार कम और पतले दूधका विकार भी होता है। गाढ़ा दूध होनेपर माताको हलका भोजन करना चाहिये। ऐसी दशामें दूधका सेवन उत्तम है। यदि पतला दूध हो तो पौष्टिक पदार्थ बढ़ा देना चाहिये। बहुत दिनोंतक पिलानेसे भी अनेक रोग हो जाते है। इसीलिये ज्यादासे ज्यादा विद्वानोंने डेढ़ वर्षतक पिलाना उत्तम माना है। ज्यादा दिन दूध पिलानेसे सबसे बड़ी हानी यह होती है कि जितने दिनों बच्चा दूध पीवेगा उतनी ही देर रजस्वला होनेमें होगी। इस कारण कि भोजनके जिस अंशसे दूध बनता है; यदि दूध बच्चा न पीवे तो वह अंश रज बननेमें सहाय होता है। यही कारण है कि दूध पिलानेवाली माताओंके रज कुछ कम निकलता है। स्त्रियोंको हर समय यह विचार रखना चाहिये कि वे ऐसी असावधानियोंसे बचे कि जिनसे दूध दूषित हो जाता है। अपना दूध निकाल कर स्वयं परीक्षा कर लेनी चाहिये!

जो दूध पानीमें डालनेसे मिल जावे; जिसका रंग कुछेक पीलापन लिये हो; जो जलमें धारोंको न छोड़े हलका और न जमनेवाला ऐसा दूध शुद्ध होता है।

(ग० क०)

ऐसी दशामें बड़ी कठिनाई पड़ती है; जब कि गोदका बच्चा दूध पीता हो और गर्भ रह जावे, ऐसे समयका दूध हानि पहुंचाता है केवल गोदके ही बच्चोंको नहीं; गर्भके बालक

को भी हानि होती है गोद्के बच्चेको दूध दूपित होनेसे हानि होती है। गर्भके बच्चेको इस कारण हानि होती है कि गर्भमें उसका पालन गोद वाले बच्चेके दूध पीनेसे ठीक ठीक नही होता, क्योंकि भोजनके आहार से रस बनता है। वहरस दो बच्चोंके पालनेके काममें आता है। इसलिये दूध कीकमी और दूपित होनेसे गोदके बच्चेकों और गर्भ के बच्चे को पोषण सामग्री कम मिलनेसे हानि होती है। अतएव दोनों बच्चे निर्वल हो जाते हैं। इस कारण जैसे ही गर्भका संबन्ध मालूम हो, तुरन्त गोद्के बच्चेका दूध छुड़ा देना चाहिये। जब बच्चा माताका दूध विकार उत्पन्न होनेसे छोड़ देवे तो गाय भैंसका दूध बना कर पिलाना चाहिये। अन्दाजके साथ गाय भैंसके दूधमें गरम पानी इतना मिलाना चाहिये कि जिससे वह माताके दूधके बराबर अंशोंमे हो जावे। ऐसे दूधसे हानि न होगी, अन्यथा बच्चोंको अवश्य दुःख होगा। अतएव माताओंको विशेष ध्यान रखनेकी आवश्यकता है।

(६६) स्तनोंके रोग।

स्तनोंकी बनावट गोल होती है। यह गिलटियोंसे बना होता है। बचपनमें कन्या और पुत्रके स्तन एकसे रहतेहैं;परन्तु कुछ समयके बाद जैसे जैसे गिलटियां बढ़ती जाती हैं स्तन उभरते आते हैं। सबसे पहले जवानी की पहचान स्तनोंकाउभार है। जवानीमें स्तन कड़े होते हैं। चारों ओर लाली रहती है; परन्तु गर्माधान हो जानेपर श्यामता आने लगती है। किसी किसीके स्तन ही नही होते, किसीके तीन होते हैं, किसीके भिटनी ही नही होती, किसीके दो दो देखी जाती हैं। ईश्वरने सुन्दरताके लिये स्तन नहीं किन्तु बच्चोंको पालन करनेके लिये

दिये हैं, परन्तु इसका विचार न करते हुये स्त्रियां बिलकुल भूल गई स्तनोंकी रक्षा के लिये उनपर कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। जहांतक देखा जाता है स्त्रियोंकी असावधानीसे स्तनोंमें अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न हो जाते हैं, जिसके अनेक भेद हैं।

१ स्तनोंकी सूजन। इसके अनेक कारण हैं।

१ निर्बल स्तनोंमें सरदी गरमीके पहुँचनेसे।
२ पुरुषोंके कडे हाथ, सोते समयमें किसी प्रकारकी कठिन रगड और दूध-पीते बच्चोंके सरकी चोटसे।
३ बच्चोंके दांत या किसी प्रकारकी चोट लगनेसे।

ऐसी सूजनमें अनेक लक्षण प्रतीत होते है।

१. स्तनोंका लाल हो जाना।
२ दर्द, कभी कभी कठिन पीड़ा।

ऐसी सूजन दो तरहकी होती है। एक हलकी, दूसरी भारी। हलकी सूजन जब अच्छी नहीं होती तो वह भारी और पुरानी हो जाती है। जब बच्चेके दूध पीनेके पहले सूजन हो, तो सरदी गरमी तथा कड़े हाथके लगनेसे होती है। बच्चेके दूध पीनेके बाद और कारणोंसे समझना चाहिये। जब सूजन गहरी होती है तो मवाद पड़ जाती है वैद्यकका मत है कि वात-पित्त कफके अलग अलग या इनके मिले हुए दोषोंसे स्तनोंका मांस रक्त और शिराजाल दूषित होकर अनेक रोग उत्पन्न होते हैं।

(शा० क०)

२. स्तनोंका दर्द। इसके कई कारण हैं।

१. जब स्तनोंमें पसीना आ रहा हो तो सर्द वायुके लगनेसे
२ वातके प्रकोपसे।

३. किसी प्रकारका दबाव पहुँचनेसे जब कि नसें और गिलटियाँ दब जावें या पेंठ जावें।

ऐसे दर्दमें अनेक लक्षण होते हैं।

१. सूजनका न होना।

२. नसोंमें गाँठ पड़ जाना या मोटी हो जाना।

ऐसे दर्दमें मवाद नहीं पड़ती है और न रंगत बदलती है।

३ स्तनोका सूख जाना। इसके कई कारण हैं।

१. निर्बलता, दमा और कफके प्रकोपसे।

२. तपेदिक, शरीरमें रक्तके न बनने और विषम ज्वरसे।

३. रजस्वला होनेके पहले या होनेपर जब कि शरीर अत्यन्त निर्बल हो, पुरुषका संसर्ग होनेसे।

ऐसे रोगमें अनेक लक्षण होते हैं।

१. स्तनमें गिलटियोंका सूखना।

२. भिटनीका मुरझा जाना।

ऐसी दशामें दूध नहीं निकलता, स्तन सूखते चले आते हैं।

स्तानोंकी खुजली। इसके कई कारण हैं।

१. रक्त-विकार और छूतदार रोगोंसे।

२. दादका पानी या प्रसव समयमें बहते हुए खून या पानीके लग जानेसे।

३. रजके लगने या खुजलाते समय नाखूनके विकारोंसे।

एसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. छोटे छोटे दाने पोस्त सरीखे पड़ जाते हैं।

२. स्तनका रंग लाल हो जाता है।

जब ऐसा होता है। तो दाने फूट जाते हैं और जहाँ वह पनी लगता है वहाँ दूसरे दाने पड़ते जाते हैं। इसमें सफाईकी बड़ी ज़रूरत है।

५. स्तनोंका फावा। यह तीन तरहका होता है। (१) वह कि जो स्तनोंकी गिलटियोंमें हो। इसे स्तनका गहरा फोडा कहते हैं। (२) वह कि जो खालकी तहमें पीप पड़नेसे हो, इसको उथला फोडा कहते हैं। (३) वह कि जब स्तनके पट्ठोंके मध्यमें पीप पड जाय। इसको पट्ठेका गहरा फोडा कहते हैं। इनके कई कारण हैं।

१ वात-पित्त और कफके अलग अलग या सम्मिलित विगाडसे।

२. दवाव, चोट और रगडसे।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. स्तनोंका लाल पड जाना और कठिन दर्द।

२ ज्वरका बराबर रहना और जलन।

३. छूनेसे गरम प्रतीत होना।

प्रायःलोग इसको थनैली कहते हैं। यह जिस स्तनमें होती है उसको दूध नहीं रहता या कम पड़ जता है। नासूर होनेका भी भय रहता हे जब कि फोडा अपने आप फूटे।

६ स्तनोंका लाल पड जाना। इसके अनेक कारण हैं।

१. वात-पित्त और कफ़की अलग अलग या तीनोंकी मिली हुई खराबीसे।

२. आमाशय, जिगर, अण्डे, गुरदे और गर्भाशयके विकारसे।

३. गरमी, सूजाक और आतशकके प्रकोपसे।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. भिटनीके चारों ओर स्याहीमें छोटे छोटे दाने पड जाते हैं।

२ खाजका आना और चकत्ते से पड जाना।

जब ऐसे दाने पड़कर फूटते हैं तो जहाँ वह पानी लगता है वहाँ वैसे ही दाने पड़ जाते हैं।

७ स्तनोका वढना। इसके कई कारण हैं।

१. गर्भाशयके विकारसे।

२. ऐसे भोजनसे कि जिससे चरबी अधिक बनती है।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१ स्तनोंमे दूधका अधिक आना।

२. थोड़ी थड़ीसी सरसराहट मालूम होती है।

३. स्तनों का मोटा हो जाना।

जब ऐसा होता है तो स्तन बढ़ते चले जाते हैं, परन्तु यह रोग उसी समय होता है जब कि बच्चा पीता हो या गर्भ हो। ये इतने बढ़ जाते हैं कि स्वयं स्त्रिको दुःख होने लगता है। बलवान् स्त्रियोंमें अधिक पाया जाता है। प्रायःदेखा गया है कि स्तन इतने बढ़ जाते हैं कि पीठके पीछे बैठकर बगलसे लेजाकर बच्चे पीते है यह रोग रंडियोंमें प्रायःहोता है।

८. स्तनकी कठोरता—इसके कई कारण हैं।

१ जो माताएँ अपने बदन और स्तनोंको सुन्दर सुडौल बनाये रहनेके कारण दूध रहते हुए बच्चोंको नहीं पिलातीं उनकी छातियोंमें दूध सूखकर स्तन कठोर हो जाते हैं।

२. दूध न होना और स्तनका छोटा होना।

ऐसी दशामें कई लक्षण होने हैं।

१. स्तन कड़ा पड़ जाता है और दूध नहीं आता।

२. टटोलनेसे स्तनमें गिलटियाँ आपसमें जकड़ी सी मालूम होती हैं और भिटनी छोटी पड़ जाती है।

जब ऐसी दशा होती है तब दूध नहीआता। स्तन कडे बने रहते हैं और कुछ छोटे हो जाते हैं।

९. भिटनीका फोडा—इसके कई कारण हैं ।

१. चोट, रगड़ और दबाव पड़नेसे ।

२. वात-पित्त और कफ़के अलग अलग या सम्मिलित प्रकोपसे ।

३. रक्तविकार और गरमी सूजाक ऐसे छूतदार रोगों के होने से ।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं ।

१. भिटनीके नीचेकी काली जगह लाल पड जाती है ।

२. खाज और दर्दका होना ।

ऐसे फोडेको आपसे न फूटने देना चाहिये। चीर कर मवाद निकाल देना उत्तम है। आपसे फूटनेमें नासूर होनेका भय रहता है। ऐसी दशामें या तो दूध कम हो जाता है या बन्द हो जाता है।

१० भिटनीका घाव । इसके कई कारण हैं ।

१. उन बच्चोंके दाँत लगनेसे कि जिनको दाँतोंका रोग है।

२. गरमी सूजाक ऐसे छूतदार रोगों के होने या छूतसे ।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं ।

१. दूध पिलाने और छूनेमें कष्ट ।

२. स्तनोंपर कुछ लाली आ जाती है ।

इसमें बहुत बडी सफाईकी ज़रूरत है । दूध पिलाना हानि पहुँचाता है ।

११ स्तनोंके छाले । इसके कई कारण हैं ।

१. जब कि स्त्रीको गरमी सूजाक इत्यादि छूतदार रोगहो ।

२. ऐसे बालकके दाँत लगनेसे कि जिसके पिता को गरमी सूजाक और आतिशक हुआ हो ।

३. रक्तविकार से ।

ऐसी दशामें अनेक लक्षण होते हैं।

१. स्तनोंमें गरमी रोगकेसे चकत्ते पड़ जाते है।

२. दादकी तरह खाज आने लगती है।

३. छालोंसे पानी बराबर निकलता रहता है।

जब ऐसा होता है तो छाले बराबर फैलते चले जाते है। इसमे सफाईकी बड़ी जरूरत है।

इसी प्रकारके अनेक रोगोंमें आजकल स्त्रियाँ फँसकर अपना जीवन व्यतीत कर रही हैं। स्त्रियोंको असावधानताकी ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। (गा० क०)

(७०) बच्चोंको कैसे सुलाना चाहिये ?

हमारे देशमें यह बात सब जगह पाई जाती है कि माताएँ बच्चोंको अपने साथ सुलाती हैं; परन्तु प्रकृतिके नियमानुसार जरूरत मालूम होती है कि बच्चा अलग सुलाया जाय। एक साथ सोनेमें माताएँ बड़ी असावधानी करती हैं। स्त्रियाँ नींदमें ग्रसित होकर बेहोश सोती हैं। कई जगह ऐसा हुआ है कि जवान और मोटी माताओंका हाथ बच्चेके मुँह और नाकपर पड़ा रहा, श्वाँस बन्द हो गया। बच्चा चल बसा। बच्चेके हाथ पाँवका दब जाना, पलंगसे नीचे गिर पड़ना, यह तो रोज का काम है। इसलिये माताके पलंगके पास बच्चेके लिये एक घेरेदार पलंग होना चाहिये कि जिससे वह अकेले सोनेमें नीचे न गिरे। माताके पास सोनेसे बच्चेको अनेक रोग हो जाते हैं।

१. कुपच।

१. पास सोनेसे बच्चा बार बार दूध पीता है और अधिक पी जानेसे नहीं पचा सकता, अतएव कुपच हो जाती है।

२. कानके रोग।

१. जो माताएँ सोते हुए बच्चेको दूध पिलाती हैं उन बच्चों-में दूध कानमें आ जाता है इससे अनेक रोग हो जाते हैं। (श० क०)

१ बहरापन २ कानका बहना ३ कानका नासूर ४ परदेका मोटा पड जाना ५, परदेकी सूजन इत्यादि।

३. शरीरमें गरमीका परिवर्तन।

१. माताके पास सोनेसे बच्चेमें माताके शरीरकी गरमी-का प्रवेश हो जाता है। जो गरमी बच्चोंमें होती है उससे अधिक पहुँचनेमें हानि है। जब कभी माताको ज्वर आता है तो वह बच्चेको अलग नहीं सुलाती। पास सोने और ज्वरका दूध पीनेसे बच्चेको भी ज्वर आ जाता है।

४. श्वाँस-रोग।

१. पास सोनेवाले बच्चोंमें माताके स्वाँस रोगका संचार हो जाता है। इस कारण कि माताके पेटसे निकली हुई श्वाँस बच्चेकी श्वाँसके साथ मिल कर अन्दर पहुँचती है और वहाँ फेफड़ोंको खराब कर देती है। यह दशा उस समय होती है जब कि माता और बच्चा दोनों मुँह बन्द करके जाडेमें एक लिहाफके अन्दर सोते हैं।

अतएव बच्चोंको ऐसी बान डालनी चाहिये कि जिससे वे रातमें खूब सोवें। दिनमें इतना न सुलाना चाहिये कि रातमें खूब जागें। यदि इनको रातमें नींद न आवे तो दो बातें समझनी चाहिये-भूख और कुपच। इस प्रकार अलग न सोनेसे बच्चे

प्रायः रोगी रहते हैं। माताओंको इन बातोंपर ध्यान देना जरूरी है।

(७१) बच्चा होनेके कितने दिन बाद गर्भधारण होना चाहिये ?

यह एक बड़ा प्रश्न है। लोग इसपर बहुत कम ध्यान देते हैं। लोगोंमें इस बातकी विवेचना ही नहीं कि संयोग बच्चा होनेके कितने दिनों बाद होना चाहिये ? इससे तो यह बात कहीं दूर है। लोग यह विचार करते हैं कि जितने बच्चे हों उतना ही अच्छा; परन्तु जल्दी जल्दी सन्तान होना अच्छा नहीं। इस विषयमें अनेक मत हैं।

१. वैद्यकका मत।

१. जब बच्चेको मातासे कुछ भी वास्ता न रहे, वह अच्छी तरह अन्न खाकर जी सके, इसके बाद दूसरी सन्तान होनी चाहिये। (शा० क०)

२. बच्चा होनेके पाँच वर्ष बाद दूसरी सन्तान होनी चाहिये। (रतिशास्त्र)

२. धर्म्मशास्त्रका मत।

१. बच्चा तीन वर्षका पूरा होनेके बाद दूसरा गर्भाधान होनी चाहिये। (म्रा० ध०)

लोग कामवश होकर जल्दी संयोग कर बैठते हैं और इसी कारण बच्चा पैदा होनेके कुछ ही दिनों बाद गर्भ रह जाता है। इसमें अनेक दोष हैं। स्त्रीके अवयवमें बिगाड़ हो जाता है। गोदका बच्चा दूध उत्तम और ठीक तौरसे नहीं पीने पाता। बच्चा जिस समयतक दूध पीता है उस समयतक माताके

शरीरका पोषण कम होता है क्योंकि जो कुछ माता
उसके रससे बच्चेका भी पोषण होता है। यदि दो साल च
दूध पीवे तो इसके बाद माता जो कुछ भोजन करती है उसवे
पूरे रससे माताका पोषण होता है। एक विद्वानकी राय है वि
जिस समयसे बच्चा दूध पीना छोड़ता है उससे एक साल
तक यदि स्त्रीको गर्भ न रहे और उत्तम आहार मिला करे तो
स्त्रीका शरीर गर्भ धारण होनेके पहलेका सा पुष्ट हो जावेग
और पेटके सारे अवयव, यदि उनमें कोई विकार उत्पन्न नहीं
हुआ है तो, उत्तम हो जावेंगे। इन बातोंपर विचार करते हुए
यह बात निश्चय होती है कि दो वर्षतक दूध पिलाकर इसके
एक साल बाद अर्थात् बच्चा पैदा होनेसे तीन वर्ष बाद गर्भा-
धान होना चाहिये।